विषयानुक्रमणिका

क्रं.	अध्याय	पृष्ठ क्रं
	प्रस्तावना	–
1.	अविस्मरणीय	1–4
2.	महायात्रा का पुर्नारंभ।	5–12
3.	गुरू परिवार विस्तार एवं दुर्ग से मुंगेली आश्रम तक की जीवन यात्रा।	13–41
	अ. सामूहिक गुरू पूजा का श्रीगणेश	19
	ब. पूज्य गुरूजी की जीवनी	22
4.	ऋतम्भरा–प्रज्ञावान पूज्य गुरूजी	42–45
5.	पूज्य गूरूजी द्वारा निर्देशित नादयोग एवं अन्य साधनायें	46–55
6.	वर्धा आश्रम	56–57
7.	गुरू जी से सम्पर्क और कुछ यादें–वाहन व्यवस्था	58–65
8.	पूज्य गुरूजी का स्वास्थ्य और 90 से 97 के बीच कार द्वारा अविस्मरणीय यात्रायें	66–94
9.	शहडोल आश्रम	95–98
10.	भोपाल सशरीर अंतिम गुरूपूजा	99–115
	अ. सद्गुरू की आरती–एक अमरत्व कृति	101
	ब. भोपाल गुरू पर्व पर स्तुति वन्दन	113
	स. गुरू नगरी महिमा	115

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2

11.	आध्यात्मिक गूढ़ रहस्यों का समाधान	116–165
	अ. श्री कुपटकरजी एवं अन्य शिष्यों की जिज्ञासाओं का समाधान	116
	ब. श्री गुरू प्रसाद जी द्वारा किये गये प्रश्नों का समाधान	122
	स. रोचक आध्यात्मिक रहस्योद्घाटन	125
	द. श्री लूनिया जी द्वारा किये गये प्रश्नों का समाधान	126
12.	महाप्रयाण	166–182
13.	दिव्य संदेशों का सिंहावलोकन	183–200
14.	गुरू दक्षिणा के रूप में आत्मसात करने योग्य सूत्र	201–204
15.	संबंध बना रहे.... गुरूजी पत्रों में	205–210
16.	असीम को सीमा देना–शिष्यों का अधूरा प्रयास	211–299
17.	वेदांत और व्यवहार–गुरू कृपा के अनुपम उदाहरण	300–317
18.	पूज्य गुरूजी का लौकिक व्यवहार	318–323
19.	आत्मोत्थान न्यास की स्थापना	324–335
20.	जन्म–मरण के भय से मुक्ति–सदगुरू आदेश	336–339
21.	छायाचित्र	340

प्रस्तावना

मूल पुस्तक ''दिव्याम्बु निमज्जन'' में सतगुरू पंडित वासुदेव रामेश्वर जी के दिव्य जन्म से लेकर आत्मोत्थान के उनके चर्मोत्कर्ष की यात्रा दी गई थी। पूज्य गुरूजी द्वारा अधिकाधिक सरल विधि से बतायी गयी योग पद्धति तथा उसके दर्शन का भी वर्णन है। पुस्तक के अंतिम भाग में अनेकों शिष्यों की भौतिक एवं आध्यात्मिक अनुभूतियां दी गई हैं। यहां उल्लेख करना उचित होगा कि मूल पुस्तक की पूरी विषय वस्तु का अनुमोदन पूज्य गुरूजी द्वारा स्वयं किया गया था और इसलिए उससे बेहतर कुछ भी नहीं लिखा जा सकता है।

गुरूजी ने एक प्रवचन में कहा था ''ये सब गुरूजी का कारोबार है। सारा संसार गुरूजी का है। हम तो उनके आदेश का पालन करते हैं''। सम्भवतः इसी भावना के अधीन लगभग पिछले 13 वर्षों से यह प्रयास चल रहा था कि दिव्याम्बु निमज्जन में जिस समयावधि तक की घटनाओं का विवरण दिया गया है, उसके बाद की गुरूजी की जीवन यात्रा और अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं को संकलित कर दिव्याम्बु निमज्जन भाग–2 का प्रकाशन किया जावे। इस हेतु शुरूआती वर्षों में गुरू भाइयों/बहिनों से पत्र लिखकर तथा 'उद्‌बोधन' के माध्यम से आवश्यक जानकारियों को एकत्र करने का प्रयास किया गया था। गुरू पर्वों के अवसरों पर भी अनेक बार परिवारजनों से इस विषय पर आग्रह किया गया था। वर्ष 2011 तक कोई प्रगति नहीं हो पाई पर इसी वर्ष के गुरू पर्व में निश्चय ही गुरूजी की प्रेरणा से श्री जे. के. जैन ने मन्दिर प्रांगण में यह संकल्प व्यक्त किया कि वे यह कार्य अवश्य करेंगे। गुरूजी के आशीर्वाद से यह संकल्प पूरा होने का समय आ गया और दिव्याम्बु निमज्जन भाग–2 आपके समक्ष प्रस्तुत है।

पूज्य गुरूजी ने जब डॉक्टर कुरियन को विभिन्न घटनाओं आदि के बारे में बताया होगा जिनका उल्लेख मूल पुस्तक में है, तब उनकी दिव्यता अपने आप लेखन सहित अन्य कार्यों को सरल एवं सुगम कर देती होगी। परन्तु हम लोगों के पास अपनी अल्पज्ञ बुद्धि के अलावा मूलतः गुरूजी द्वारा प्रदत्त सूझबूझ ही यथा समय सूक्ष्म रूप से आशीर्वाद के रूप में प्राप्त होती गई। गुरूजी द्वारा दी गई इसी सूझबूझ से श्री जे. के. जैन ने लगभग डेढ़ वर्ष तक अधिक से अधिक परिवारजनों से सम्पर्क किया तथा पूज्यवर के प्रवासों, यात्राओं, अनुभव और संस्मरणों को भेजने का आग्रह किया। समस्त उपलब्ध पत्र, पत्रिकाओं, प्रवचनों का अध्ययन इस पुस्तक में दिये गये अध्यायों की विषय वस्तु बनने में सहायक बनी। गुरूजी की सशरीर अनुपस्थिति और कार्य की जटिलता, सत्य का प्रकाशन और जीवन यात्रा का सजीव चित्रण समस्त परिवारजनों की शुभकामनाओं और करूणा सागर पूज्य गुरूजी के आशीष से ही यह कार्य सम्भव हो सका है।

पुस्तक में 1983 के बाद की (एवं इससे पूर्व की कुछ जानकारियां जो मूल पुस्तक में नहीं हैं) गुरूजी की जीवन यात्रा, उनका स्वास्थ्य, मन्दिर और आश्रमों, आरती का इतिहास, महाप्रयाण, न्यास की स्थापना, शिष्यों के अनुभवों का उल्लेख किया गया है। यह सम्भव है कि परिवारजनों द्वारा भेजे गये लेख यथावत पुस्तक में न लिये गये हों या उनकी भाषा किंचित बदल दी गई हो। यह भी सम्भव है कि कुछ घटनाओं का उल्लेख न आया हो। परन्तु यथा सम्भव हमने अधिक से अधिक तथ्यात्मक एवं सुसंगत विवरण देने का प्रयास किया है। फिरभी यदि इस पुस्तक में कुछ भी अप्रिय या दोषपूर्ण हो तो वह त्रुटियां हमारी हैं।

पूज्य गुरूजी बड़ी प्रसन्नता एवं गर्व के साथ कहते थे कि यह मेरा गुरू परिवार है। मैं शिष्य नहीं बनाता बल्कि आप सबको अपने जैसा बनाना चाहता हूं। आज हमें आकलन और विश्लेषण करना जरूरी हो गया है कि साधना पथ पर चलते हुए एक परिवार के रूप में गुरूजी की इच्छानुसार हम कितने सफल हुए हैं। गुरूजी के शरीर छोड़ने के बाद शुरूआती वर्षों में किंकर्तव्य विमूढ़ और दिशाहीनता जैसी स्थिति रही और परिवार बिखरता सा प्रतीत हुआ परन्तु सदगुरू जी की कृपा से ''न्यास'' के रूप में गुरू परिवार को एक सुदृढ़ पहचान मिली जिसे पूरे परिवार की सहायता से आर्थिक और भौतिक रूप से सुदृढ़ किया जा सका है।

इस बीच अनेक वरिष्ठ परिवारजन यथा श्री डॉ. व्ही. ए. शिन्दे, श्री एवं श्रीमती बी. एस. भटजीवाले, डॉ. श्रीमती ओमबाला शिन्दे, श्री लक्ष्मी प्रसाद जी मिश्र, श्री वी. वी. तकवाले, श्री मनोहर तेजवानी, श्री जितेन्द्र दीवान, श्री योगेश ठाकुर, श्री ए. के. कुरियन, द. य. पतकी, श्री प्रकाश चन्द पारिख, श्री प्रमोद मिश्रा, श्री अरूण कुमार दीवान, श्री बंडोपंत देशपांडे, श्री बालासाहेब देशपांडे आदि ने शरीर छोड़ दिया और हमें विश्वास है कि हमारे सभी गुरू भाई पूज्य गुरूजी के आशीष से प्रकाश की राह पर अग्रसर हुए होंगे।

गुरूजी के आशीष और संकल्प को सत्य करना हमारा दायित्व है। हम पूर्ण समर्पण और श्रद्धा के साथ उसी प्रकार साधना करें जैसा हमें आदेशित किया गया है। अपनी समस्याओं, कठिनाईयों और कष्टों के कारण कई बार हमारे समर्पण और विश्वास में कमी आती प्रतीत होती है जो हमें काल्पनिक समाधान के रास्ते पर डाल देती है। इससे न केवल हमारी आध्यात्मिक प्रगति बाधित होती है बल्कि समस्याओं का समाधान

तो दूर रहा, हम विभिन्न प्रकार के भ्रमों में पड़कर अपनी उर्जा समय और धन राशि भी व्यर्थ गंवाते हैं।

सभी शिष्यों का यह संकल्प सदा बना रहे यह प्रार्थना भी हम आज गुरू चरणों में करना अपना कर्तव्य समझते हैं। इसी संकल्प ने इस परिसर को जो भव्य रूप दिया है हम उसके रख रखाव और सुदृढ़व्यवस्था के लिये सदा सचेत और अपना उत्तरदायित्व मानते रहे यही हमारी अपने गुरू के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

यदि दिव्याम्बु निमज्जन भाग–2 को किंचित भी पूज्य गुरूजी की दिव्य जीवन गाथा और उनके आदेशों को इंगित करने में सार्थक है तो यह सबके लिये गुरूजी का आशीष एवं पर्याप्त पुरस्कार होगा। पुस्तक सत्य के खोजियों को पूज्य गुरूजी के **''स्नेहिल आशीष''** के साथ समर्पित है।

गुरू चरणों का अनुरागी
देवेन्द्र सिंह राय

पूज्य सद्गुरू के मानव शरीर में आने के बाद चरमोत्कर्ष तक की यात्रा दिव्याम्बु निमंज्जन में सुरक्षित है। इसके आगे सत्य की खोज के यात्री इस युग के एकमात्र योगी का अंतिम लक्ष्य अर्थात् आत्म–साक्षात्कार, जो उन्होंने सांसारिक प्रपंचों के बीच विषम परिस्थितियों में पाया और उसे अपनों में सरलता से बांटने के लिये अपना जीवन दिया, उसे लिपिबद्ध कर भविष्य के लिए सुरक्षित करना पूरे शिष्य परिवार का दायित्व था, जिसका स्मरण विशेष तौर पर गुरु भाई डी.एस. राय सदैव कराते रहे हैं। पूज्य गुरूजी की मौन स्वीकृति मानते हुए यह पुस्तक ''दिव्याम्बु निमंज्जन'' (भाग दो) के रूप में प्रस्तुत है।

2008 में श्री राय ने अपनी बात कहते हुए स्पष्ट किया था कि 100 वर्ष पूर्व पूज्य गुरूजी ने मानव शरीर धारण किया था और यदि ऐसा न होता तो हम सब पता नहीं किस भ्रम में पड़े होते और शायद दिशाहीन असंख्य मानवों की तरह हम भी अपना जीवन खाते पीते सोते–जागते, काम करते, बिना किसी लक्ष्य के पूरा करते। परन्तु कृपा निधान पूज्य गुरूजी के आशीर्वाद से और संभवतः पिछले जन्मों के किन्हीं पुण्यों के कारण हमें इस जन्म में उनका सान्निध्य मिला, दिशा मिली, आध्यात्मिक दीक्षा मिली और लक्ष्य प्राप्ति का साधन भी मिला।

समस्त गुरू परिवार में ऐसा कोई नहीं है जो पूज्य गुरूजी की कृपा का पात्र न रहा हो। संकट और विपत्ति में जब जिसने पूज्य गुरूजी को याद किया उसे तुरंत सहायता मिली और संकट निवारण हुआ है। ऐसे भी अनेकों प्रसंग हैं जब शिष्यों द्वारा बिना याद किये भी पूज्य गुरूजी ने उन्हें संकटों से उबारा है। ऐसे अनेक उल्लेख इस जीवन गाथा में भी किये गये हैं।

एक बार पूज्य गुरूजी ने कहा था कि संत का ह्रदय नवनीत के समान होता है। अतः वे न बेदर्दी हैं, न ही कठोर हैं, और आगे कहा कि मैं देना जानता हूं, लेना नहीं जानता, मांगना नहीं जानता हूं। हम कुछ देने के लिये पैदा हुए हैं। हम देने के लिये जग में आये हैं, यहां मांगने के लिये नहीं आये हैं।

फकीरी में भी मुझको मांगने में शर्म आती है।
सवाली होके मुझसे हाथ फैलाया नहीं जाता।।

अपने इस अवतरण को सार्थक बनाने के लिये गुरूजी स्वयं अपने शिष्यों के घर जाकर अपनी कृपा का प्रसाद देते थे। मांगा कभी किसी से कुछ भी नहीं। क्या यह सच नहीं है? धन्य है उनकी कृपा, विराट है उनकी सोच, अपार है उनकी दया, असीम है उनका प्यार जो पूरे जीवन भर चलकर शिष्यों को जगाने स्वयं पहुंच जाते थे। कई बार बिना बताये भी पहुंचे हैं और कहा भक्त के घर भगवान आये हैं। सच है भगवान को भी भक्त की प्यास सताती है।

उन महान योगी की करूणा को शब्दों में बांधना कठिन है। अपने शिष्य परिवार के प्रति उनकी ममता, उनका वात्सल्य, उनका प्रेम किस किस रूप में हमने देखा है, यह भविष्य के लिये अविस्मरणीय अनमोल धरोहर के रूप में विद्यमान है। शिष्यों को लक्ष्य पूर्ति के योग्य बनाने में उनकी विभिन्न यातनाओं को अपने में समेटना कोई मामूली या विस्मृत कर देने वाली बात नहीं है। गुरूजी ने शिष्यों की पीड़ा, चाहे वह लाइलाज कैंसर के रूप में हो या टी.बी. या प्लुरिसी या मिर्गी अथवा सोरायसिस जैसा मर्ज हो, अपने में समेटी ताकि उनका प्रिय शिष्य निरोगी काया के

साथ दिव्य लोक की तरफ अपने कदम बढ़ा सके। हम उनके इस महान त्याग और प्यार को जो उनके मन में अपने शिष्य परिवार के लिये रहा है–नतमस्तक होकर याद करते हैं।

सत्य की खोज में अपना पूरा जीवन विषम परिस्थितियों में जिया है पूज्य गुरूजी ने, और इस खोज में उन्होंने पाया कि इस संसार में झूठ बोलना तो बाल घुटी है, उसके बिना न सांस छोड़ते हैं और न सांस लेते हैं। प्रत्येक सांस में झूठ है। उन्होंने यह भी पाया कि ये दुनिया है जिसमें संशय रहित कोई भी नहीं है। सारे जग में कोई भी संशय रहित उन्हें नहीं मिला और उन्होंने अपने शिष्य परिवार को यह सीख देते हुए आदेश दिया कि संशय रहित होकर सत्य के पुजारी अपने गुरू के आदेश को मानकर दिव्य लोक की तरफ बताये गये रास्ते पर चलकर अपना कल्याण करो।

प्रायः पहुंचे हुए मनीषियों ने अपने उत्तराधिकारी की घोषणा अपने जीवनकाल में की है, ऐसा इतिहास से पता चलता है, परन्तु यह पहला विरला गुरू परिवार है जिसमें सद्‌गुरू ने अपने उत्तराधिकारी की घोषणा स्वतंत्र रूप से नहीं की। कारण बहुत स्पष्ट है क्योंकि घोषणा करके व्यक्ति बन्धन में बंध जाता है और मुक्ति के पूर्व बन्धन मुक्त होना आवश्यक है। इसी कारण गुरूजी कहा करते थे अब और आगे मां के पेट में नहीं आना है। उत्तराधिकारी का चुनाव प्रकृति स्वयं कर लेती है और रिक्त स्थान भर देती है। गुरूजी के ही शब्दों में उच्चतम महत्वपूर्ण स्थान उच्चतम व्यक्ति के लिये सदा रिक्त रहता है।

इस पुस्तक को सजाने और संवारने में श्री नर्मदा प्रसाद शर्मा जी ने जो सहयोग दिया, हम उनके आभारी हैं। गुरू परिवार के सहयोग और विशेष रूप से प्रेरक रहे श्री डी.एस. राय, श्री राजू काण्णव, श्री संतोष शुक्ला, श्री आनन्द मिश्रा, श्रीमती मणि जैन एवं श्री राजेन्द्र जैन ने परम पूज्य गुरूजी की सेवा में पुष्पार्पित किये हैं।

अंत में हमारा रोम–रोम उस कृपा–निधान के उस स्नेह का ऋणी है जो हमें उन्होंने दिया है, जिसे शब्दों में समेटना असंभव होगा–जो अवर्णनीय है–जो अनन्त है–जो अकथनीय है। इस विशाल और विराट कार्य को करने में जो सूझ–बूझ मिली और सूक्ष्म–रूप से जैसे हाथ पकड़कर आगे की पंक्तियां लिखने में पूज्य गुरूजी की जो सहायता हुई है, वह मात्र अव्यक्त एवं अनुभव की बात बनकर रह गई है।

–चरणों का दास आपका वाहन चालक
–जे. के. जैन।

हम नीचे अत्यंत संक्षेप में मूल पुस्तक ''दिव्याम्बु निमज्जन'' का सारांश दे रहे हैं (श्रद्धेय गुरूजी के शब्दों में ''आकाश में कई लक्ष तारे हैं किन्तु रात्रि के अंधकार को दूर कर, पृथ्वी को प्रकाशवान केवल चन्द्रमा ही करता है), ताकि नये पाठकों को, जो मूल ग्रंथ नहीं पढ़ पाये, उन्हें गुरूजी की विशालता को समझने में कोई कठिनाई न हो।

पूज्य गुरूजी वासुदेव रामेश्वर जी तिवारी का जन्म 23 जुलाई 1908 को जार्ज टाउन ब्रिटिश गुआईना में सत्य की अमिट प्यास लिये हुआ था। दिव्य बालक वासुदेव को 3 वर्ष की अल्प आयु में देव पूजा मंत्र, हवन मंत्र, सत्यनारायण कथा, चाणक्य नीति के श्लोकों का कंठस्थ होना, 5 वर्ष की आयु में दिव्य आत्माओं के दर्शन होना उनके पूर्व जन्मों की दिव्यता प्रदर्शित करती है। महाकाव्यों में वर्णित संतों की पवित्र भूमि ''भारत'' की यात्रा की उत्कट पिपासा उनके हृदय में बस चुकी थी। उन्होंने आध्यात्म की गहराईयों से आकर्षित होकर आत्म साक्षात्कार तथा सत्य की खोज के लिये अपने पिताजी को भारत की पवित्र भूमि पर ले जाने को विवश कर दिया। ग्यारह वर्ष की आयु में वे अपने पिता के साथ भारत वर्ष आए क्योंकि इतनी कम आयु में भी उन्हें होने वाले विलक्षण आध्यात्मिक अनुभवों को देखते हुए उनके पिताजी के परिचितों ने उन्हें भारत ले जाने की सलाह दी थी, ताकि बालक वासुदेव को उचित सहायता व मार्गदर्शन प्राप्त हो सके।

भारत में प्रवेश होते ही कलकत्ता में महाकाली ने साक्षात दर्शन देकर इस महायोगी का स्वागत किया था। प्रयाग के संगम में स्नान के उपरांत भी गुरूजी को न तो पवित्रता का अनुभव हुआ था और न ही आनंद का। उन्होंने अत्यंत कठिन बचपन बिताया जिसमें खेतों में काम

करने तथा पशुओं की रखवाली करना शामिल था। गुरूजी को बलपूर्वक विवाह के बंधन में बांध दिया गया। इन्द्रासा से उनका विवाह हुआ, परन्तु उसके तुरन्त बाद गुरूजी ने ईश्वर की खोज के लिये घर त्याग दिया।

छत्तीसगढ़ के पेण्ड्रा रोड, पसान दानपुर (महाराष्ट्र) भुसावल, भरूच, सूरत, आनंद, गोधरा, गाठीयाबाद आदि क्षेत्रों का भ्रमण पूज्य गुरूजी ने किया। यहां तक कि उन्होंने रामलीला मण्डली में भी काम किया। इस बीच उन्हें विभिन्न दिव्य अनुभव होते रहे। बिना किसी साधन के भ्रमण करते हुए भी गुरूजी को कोई गंभीर समस्या नहीं हुई, क्योंकि ईश्वर अपने भक्त को कभी निराश नहीं करते। अकोला पहुंचकर गुरूजी डॉ0 नन्दलाल भारती आयुर्वेदाचार्य के सम्पर्क में आये और उनसे आयुर्वेदिक चिकित्सा का ज्ञान प्राप्त किया। नांदेड़ और हुमनाबाद के भ्रमण के पश्चात उन्हें अजमेर के ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती के भी दिव्य दर्शन हुए। ख्वाजा साहब ने गुरूजी की परीक्षा ली और उनके आगे सोने की अशर्फियों का ढेर लगाते गये और उन्हें लेने के लिये जब कहा गया तो गुरूजी ने बड़ी दृढ़ता से कहा था "I am not a beggar"।

रामलीला मण्डली के साथ गुरूजी ने सिकंदराबाद और औरंगाबाद का भी भ्रमण किया। औरंगाबाद में स्वयं दुर्गा देवी ने उन्हें दर्शन दिया और आशीर्वाद दिया कि ''अब से तुम कभी भोजन के अभाव से पीड़ित नहीं होगे''। तुम्हारी आवश्यकता बिना याचना किए ही पूर्ण होगी। यह भी उन्हें स्पष्ट हुआ कि उच्च और उत्कट आध्यात्मिक विचारों के रहने पर भी भौतिक आवश्यकतायें अपरिहार्य हैं। शरीर को नष्ट करके आत्मा की रक्षा नहीं की जा सकती क्योंकि शरीर ही आत्मा का घर है और इसी शरीर में रहते हुए ही आत्म साक्षात्कार संभव है। इसलिए शरीर का पोषण भी महत्वपूर्ण है।

इस बीच भ्रमण करते करते गुरूजी संगीत में भी परायण हो गए तथा रामायण एवं भागवत के कुशल वाचक के रूप में और भी विख्यात हो गए। उनके द्वारा गाए जाने वाला रामायण या भागवत का पाठ या प्रवचन लोगों को बहुत आकर्षित करता था क्योंकि जब वे इन ग्रंथों की व्याख्या करते थे तो शब्द उनके स्वयं के अनुभवों से परिपूर्ण थे तथा हृदय की गहराईयों से निकलते थे। यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि गुरूजी ने बहुत उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं की थी और संगीत आयुर्वेद, संस्कृत या धार्मिक ग्रंथों से संबंधित उनका ज्ञान स्वयं अर्जित था।

औरंगाबाद में उन्हें एक दिव्य पुरूष, पेश इमाम के दर्शन हुए जिन्होंने उन्हें आध्यात्मिक मार्गदर्शन दिया। औरंगाबाद में पुनः उन्हें दिव्य भगवती ने दर्शन दिया। तथा पैठण में संत एकनाथ महाराज के भी दर्शन हुए। इस बीच दो माह के लिये वे अपने पूर्वजों के गांव कालूपुर (इलाहाबाद) पहुंचे तथा गृहस्थ जीवन व्यतीत किया।

पुनः घर छोड़कर वे अयोध्या पहुंचे तथा उन्होंने गहन साधना की। उन्हें स्वामी श्री रामप्रपन्नाचार्य अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे, परन्तु गुरूजी ने स्वीकृति नहीं दी। अकोला पहुंचकर डॉ. भारती के साथ होम्योपैथिक चिकित्सक के रूप में कार्य करने लगे।

यद्यपि गुरूजी को धनोपार्जन कर परिवार का पालन करने में कोई रूचि नहीं थी, परन्तु गृहस्थ धर्म का वहन तो करना ही था और साथ ही बच्चों का लालन–पालन भी करना था। उनके पास पैसे बिलकुल नहीं थे। इन परिस्थितियों में वे घोर निराशा में जकड़ गए और उन्होंने रेचक–कुम्भक विधि का प्रयोग करने का निश्चय किया और उन्हें पुनः एक बार दिव्य ज्योतिर्मय चकाचौंध करने वाले प्रकाश का दर्शन और मृत्यु का आभास हुआ। यह वास्तविक त्रिवेणी संगम था, जिससे उन्हें दिव्य

शांति का अनुभव हुआ और समस्त चिंतायें और मनोविकार नष्ट हो गये। यह घटना वर्ष 1939 की है।

तत्पश्चात गुरूजी ने अकोला जिले के तेल्हारा में अपना औषधालय खोला और परिवार के साथ लगभग 20 वर्ष तक वहां रहे। यहां उन्होंने नागरिकों की निःस्वार्थ सेवा की और बदले में उन्हें अत्यधिक प्रेम व आदर प्राप्त हुआ। आध्यात्मिक और अन्य संबंधित विषयों पर गोष्ठियां होने लगी और गुरूजी के दिव्य ज्ञान का लाभ तेल्हारा वासियों ने प्राप्त किया। गुरूजी के परम शिष्य डॉ. बाबू भिड़े यहां दीक्षित हुए। यहां गुरूजी को भगवान विठ्ठल के दर्शन हुए। गुरूजी के आत्मीय श्री मजहर खां को गुरूजी ने पवित्र कुरान की आयतों का गूढ़ार्थ भी स्पष्ट किया क्योंकि गुरूजी को कुरान की आयतों और उसके गूढ़ार्थों का प्रत्यक्ष दर्शन होता था।

यहां से गुरूजी ने वृन्दावन की यात्रा की, जहां उन्हें राधा जी के साक्षात दर्शन हुए। तेल्हारा में गुरूजी ने शास्त्रीय संगीत और ज्योतिष शिक्षा का भी अध्ययन किया जिससे लोग उनसे लाभान्वित हुए।

वर्ष 1960 में गुरूजी ने तेल्हारा छोड़कर दुर्ग आने का निश्चय किया, जहां उन्होंने संगीत शिक्षक के रूप में कार्य प्रारंभ किया। गुरूजी ने स्वयं का संगीत विद्यालय प्रारंभ किया। भविष्य में उनके शिष्य बनने वाले बहुत से व्यक्ति संगीत शिक्षण के दौरान उनके सम्पर्क में किसी दिव्य संयोग से आये। इस बीच वे योग के विभिन्न मार्गों में निरंतर प्रयोग कर उन पर अधिकार प्राप्त कर रहे थे और साथ ही आध्यात्मिक जिज्ञासुओं का मार्गदर्शन भी करते थे। वे सदैव परमानन्द में डूबे रहते थे। जिस प्रकार ''कमल जल में रहकर भी जल से अछूता रहता है'', उसी प्रकार गुरूजी भी सांसारिक प्रपंचों से घिरे होकर भी उनसे अलिप्त थे। उन्हें कई प्रकार से समाधि की दिव्य अवस्था प्राप्त हुई, जो कई बार तीन

तीन दिन तक बनी रहती। अब गुरूजी के बच्चे बड़े होकर स्वयं की व्यवस्थाओं में लग चुके थे। इसलिए गुरूजी ने घर छोड़कर विभिन्न स्थानों का भ्रमण प्रारंभ किया।

बिलासपुर भ्रमण के दौरान साधना करते करते कई बार उन्हें परमानन्द की प्राप्ति हुई तथा वे 7 दिनों तक समाधि में रहे। शहडोल में भी 15 दिनों तक उनकी समाधि बनी रही। धीरे धीरे बिलासपुर में गुरूजी से दीक्षितों की संख्या बढ़ने लगी। इन सभी शिष्यों को और उनके परिवारों को गुरूजी से न केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्राप्त हुआ बल्कि विभिन्न प्रकारों के भौतिक लाभ भी प्राप्त हुए। धीरे धीरे रायपुर, वर्धा, नागपुर, अमरावती में भी गुरूजी का शिष्य परिवार बढ़ने लगा।

गुरूजी के अनुसार किसी मनुष्य की जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है–''स्वयं के स्वरूप का ज्ञान होना।'' अपनी साधना के दौरान कुछ सिद्धियां प्राप्त हो सकती हैं, परन्तु ये सिद्धियां अवरोध या प्रलोभन न बने क्योंकि ये साधक का ध्यान साधना से मोड़ने के लिए ही उपस्थित होती हैं।

गुरूजी के शिष्य–हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, जैन सभी धर्मों के लोग हैं। उनका दर्शन सभी धर्म ग्रंथों जैसे–वेद, कुरान, वेदान्त, उपनिषद, श्रीमद्भागवत, गीता, बाईबल आदि का सार है। उनके अनुसार सभी धर्म एक ही सत्य की शिक्षा देते हैं कि मनुष्य ईश्वर के पास से आया है और उसे अपने जीवनकाल में ईश्वर का ध्यान करने तथा उस तक पहुंचने का प्रयास करना चाहिए। यह आत्म–बोध द्वारा ही संभव है।

गुरूजी के जीवन का उद्देश्य अर्थात् आत्मबोध के माध्यम से परब्रह्म और ज्ञान की प्राप्ति पहले ही पूर्ण हो चुकी थी। इस ज्ञान द्वारा उन्होंने संतोष और पूर्णता प्राप्त कर ली थी। वे सदैव प्रकाश के अवर्णनीय

सागर में डूबे हुए परमसंतोषी व निर्लिप्त रहते थे, उन्हें न किसी वस्तु की इच्छा थी और न ही आवश्यकता। सांसारिकता या भौतिकता के लिए वे कभी किसी वस्तु की मांग नहीं करते थे। शिष्य ही उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। गुरूजी स्वयं दक्ष चिकित्सक ज्योतिषी एवं संगीत शिक्षक थे।

गुरूजी ने अपना भौतिक जीवन आध्यात्मिक आकांक्षियों की सहायता और मार्गदर्शन के लिए समर्पित कर दिया। अपनी तपस्या के फल को उन्होंने शिष्यों में वितरित किया। यदि उनका संदेश शिष्यों को एक ही वाक्य में कहा जाये तो यह होगा– Be still and know that I am आत्मबोध की अवस्था तक पहुंचने के लिए सम्पूर्ण शक्ति से कठोर परिश्रम के साथ साथ सर्वशक्तिमान श्री सतगुरू की कृपा और आशीर्वाद की आवश्यकता है। ईश्वर के सबसे अधिक करीब पात्र वही हैं जिन्हें मार्गदर्शन करने हेतु सतगुरू मिले।

गुरूजी द्वारा उपदेशित पद्धति से साधना करने के लिये आसन में बैठना पड़ता है। किसी समतल स्थान पर शुद्ध, शांत वातावरण में कम्बल या कपड़े को बिछाना चाहिए। ध्यान के लिए उपयुक्त समय ब्रह्म मुहूर्त यानि प्रातः 3 से 6 होता है। सिर व गर्दन सीधे एक सीधी रेखा में हो और मेरुदण्ड सीधा हो। दोनों हाथ सिद्धासन, पद्मासन, या सुखासन में बैठकर पैरों के बीचों–बीच इस तरह रखें कि बाईं हथेली पर दाई हथेली रहे। फिर आंखों को बंद कर भृकुटी मध्य में सतगुरू के आदेशानुसार मंत्र का जप किया जाता है। धीरे धीरे सतगुरू के आदेश व कृपा से मन के अनियंत्रित चंचलता का निरोध होने लगता है।

ध्यान के समय सतगुरू के आदेशानुसार साक्षी भाव से एक विचार को डूबते और दूसरे विचार को उभरते देखते रहना चाहिए। ध्यान की

परिपक्व अवस्था में मन विचारों से रहित हो जाता है। इस अवस्था में मन में एक ही विचार निरंतर लुप्त व प्रकट होता है। परन्तु दूसरा विचार वह स्थान नहीं ले पाता है। जैसे–जैसे ध्यान प्रगाढ़ होता जाता है, मनुष्य अंतर्मुख होता जाता है तथा उसका सम्पर्क इन्द्रियों और उनके विषयों से छूट जाता है। यहाँ तक कि श्वास की प्रक्रिया का भी आभास नहीं रहता। जैसे जैसे ध्यान प्रगाढ़ होता जाता है, अखण्ड मंडलाकार, जो चराचर में व्याप्त है, ज्योति के रूप में प्रकट होता है। कुछ ही समय के लिये ही क्यों न हो, इस ज्योति की झलक का अनुभव स्वयं में एक उपलब्धि है। संसार के सारे धर्म एवं सम्प्रदायों में दिव्य ज्योति को ही मान्यता दी है। ईश्वर ही वह ज्योति है जिसमें हम राम कृष्ण, ईसा, मोहम्मद आदि के दर्शन कर सकते हैं। यहां यह आप स्वयं हैं, जो स्वयं के प्रकाश से प्रकाशित होकर आज्ञा चक्र में अनुभूत होता है। यहां सतगुरू साकार है, परन्तु सत्य इसके भी परे है। वहां केवल परम सत्य है।

हमारे गुरूजी का व्यक्तित्व इतना दिव्य और असाधारण था कि देवी–देवताओं ने उन्हें अपने दर्शन देकर कृतार्थ किया था। संत महात्माओं ने गुरूजी को आदर सम्मान दिया था। इस संदर्भ में विवेकानन्द आश्रम के स्वामी आत्मानन्द जी, जगप्रसिद्ध भगवान रजनीश जी का उल्लेख करना जरूरी है, जिन्होंने उन्हें सम्मानपूर्वक आसन दिया था।

एक समय भगवान रजनीश का प्रवचन चल रहा था। परम पूज्य गुरूजी उस प्रवचन को सुनने गये। प्रवचन करते समय अचानक भगवान रजनीश का ध्यान इस दिव्य विभूति (गुरूजी) की ओर गया। उन्होंने प्रवचन रोककर सादर खड़े होकर गुरूजी को सम्मान के साथ मंच पर आसन दिया और कहा कि आपका स्थान श्रोताओं के समूह में नहीं, अपितु व्यासपीठ पर है।

ऐसा ही प्रसंग स्वामी आत्मानन्द जी के प्रवचन के अवसर पर हुआ। ज्यों ही स्वामी जी ने परम पूज्य गुरूजी को श्रोताओं के मध्य देखा, वे प्रवचन रोककर व्यासपीठ पर खड़े हो गये और गुरूजी से निवेदन किया कि पंडित जी आप मंच पर विराजमान हों, अन्यथा वे प्रवचन नहीं दे पायेंगे। स्वामी आत्मानन्द जी, विवेकानन्द आश्रम रायपुर के अधिष्ठाता थे।

परमपूज्य गुरूजी का रक्षाकवच हर शिष्य के इर्द–गिर्द सदैव रहता है। पहले भी था और आज भी वह रक्षा कवच सबके साथ है। गुरूजी का यही कथन रहा है कि तुम साधना पथ पर निर्भीक होकर चलते रहो, ''मैं आपके पीछे सदैव संरक्षक के रूप में विद्यमान रहूंगा''।

असाधारण व्यक्तित्व के धनी पूज्य गुरूजी ऐसे विरले गृहस्थ संत रहे हैं जो जीवन के चरमोत्कर्ष लक्ष्य तक साधक को पहुंचाने में पूर्ण रूप से सक्षम रहे हैं। श्रद्धा और भक्ति से उनके नाम का स्मरण मात्र से कैसी भी विपत्ति या समस्या का हल साधक पा सकता है। ऐसे विराट व्यक्तित्व की जीवन गाथा का इतिहास लिखकर सुरक्षित करना उनके शिष्यों का दायित्व है, इसी कारण, आज उनके देह में न रहते हुए, इस दायित्व को निभाने का यह प्रयास है ताकि वर्तमान एवं भावी पीढ़ी पूज्यवर की सम्पूर्ण जीवनगाथा को जान सके एवं उनके द्वारा कठिन राह पर चलकर जिस ''सत्य की खोज'' में समस्त जीवन अर्पित कर साधना की, उसे जानकर उनकी करूणा की अथाह वैतरणी से कुछ पाकर धन्य हो सके।

''श्री सद्गुरवे नमः''

आप सतगुरू की शरण में जाते हैं फिर कहते हैं कि मेरा कुछ हुआ नहीं। मुझे कुछ मिलता नहीं। ऐसा कहा तो फिर शरण माने क्या? जब आपने सब दे दिया तो मेरा–तेरा कहां रह गया। ये तो दीवार डालना है फिर से। (''श्री सद्गुरूजी–पं.वा.रा. तिवारी)

''दिव्याम्बु निमज्जन'' में पूज्य गुरूवर के जन्म से लेकर 1982–83 तक की जीवन यात्रा का मार्मिक और हृदयस्पर्शी विवरण लिपिबद्ध है। यहां यह बताना आवश्यक प्रतीत हो रहा है कि पूज्य गुरूजी सन् 1960 में तेल्हारा छोड़ दिये थे। तेल्हारा छोड़ने के बाद पूज्य गुरूजी दुर्ग में कुछ समय तुलाराम आर्य कन्या विद्यालय के शिक्षक श्री बक्सी जी के घर में रहे। यहीं पर पूज्य गुरूजी समाधि में चले गये और उनके बड़े पुत्र श्री रूद्रमणि (बाबा) जी गुरूजी के सिर एवं पैर में मालिश करते रहे एवं गुरूजी तीन दिन के बाद ही समाधि की स्थिति से सामान्य स्थिति में आ सके थे। गुरूजी को महात्मा गांधी स्कूल में कमरा मिला जहां वह संगीत की शिक्षा देते थे। सात विद्यार्थी गायन सीखते थे और 5 रूपये प्रति विद्यार्थी उन्हें फीस मिलती थी। इस दौरान और भी विद्यार्थी आये तथा अधिकतम 62 रूपये प्रतिमाह गुरूजी की आय हो गई थी।

कुछ समय गुरूजी देशमुख फर्शी वाले के घर में भी रहे। उस समय संगीत विद्यालय 7 से 10 बजे रात तक चलता था। गुरूजी बाद में कृष्णा गुप्ता के घर में भी रहे और उसके बाद अमेरिकन डॉ0 मोंगा जो भिलाई के सेक्टर–6 में रहते थे, उनका एक मकान दुर्ग में पचरीपारा मोहल्ले में था, जिसमें गुरूजी रहे हैं और उनका परिवार भी यहां रहा है। यह मकान तालाब के किनारे था। डॉ0 मोंगा जब अमेरिका वापिस चले गये तो गुरूजी को मनी ऑर्डर से रूपये भी भेजते थे। इस दौरान श्री गजानन बडयालकर तथा श्री चित्रनाथ मिश्रा पूज्यवर के साथ सदैव रहे। यहां यह बताना प्रासंगिक होगा कि श्री चित्रनाथ गुप्ता के पिताजी संगीत विद्यालय

में तबला वादक थे तथा चित्रनाथ जी को पैरों में कोढ़ हो गया था और पूज्य गुरूजी की कृपा से वह ठीक भी हो गया तथा उन्हें आगे चलकर दुर्ग नगर पालिका में नौकरी भी मिल गई।

उनके दो पुत्रगण दुर्ग में रहने लगे तथा सन् 1964 में अन्य दो पुत्र श्री अशोक तिवारी अपने छोटे भाई अजीत तिवारी जी (जो आगे चलकर सन्यास लेकर गोरखपंथी समुदाय में चले गये) एवं पूज्या गुरूमाता सहित दुर्ग में आकर नैना बाई के मकान में बईगापारा मोहल्ले में रहने लगे थे। कुछ समय बाद श्री अशोक भैया कसारडीह मोहल्ला (दुर्ग) में रहने लगे जहां गुरूजी उनके साथ रहे। इस समय ''गुरूजी'' परमहंस अवस्था में थे और उनकी स्थिति को देखते हुए पास के सुनसान स्थान पर एक कमरा लेकर अलग व्यवस्था की गई। इस कमरे के चारों ओर खुला मैदान था और कमरे में मात्र एक खटिया–दरी–तकिया तथा एक मटके में पानी की व्यवस्था थी। सुबह श्री अशोक भैया उनके लिये पानी–चाय और नाश्ता दे आते थे और पास में रहने वाला एक मद्रासी शाम को लाल चाय एवं ब्रेड दे आता था। चौबीस घंटे में मात्र यही उन तक पहुंचता था, जिसमें पूर्ण संतुष्टि के साथ साधना की गहराईयों में पूज्य गुरूजी डूबे रहते थे।

गुरूजी के कमरे में अनेकों सांप आते थे और किसी तरह की हानि गुरूजी को नहीं पहुंचाते थे। यह घटना सन 1968–69 की है। इस समय दो अमेरिकन जो दुर्ग के रसियन गेस्ट हाउस में रूके थे, पूज्य गुरूजी के पास आये। इन लोगों को देखकर बाहर खुले मैदान में खूब भीड़ एकत्र हो गई। उन दोनों अमेरिकनों से लगभग 2 घंटे अंग्रेजी में गुरूजी से वार्तालाप होती रही। उन्होंने पूज्य गुरूजी से वापिस अमेरिका जहां उनका जन्म हुआ था, चलने का प्रस्ताव रखा था। पूज्य गुरूजी ने उनका प्रस्ताव

स्वीकार नहीं किया। इस घटना के गवाह श्री अशोक भैया एवं न्यासी श्री गजानन बडयालकर जी हैं। इस स्थान पर गुरूजी का निवास मात्र दो माह रहा था।

जैसा कि हमें ज्ञात है 1983 तक पूज्य गुरूजी का कोई घर नहीं था और न ही कोई आश्रम था। तेल्हारा से आने के बाद पूरा परिवार दुर्ग में आकर किराये के मकान में रहने लगा। जैसा कि ऊपर बताया गया गुरूजी के दो पुत्र 1964 में गुरूमाता के साथ दुर्ग में अलग रहने लगे। कुछ समय पश्चात एक पुत्र बेमेतरा में रहने लगा और उन्हीं के साथ गुरूमाता एवं गुरूजी भी दो माह एकांत में उनके पुत्र अशोक तिवारी जी द्वारा की गई व्यवस्था में दुर्ग में रहने के बाद बेमेतरा चले गये थे।

1970 के करीब गुरूजी का परिवार गुरूजी को घर से बाहर जाने का दबाव देने लगा। गुरूजी से कहा गया कि **अब आप मुक्त हो, इसलिए आप कहीं भी जा सकते हैं और कहीं भी रह सकते हैं।** गुरूजी ने गुरूमाता को भी अपने साथ रहने के लिए कहा किन्तु गुरू माता अपने बच्चों के साथ ही किसी भी हालत में रहने के लिए तैयार हो गईं और गुरूजी के साथ नहीं गईं। गुरूजी बेमेतरा से चलकर दुर्ग आये, दुर्ग में श्री विजय शंकर जी दुबे रिटायर्ड जज के साथ लगभग 15 दिन तक ठहरे। जब गुरूजी दुर्ग छोड़ने लगे तो दुबे जी ने एक सौ रूपये का नोट, एक कपड़े के टुकड़े के अंदर सिलकर रख दिया और गुरूजी से कहा **''यदि किसी अनजान स्थान में आपका शरीर–त्याग हो जाये तो जो भी आपके पास रहेगा, उसे आप यह लकड़ी (दाह संस्कार) के लिए दे दीजियेगा।''** गुरूजी उस नोट को कई वर्षों तक सम्भाल कर रखे हुए थे।

गुरूजी की उस समय ऐसी अवस्था थी कि वे 24 घंटे में एक–आधी रोटी खाते थे, उनका पूरा शरीर जलता था, कभी–कभी पानी में डूबकर गर्मी से राहत पाते थे। बड़ा आग्रह करने से कभी–कभी लस्सी पी लेते थे। उन्हें नींद बिलकुल नहीं आती थी, शरीर में असहनीय पीड़ा होती थी, उनका शरीर सूखकर कांटा हो गया था। केवल मस्तक एवं मुखमंडल चमकता था। ऐसी हालत में गुरूजी ने घर छोड़ा।

उस समय गुरूजी के मात्र 15 शिष्य थे। गुरूजी अपने शिष्यों के अलावा किसी दूसरे के घर में नहीं रूकते थे। गुरूजी बिना बुलाये, किसी शिष्य के घर नहीं जाते थे और न ही किसी के घर ज्यादा दिनों तक ठहरते थे। ऐसी हालत में गुरूजी को कहां ठहराया जाये, गुरूजी के लिये कहां आश्रम बनवाया जाये, उन थोड़े से शिष्यों के लिये यह बात समस्या बन गई थी। शहडोल में लोग बैठकर आपस में इस संबंध में चर्चा करते थे लेकिन गुरूजी इस चर्चा में बिलकुल भाग नहीं लेते थे, वे केवल मौन होकर सुनते रहते थे।

सन् 1971–72 के बाद पूज्य गुरूजी की जीवन यात्रा जानने के लिये हमें संक्षेप में 1972 से 1983 के घटनाक्रमों को यहां दोहराना आवश्यक प्रतीत होता है। दुर्ग का संगीत विद्यालय गुरूजी को 1971–72 में छोड़ना आवश्यक हो गया था, क्योंकि संगीत उन्हें समाधि अवस्था में ले जाने लगा था। दुर्ग में अन्य लोगों के अलावा श्री के.के. द्विवेदी अतिरिक्त जिलाधीश गुरूजी के सम्पर्क में आये जो सेवा निवृत्त होने पर बिलासपुर में बस गये थे। गुरूजी के आध्यात्मिक जीवन से अनेकों लोग प्रभावित होकर दीक्षा ग्रहण करने लगे थे ओर वर्तमान गुरू परिवार का दायरा दुर्ग के संगीत विद्यालय को छोड़ने पर निरंतर व्यापक होता जा रहा था।

श्री के. के. द्विवेदी के आमंत्रण पर गुरूजी बिलासपुर गये और वहां कुछ समय उनके साथ रहते हुए श्री लक्ष्मी प्रसाद मिश्रा उनके बिलासपुर में प्रथम शिष्य बने। साथ ही उन्होंने श्री नर्मदा प्रसाद द्विवेदी श्री हरीशचन्द्र त्रिपाठी शहडोल, श्री लक्ष्मणराव देशपांडे, श्री काले, रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट एवं सेशन्स जज, स्वर्गीय मारूतराव ठाकरे, रेल्वे मेल ड्रायवर श्री हिदायत अली ''कमलाकर'' पी.टी.आई. आदि को आध्यात्म के जटिल विषयों की जानकारी देते हुए दीक्षित किया। इन सभी के यहां पूज्य गुरूजी का अस्थायी निवास भी रहा है। पूज्य गुरूजी आधुनिक प्रचार पद्धति से कोसों दूर अपने शिष्यों को अपने अन्दर स्थित दिव्य शक्ति का बोध एवं साक्षात्कार करने हेतु विशेष जोर देते हैं।

श्री लक्ष्मण राव देशपांडे ने समाधि के बारे में जानने की प्रार्थना की तब गुरूजी ने पूछा कि आपको समाधि की परिभाषा चाहिये या इसका अनुभव। लगभग एक माह तक देशपांडे जी श्री गुरूजी से भेंट करते रहे किन्तु उन्होंने दीक्षा नहीं ली। जब समाधि सुख को अनुभव करने की इच्छा इतनी बलबती हो गई कि उन्होंने श्री गुरूजी से दीक्षा देने का अनुरोध किया और दीक्षा के समय ही समाधि सुख का अनुभव भी श्री देशपांडे जी को कराकर कृतार्थ किया था। बिलासपुर में रहते हुए शहडोल के लोग भी सम्पर्क में आये और श्री हरीश चन्द्र त्रिपाठी जी के यहां भी गुरूजी लगभग 15 दिनों तक समाधि अवस्था में रहे। शहडोल में रहते हुए श्री जानकी प्रसाद जी मिश्रा, श्री हरनारायण दुबे, श्री भैयालाल तिवारी जी ने दीक्षा ग्रहण की और उनके यहां भी अस्थाई निवास गुरूजी का रहा है।

बिलासपुर में द्विवेदी जी के यहां गुरूजी के प्रवास के दौरान उनके मित्र श्री राम खिलावन मिश्रा का सम्पर्क गुरूजी से हुआ और उनके निमंत्रण पर गुरूजी ने उनके यहां भी निवास किया। दुर्ग, बिलासपुर, शहडोल में आध्यात्मिक जिज्ञासु धीरे-धीरे गुरूजी के सम्पर्क में आते गये और समर्पित शिष्यों के यहां गुरूजी का निवास होता रहा। 1973-1974 के आसपास बिलासपुर के ही स्वर्गीय डॉ0 देवरस का परिवार, श्री बाला प्रसाद त्रिपाठी, श्री रघुनाथ राव कुपटकर, श्री बाला साहेब देशपांडे, डॉ0 गिरीश पांडे तथा डॉ0 कुमारी सुधा व्यास, श्री देवेन्द्र राय आदि ने भी शिष्यत्व पाया और गुरू परिवार विकसित होता गया।

अरूणाचलम के प्रसिद्ध रमण महर्षि के शिष्य श्री यादव अमृतराव गोवर्धन को आध्यात्मिक मार्गदर्शन के लिये गुरूजी से सम्पर्क करने का सुझाव दिया गया था, तब गुरूजी ने यह कहकर कि ''वे भेजे गये'' हैं, अपने पूर्व ज्ञान की उपलब्धियों का आभास करा दिया था और उसी तरह जब गुरूजी रायगढ़ में नर्मदा प्रसाद जी द्विवेदी के यहां थे तो उन्हें पूर्वाभास हुआ था कि शहडोल में कोई उनसे आध्यात्मिक मार्गदर्शन की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा है। वह कोई और नहीं श्री गुरू प्रसाद जी पांडे थे। गुरू प्रसाद जी को लगातार चार दिनों तक गुरूजी के मुखमंडल के दर्शन हुए और इन्हीं चार दिनों में रायगढ़ में गुरूजी को शहडोल जाकर गुरू प्रसाद की सहायता करने का पूर्वाभास हुआ था। यह सत्य है कि सतपुरूष अपने आप साधकों को स्वयं ढूंढते हुए प्राप्त हो जाते हैं।

1975-76 में पूज्य गुरूदेव ने मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र में अपनी यात्राओं का क्रम जारी रखा और नागपुर, वर्धा, अमरावती, अकोला आदि स्थानों में वे गये। इस समय वर्धा में श्री बसंत विट्ठल तकवाले, श्री

प्रभाकर पांडे आदि सम्पर्क में आये जहां गुरूजी ने अपना निवास भी किया और आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्राप्त करने के जिज्ञासुओं का जीवन संवारा।

गुरूजी का एक शिष्य परिवार ग्राम बरांव, तहसील मऊगंज (हनुमना) जिला रीवा (म0प्र0) में है। इस परिवार ने अपने घर के पास गुरूजी के लिये एक आश्रम बनवाने की इच्छा व्यक्त की। गुरूजी ने आश्रम बनाने की अनुमति उन्हें दे दी। गुरूजी ने सर्वप्रथम आश्रम में वृक्षारोपण करने को कहा। गुरूजी ने कहा—पहले आप लोग वृक्ष तैयार कर लें, बाद में मकान कभी भी बन जायेगा। यह चर्चा माह अप्रैल—मई 1977 की थी।

गुरूजी ने गुरू माताश्री को भी बरॉव में रखने की इच्छा व्यक्त की थी किन्तु इसके पूर्व ही गुरूमाताश्री का शरीरांत हो गया। पूज्य गुरूजी इस समय बरॉव में थे। उन्होंने बताया गुरूमाता सूक्ष्म रूप से मिलने आईं थीं और दिनांक 10—06—1977 को शरीर छोड़ दिया है। श्री गुरू प्रसाद जी के बड़े भाई के साथ पूज्य गुरूजी पैदल ही रवाना हो गये और आगे बस, रेल द्वारा बेमेतरा पहुंचे जहां आदरणीया गुरूमाता का अंतिम संस्कार गुरूजी के पहुंचने के पहले ही कर दिया गया था। 1977 में मां जी के स्वर्ग सिधारने के बाद पूज्य गुरूजी ने सांसारिक बंधनों से संबंध तोड़ लिया।

अ. सामूहिक गुरू पूजा का श्री गणेश

पूज्य गुरूजी के शिष्य श्री रधुनाथ कुपटकर, जिन्हें पूज्यवर ने 1975 में दीक्षित किया, हमें पूज्य गुरूजी के विषय में काफी जानकारियां दीं हैं, जिसके लिये हम उनके आभारी हैं। 1975 के समय गुरू पूर्णिमा के अवसर पर प्रतिवर्ष सामूहिक गुरू पूजा का चलन नहीं था अपितु कुछ

वरिष्ठ साधकों द्वारा निजी तौर पर यह पूजा की जाती थी, जहां अन्य शिष्यों का बिना आमंत्रण के जाना उचित नहीं समझा जाता था। इसे संशोधित कर कुपटकर परिवार एवं अन्य शिष्यों में प्रमुखतः डॉ. देवरस परिवार, डॉ. गिरीश पाण्डे जी, श्री नर्मदा प्रसाद द्विवेदी, श्री लक्ष्मी प्रसाद मिश्रा परिवार, श्री यादव राव गोवर्धन परिवार श्री ठाकरे जी का परिवार, श्री कुरियन, श्री कमलाकर परिवार श्री बाला साहेब देशपाण्डे इत्यादि शिष्य परिवारों द्वारा सामूहिक गुरू पूजा का आयोजन करने की पूज्य गुरूजी ने सम्मति प्रदान कर शिष्य परिवार को अनुग्रहीत किया।

वर्ष 1978 में प्रथम सामूहिक गुरूपूजा 20 रूपये प्रति परिवार लेकर स्थानीय रेल्वे महाराष्ट्र मण्डल टिकरापारा बिलासपुर में की गई, जिसमें बिलासपुर के शिष्य परिवार के अलावा स्थानीय लोगों और बाहर के साधकों को भी आमंत्रित किया गया था। श्री कुपटकर जी ने बताया कि उनके निवास स्थान पर सभी के सामूहिक प्रयास से प्रसाद तैयार किया गया और यह प्रसाद ''अक्षय भण्डारा'' साबित हुआ, क्योंकि सभी के द्वारा भोजन करने के बाद भी काफी मात्रा में प्रसाद बचा रहा। यह गुरू पूजा लगातार दो वर्षों तक गुरू पूर्णिमा के दिन इसी स्थान पर मनाई गई थी। इसके बाद सर्व सम्मति से चर्चा करके गुरूजी के आदेश से प्रति वर्ष गुरूजी की जन्म तिथि 23 जुलाई को ही गुरू पूजा मनाने का निर्णय लिया गया। इस तरह 23 जुलाई का गुरू पर्व बिलासपुर से शुरू होकर गुरूजी की सम्मति से उनके शिष्यों ने रायपुर, नागपुर, शहडोल, रीवा, वर्धा, बालाघाट, ग्वालियर, इन्दौर और गुरूजी के देह में रहते भोपाल में यह पर्व मनाया। गुरूपूजा रायपुर—राजिम के बाद अब मुंगेली धाम में ही प्रति वर्ष की जाती है, जिसका वर्षवार विवरण निम्नानुसार है :—

1978 से 1980	बिलासपुर	1981, 1982	वर्धा
1983–84	मुंगेली	1985–86	इन्दौर
1987	बिलासपुर	1988	बालाघाट
1989	रीवा	1990	रायपुर
1991	वर्धा	1992	ग्वालियर
1993	मुंगेली	1994	रायपुर
1995	वर्धा	1996	शहडोल
1997	भोपाल	1998	मुंगेली
1999	रायपुर	2000	राजिम

2001 से सतत मुंगेली

पूज्य गुरूजी के सशरीर रहते हुए उनकी इच्छानुसार रक्षा बन्धन पर्व अक्सर इन्दौर में उनके शिष्य श्री वी.एस. भटजीवाले के यहां मनाया करते थे जो कि सन् 1982 में गुरू पूर्णिमा के दिन वर्धा में अपनी धर्मपत्नी सहित दीक्षित हुए थे। गुरूजी अक्सर दशहरा पर्व ग्वालियर में आदरणीय बुआ साहब के यहां अपने सभी शिष्यों के बीच मनाया करते थे। इसी तरह 23 जुलाई जो कि पूज्य गुरूजी का जन्म दिन है वह गुरू पूर्णिमा एवं जन्मोत्सव का रूप लेकर विभिन्न स्थानों पर प्रति वर्ष मनाया जाने लगा था। प्रमुख रूप से बिलासपुर, रायपुर, रीवा, वर्धा, बालाघाट, इन्दौर, ग्वालियर, शहडोल और अंतिम पर्व गुरूजी के सान्निध्य में भोपाल में मनाया गया था। यद्यपि गुरूजी के शरीर त्याग के बाद भी रायपुर और राजिम में यह पर्व मनाया गया। जैसा कि वर्ष वार विवरण ऊपर दिया गया है।

ब. पूज्य गुरूजी की जीवनी

पूज्य गुरू जी की जीवनी लिखी जाने का आग्रह बिलासपुर शिष्य परिवार ने किया और गुरू जी द्वारा सहर्ष स्वीकृति मिलने पर इसकी शुरूआत 1979–80 में की गई थी। 1979–80 में पूज्यवर श्री ठाकरे जी के यहां टिकरापारा बिलासपुर में रूके थे। वहां हर रोज रात्रि में श्री कुपटकर जी, श्री लक्ष्मी प्रसाद मिश्रा, श्री नर्मदा प्रसाद द्विवेदी डॉ. गिरीश पाण्डे, डॉ. किरण देवरस की उपस्थिति में पूज्य गुरू जी भूतकाल की समस्त घटनाओं का सिलसिलेवार स्मरण कर सुनाते थे, जिसे श्री कुरियन जी अंग्रेजी में लिखते जाते थे, जिन्हें सभी शिष्यों द्वारा सहयोग मिलता जाता था। यह क्रम लगातार चलता रहा और पूज्य गुरूजी के सहयोग से सभी विगत स्मृतियों को सहेज कर सतगुरू जी की जीवनगाथा एक पुस्तक के रूप में आकार लेती रही।

इस पुस्तक का नाम "A DIP IN THE DIVINE CONFLUENCE" लेखक श्री ए.के. कुरियन, गुरूजी की अनुमति से रखा गया, जिसे डॉ. भानु गुप्ता मुंगेली ने प्रकाशक की भूमिका निभाई तथा पुस्तक का मुद्रण बिलासपुर प्रकाशन, न्यू बस स्टेण्ड, बिलासपुर में सम्पन्न हुआ। वर्धा में गुरू पूर्णिमा 17 जुलाई 1981 दिन शुक्रवार को लेप्रोसी फाउण्डेशन में इस पुस्तक का विमोचन श्री संजाना जिला एवं सेशन्स जज द्वारा किया गया था।

On this ocassion the speech delivered by Mr. J.E. Sanjana, District and Sessional Judge, Wardha is worth reproducing here.

I seek first permission to sit and speak, and I am glad that the permission is granted by the President of this Yogi Mandal. I must speak my thoughts as regards the book so that I will introduce Guruji to you through the book as I see him. I will introduce him through my thoughts which is absolutely a noval one.

I deal first with the book, I must commend the author, Mr. Kurian. The book is written in a very beautiful style, lucid language, extremely fluent, well balanced words. It is a difficult task that has been achieved with great ease in translating certain words.

In the language of Patanjali, in his 'Mathematics of Yogas', which is a very rare book, in which there are tests laid down-to whom to make Guru - and another test - to whom the Guru should initiate as devotee. I have also come across certain people in Poona who have mastered certain subjects having a great dip in to spiritual confluence. By the touch they used to ignite your serpentine power that is Kundalini, but ultimately they did not know how to bring it down to the normal i.e. from the Jagritawastha to Suptawastha. Therefore, one should know to whom to initiate and one should know where to go for initiation. This is the ideology which is very well projected in this book.

This great Guru, it appears from his biography, had to undergo several sufferings as well, call it penances, to find out a Guru. He could not get it and therefore had to go without one.

Yogachittnivrittinirodhah is the stage which is impossible for us. This is the stage which one cannot reach. This is the stage which this great Guru has very easily adopted. **Therefore I call him a born God, realised as the Jains call a Tirthankar.** A man who is God realised from birth. He has not to go to jungle and take inspirations from certain Sadhus or other great people. It is in him inbuilt. The only thing he has to do is to worship-that which is in built in him. That is the real study of Yoga.

Yoga is a science about which this Guru in his orations to his devotees says and teaches 'Know thy self'. It is alright in comon parlance. Right from the time of our great forefathers to this day, every man is saying 'Know thy self' is a aim. But what is to know thy self? You do not seek knowledge from outside, it is within. God has imbibed in you something, you are to know just how to open the door. For that you have to condition your mind and body. This great Guru has said what is the worship of yoga. It is in a way worship of your own self. Since we all are in the

presence of a great Guru, we do not go in for the artificial light as light is within us.

So, if someone wants to go to the path of placidity, I recommend this book to each one. The experiences are indeed of the devotees(?). I have gone through practically the entire book. Of course, it was hurried reading but whatever I could catch is this: that by simply remembering the name of this great Guru, from just remembering, many people got relief in their different types of ailments. This I am quoting to stress one point. Here is this Guru; it is as if he had been omnipresent and omniscient. Remember the Guru in your trouble, he is either physically present there or through some divine soul near you and your ailment is gone. This is a great aspect which one has to consider and study.

The other thing that I have observed in this Guru is quite against the 20th century Gurus that we have. We indulge into Chamatkars, some manifestation of something that you feel suburb, unattainable and thereby you worship him. But here I find that there are no Chamatkars which itself is a chamatkar with this Guru.

I have seen him through the book. I am very lucky today that I am seeing him in this corporeal form and being

in a very close vicinity. In fact, I was heistant to accept the invitation of Mr. Takwale. But I have some philosophical background, having read something of the Vedas, even my religion, other religions because I am student of theology.

Having had some discourses with Mr. Takwale, I said I must take the opportunity to take his Darshan, and I am very happy to tell you that I am here with this Guru, To be very frank I would have liked to stand to deliver my remarks. Whatever remarks I had, but for the last about 8 days, I am not keeping well being pressurised with work. I have today delivered a very marathon judgement. that is why I requested him that I would better sit here and speak. Now through the effect of the presence of the Guru - (I have not yet touched him nor has he touched me. As in one of the chapters he has quoted five principles of initiation - by look, by touch and then by words and so many other things) just in his presence all that tribulations and trepidation-I had and the feverish feeling have gone.

I feel that I am now all powerful to deliver the lecture at least for two hours in standing posture. This is the power of this Guru that he makes the entire environment Gurumaya and radiates certain waves. Either they come

from divine or they project themselves through some divine being near you, and if you take a bath in these waves, it does affect you. There is a time, a moment, some divine being comes in your life, and it is a change for the better.

What I feel today in the presence of this Guru, it is a unique occassion in my life, and I am very happy to be here. So mind you some certain facets or factors that you must remember about this Guru are; that he is against advertisement; he has never indulged into Chamatkar but Chamatkars do happen in spite of him. L. R. Deshpande was ill and he got well by remembering him. There was another gentleman who went to Khamgaon, his son was very ill, just remembered him, the Guru was present and his son was alright. There are certain people who are intiated in a dream by the Kripa of this Guru. They just dreamt the Guru and a deity appeared. So all these Chamatkars-we call them chamatkar - they are actually visualisations. They actually take place through the power of this Guru.

Therefore, through this book al least everybody will be initiated in the sense that he will be drawn towards Adhyatm. And fortunately today the Guru is present in this world. So, if any difficulty is there, and I feel we get assured

through the devotees' experiences that, simply remembering by way of mental telepathy, your difficulties are bound to be solved. So today we all are before this Guru. I need not give narration I am incapable of I am not that learned, about all this.

Suffice it to say that we are having Guru, whose devotees are very well; though not equally well, but quite mighty, having had good experiences like Dr. Kurian. And we are glad that the book is published by an eminent scholar of Hindi. Today's congregation seemed to have a good draw towards Adhyatm, the Well being, we all depart with the Ashirwad of the Guru, taking the lesson of the book and let this book be a guide to all, a guide which will lead you through your life and carry you successfully to the cosmos, ultimately mingling you into divinity. You know your self, know thyself. The answer is in this book.

I thank you all for giving a patient hearing, and thank the President in calling me and allowing me to sit with the Guru. With all my reverred respects to the Guru, I wind my speech.

इस काल में "A DIP IN THE DIVINE CONFLUENCE" के हिन्दी संस्करण का अनुवाद का कार्य रीवा में चल रहा था और उस व्यस्तता के क्षणों में भी शिष्यों को मार्गदर्शन सदैव जारी रहा।

इस पुस्तक का प्रथम हिन्दी संस्करण डॉ. आशा श्रीवास्तव, एम0डी0, शरीर क्रिया विभाग, चिकित्सा महाविद्यालय, रीवा के सहयोग से अनुवाद कराकर जुलाई 1983 में किया गया तथा दूसरा संस्करण 1988 में तथा तीसरा 1997 में प्रकाशित किया गया था। इस अनुवादित हिन्दी संस्करण का नाम पूज्य गुरू जी द्वारा ''दिव्याम्बु निमज्जन'' रखा गया। प्रथम हिन्दी संस्करण का विमोचन रायपुर में 1983 में किया गया था।

पदार्पण दिवस– गुरू जी का भारत पदार्पण दिवस जो प्रति वर्ष 5–6 अक्टूबर को मनाया जाता है उसकी प्रथम शुरूआत भी 1986 में बिलासपुर शिष्य परिवार द्वारा राम मन्दिर, तिलक नगर में ही हुई थी।

उद्बोधन– पूज्य गुरूजी के आदेशानुसार गुरू पर्व के पावन अवसर पर सन् 1990 में प्रकाशित पत्रिका का द्वितीय अंक है। जिसका सम्पादन डॉ. (श्रीमती) के. के. पंधेर ने स्वर्गीय श्री मनोहर तेजवानी एवं स्वर्गीय श्री जितेन्द्रधर दीवान के सहयोग से किया था। प्रथम अंक का नाम पूज्य गुरूजी ने ''कैवल्य'' रखा था, जिसे सन् 1987 में बिलासपुर से हुई गुरू पूजा के पुनीत अवसर पर प्रकाशित किया गया था। सन् 1990 के बाद प्रतिवर्ष गुरू पर्व के अवसर पर उद्बोधन का प्रकाशन हो रहा है।

पूज्य गुरूजी की देखरेख में इस पत्रिका का सम्पादन वर्षवार निम्न शिष्यों के द्वारा सुचारू रूप से किया गया था :–

1991 डॉ. आर. बी. पाण्डे एवं सौ. उषा घरोटे वर्धा में।

1992 डॉ. (श्रीमती) के. के. पंधेर, श्री आर. के. शिन्दे, श्री एम. पलसकर ग्वालियर में।

1993 से 1996 डॉ. (श्रीमती) के. के. पंधेर, स्वर्गीय श्री मनोहर तेजवानी, स्वर्गीय श्री जितेन्द्र दीवान।

1997 डॉ. (श्रीमती) प्रतिभा गुर्जर, स्वर्गीय श्री मनोहर तेजवानी एवं श्री देवेन्द्र सिंह राय।

1998 श्री देवेन्द्र सिंह राय, श्री अशोक तिवारी, डॉ. (श्रीमती) प्रतिभा गुर्जर।

1998 के बाद प्रतिवर्ष गुरूपूजा के अवसर पर उद्बोधन का सम्पादन प्रमुख रूप से श्री देवेन्द्र सिंह राय, डॉ. (श्रीमती) के. के. पंधेर, श्री अशोक तिवारी, श्रीमती प्रतिभा गुर्जर, श्रीमती सुलभा माकोड़े, डॉ. चन्द्रा रजक, श्री संतोष शुक्ला एवं श्री आनंद मिश्रा सुचारू रूप से कर रहे हैं। विगत कुछ वर्षों से सम्पादकीय सलाहकार की भूमिका श्री डी. एस. राय द्वारा निभाई जा रही है।

श्री डी. एस. राय 1979 में बालोद में पदस्थ थे और पूज्य गुरूजी भी उनके पास निवास कर रहे थे। यहां गुरूजी के सम्मुख ध्यानावस्था में एक महिला की मुखाकृति चार दिनों तक प्रकट होती रही। रायपुर में किसी समारोह में डॉ. श्रीमती सईदा शिन्दे उन्हें मिली एवं वे ही वह महिला थीं, जिनका पूर्वाभास बालोद में गुरूजी ने किया था। डॉ. शिन्दे दम्पत्ति को गुरूजी ने दीक्षा दी और इसी काल में डॉ. श्रीमती पंधेर एवं अन्य शिष्य बनते गये। रीवा–वर्धा अमरावती के अलावा डॉक्टर शिन्दे दम्पत्ति के साथ पूज्य गुरूजी ने पठानकोट, जम्मू, श्रीनगर, मेरठ, देहरादून की यात्रायें की तथा डॉ. शिन्दे के यहां रीवा में भी निवास किया।

डॉ. सुधा पांडे मुंगेली में 1980 जुलाई में डॉ. भानु गुप्ता के मकान में रहती थीं ओर तभी गुरूजी भी डॉक्टर गिरीश पांडे एवं सुधा पांडे के पास मुंगेली में रहे। मुंगेली में रहते हुए अनेकों शिष्यों को गुरू परिवार से जोड़ा गया। 1982 में ही डॉ. भानु गुप्ता के यहां श्री प्रकाशचन्द्र पारेख के साथ आदरणीय शांतिलाल जी लूनिया भी गुरूजी के दर्शनों को वहां पहुंचे, जिन्हें देखकर पूज्य गुरूजी ने लूनिया को ''गौतम'' नाम से सम्बोधित कर आश्चर्य में डाल दिया क्योंकि शांतिलाल जी का बचपन का यह घरेलू नाम उनके निकटतम पारेख जी भी नहीं जानते थे, जिससे पूज्य गुरूजी की भूत–भविष्य और वर्तमान का साक्षात दर्शन की क्षमताओं का आभास मिलता है।

जुलाई 1981–82 की गुरू पूर्णिमा वर्धा में मनाई गई थी। इस अवसर पर सभी शिष्य वर्धा में एकत्रित हुए। इस गुरू पूर्णिमा में बरॉव का एक शिष्य गुरू प्रसाद पाण्डेय भी वहां उपस्थित था। गुरूजी अपने कई शिष्यों के साथ साधना संबंधी चर्चा कर रहे थे, **इसी बीच में गुरूजी ने गुरू प्रसाद से पूछा–बरॉव में पौधे लग रहे हैं?** गुरू प्रसाद ने उत्तर दिया–हां, गुरूजी वर्षा शुरू हो गई है, पौधे लग रहे हैं।

वहॉ बैठे अन्य शिष्यों ने प्रश्न को समझने की जिज्ञासा प्रकट की और उन्हें बरॉव में आश्रम निर्माण की बात बतायी गई। उस समय डॉ. भानु गुप्ता, तकवाले जी आदि कई शिष्य उपस्थित थे। डॉ. भानु गुप्ता तुरन्त बोल पड़े कि जब आश्रम बनना है तो मुंगेली ने क्या बिगाड़ा है? आवागमन, चिकित्सा आदि सुविधाओं की दृष्टि से मुंगेली अधिक उपयुक्त समझा गया और मुंगेली में गुरूजी ने आश्रम निर्माण की अनुमति दे दी।

अप्रैल 1983 में गुरूजी ग्वालियर से स्वर्गीय डॉ. ओमबाला शिन्दे के साथ वायुयान से इन्दौर आये और वहां स्वर्गीय भटजीवाले के निवास पर विराजमान रहे। विभिन्न शिष्यों के पत्रों से उनके आवागमन की जानकारी से पता चलता है कि पूज्य गुरूजी 01–08–1983 को मुंगेली में थे और वहां से रायपुर गुरूकृपा नर्सिंग होम में डॉ. आचार्या के पास 16–08–1983 को आये और 22–08–1983 को रीवा पहुंचे जहां डॉ. शिन्दे साहब के पास विराजमान रहे। गुरूजी प्रायः शहडोल, अमरावती, रीवा, भोपाल, इन्दौर, बिलासपुर, रायपुर, वर्धा वगैरह अपने शिष्यों के पास जाकर उन्हें आत्म कल्याण की राह दिखाते थे। लगातार सम्पर्क में रहने वाले शिष्यों को गुरूदेव की विभिन्न स्थानों की उपस्थिति का भान रहता था और **कुआं प्यासे के पास जाकर तृप्ति देता था ऐसे विरले संत को हमारा वन्दन नमन स्वीकार हो।**

परम पूज्य गुरूजी रायपुर में डॉ. पंधेर के निवास पर ठहरे हुए थे तब डॉ. गिरीश पांडे के माध्यम से डॉ. भानु गुप्ता ने उनसे भेंट की थी और मुंगेली आमंत्रित किया और अपने सभी परिवार वालों को दीक्षा भी दिलाई तथा पूज्य गुरूजी के स्थायी निवास की व्यवस्था के लिये 1983 में श्री वासुदेव योगाश्रम का निर्माण किया गया।

पूज्य गुरूजी डॉ. भानु गुप्ता के साथ ''सोमनी'' जो दुर्ग–राजनांदगांव रोड पर है वहां आये। यहां श्री अशोक भैया अपने परिवार के साथ रहते थे। अशोक भैया से वहीं उनसे चर्चा हुई और उन्हें मुंगेली आकर गुरूजी की देखरेख और सेवा का कार्य सौंपा गया। शुरू में यह आश्रम एक टूटा फूटा घर था। डॉ. भानु गुप्ता ने इसकी मरम्मत कराई और इस प्रकार

मुंगेली आश्रम की स्थापना हुई। यह आश्रम जो कि बड़ा बाजार मुंगेली में स्थित है, डॉ. भानु गुप्ता की धर्मपत्नी की पहल और आग्रह से ही निर्मित हुआ।

शिवपुर मुंगेली में स्थित आश्रम की भूमि बाद में डॉ. भानु गुप्ता के सहयोग से ली गई और यह आश्रम पूज्य गुरूजी द्वारा धनराशि (जो उन्हें शिष्यों से दक्षिणा के रूप में मिली थी) से निर्मित हुआ।

श्री वासुदेवयोगाश्रम, बड़ा बाजार मुंगेली का उद्घाटन 15 दिसम्बर 1983 में हुआ, जिसमें इन्दौर से स्वर्गीय श्री भटजीवाले साहब तथा शरद राठौर जी, डॉ. सईदा शिन्दे, राजू काण्णव, श्री राजेन्द्र कुमार जी गौंदिया, डॉ. व्ही. ए. शिन्दे, श्री मौलाना मज़हर खान, श्री डॉ. पंधेर, श्री ए. के. कुरियन, श्री बसंत खोत तथा मुंगेली के सभी शिष्य परिवारजन भी उपस्थित थे। आश्रम प्रवेश के बाद पूज्य गुरूजी श्री भटजीवाले तथा शरद राठौर जी के साथ भोपाल होते हुए इन्दौर गये थे। छत्तीसगढ़ एक्सप्रेस से भोपाल आने पर पूज्य गुरूजी श्री राय साहब के यहां एक घंटा रूककर इन्दौर के लिये रवाना हो गये थे। लगभग 1 माह इन्दौर में निवास रहा।

श्री वासुदेवयोगाश्रम, बड़ा बाजार, मुंगेली प्रवेश के बाद श्री गुरूजी नियमित रूप से प्रवास पर विभिन्न स्थानों पर अपने शिष्यों के आग्रह व स्वयं की इच्छा से जाते रहे। उन वर्षों में टेलीफोन का साधन सीमित होने के कारण शिष्यगण पत्र द्वारा या एक दूसरे से पूछकर पता करते थे कि गुरूजी कहां प्रवास पर हैं और उसी अनुसार दर्शन का कार्यक्रम बनाया करते थे।

किसी या किन्हीं शिष्यों को दर्शन एवं आशीर्वाद हेतु उनके समक्ष उपस्थित होने पर गुरूजी बड़े प्रसन्न होते थे और पूरा समय देकर शिष्यों का एवं उनके परिवारजनों और अन्य परिचितजनों का कुशलक्षेम पूछते थे। यह ध्यान में रहते हुए भी कि मेजमान शिष्य के यहां अतिथि सत्कार की अपनी सीमायें होतीं हैं, गुरूजी दर्शनार्थी शिष्यों के लिये चाय नाश्ता आदि का आग्रह जरूर करते थे। एक या दो दिन में गुरूजी के पास कुछ समय बैठकर तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त कर शिष्यगण प्रसन्नता एवं आध्यात्मिक उर्जा से भर उठते थे। कोई भी शिष्य गुरूजी की अनुमति के बिना बताये वापिस नहीं जाते थे। ऐसा करने से कई विपरीत परिणाम देखे गये हैं, जिसका यथा स्थान उल्लेख करेंगे। कई बार गुरूजी शिष्यों की इच्छा के विपरीत उन्हें जाने के लिये कह देते थे। शिष्यों को यद्यपि इससे बुरा जरूर लगता परन्तु गुरूजी के ऐसे आदेशों में शिष्यों की कोई न कोई भलाई छिपी रहती थी।

30–05–1984 को डॉ. शिन्दे साहब के यहां रीवा में पहुंचे थे और 9–6–84 को शहडोल तथा 15–6–84 को मुंगेली पहुंचे थे। 1984 की गुरुपूजा मुंगेली में सम्पन्न हुई और उसके बाद पूज्य गुरूजी स्वर्गीय श्री भटजीवाले साहब एवं श्री शरद राठौर एवं श्री डी. एल. शर्मा जी के साथ इन्दौर पधारे और करीब एक माह निवास रहा। वर्ष 1984 अन्त में पूज्य गुरूजी का भोपाल प्रवास हुआ और बोर्ड ऑफिस के सामने श्री डी. एस. राय के शासकीय आवास में लगभग एक सप्ताह विराजमान रहे। उस समय उनके दर्शनार्थ आनेवालों में स्वर्गीय श्री डी. जी. भावे, वरिष्ठ आई.ए.एस. वा स्वर्गीय डॉ. ए. के. मिश्रा प्रमुख थे। सेवानिवृत्त प्रमुख वन संरक्षक डॉ. एस. डी. एन. तिवारी जी गुरूजी के भक्तों में रहे हैं।

जनवरी 1985 में पूज्य गुरूजी इन्दौर में थे तो उन्होंने श्री डी. एल. शर्मा को 500/- रूपये दिये तथा तार द्वारा मनी ऑर्डर अपने मंझले पुत्र को बेमेतरा भिजवाया था। 14 जनवरी 1985 के आसपास तार द्वारा उनके मझले पुत्र जो बेमेतरा में रहते थे उनकी मृत्यु का समाचार मिला। गुरूजी ने बताया था कि उनका पुत्र सूक्ष्म रूप से मिलने और उसने शरीर छोड़ने की स्वीकृति भी ली थी। यह सब बताते हुए पूज्य गुरूजी अत्यधिक सहज थे और स्वर्गीय श्री भटजीवाले साहब के आग्रह पर ही बेमेतरा के लिये श्री शरद राठौर के साथ प्रस्थान किया।

मार्च 1985 तथा जुलाई 1985 में भी पूज्य गुरूजी इन्दौर में ही स्वर्गीय श्री भटजीवाले साहब के यहां थे और सन् 85 की गुरू पूजा इन्दौर में ही मनाई गई थी। इसके बाद स्वर्गीय श्री भटजीवाले के साथ **बड़ौदा कार द्वारा किसी विशेष प्रयोजन से गये थे जिसका उल्लेख विस्तृत रूप से श्री संजीव भटजीवालों के द्वारा किया गया है।** स्वर्गीय श्री भटजीवाले को गुरूजी स्नेह से भाऊ बोला करते थे।

भाऊ, पूज्य गुरूजी को लेकर अगस्त 1985 के प्रथम सप्ताह में ग्वालियर श्री बुआ साहब शिन्दे के यहां चले गये थे। इस दौरान ग्वालियर में श्री बसंत खोत, श्री डी. नावलेकर, श्री दिलीप एवं श्री विक्रम शितोले, श्री ज्ञान सिंह तोमर, आदि सभी परिवारजन उनके दर्शन के लिये आते थे। पूज्य गुरूजी सभी शिष्यों के यहां जाकर भोजन ग्रहण करते हुए अपना आशीष प्रदान करते थे।

ग्वालियर में श्री देवेन्द्र राय के मित्र संयुक्त संचालक कोष एवं लेखा ग्वालियर, स्वर्गीय श्री वी. एस. गवली भी गुरूजी के दर्शनों के लिये

आते थे। श्री गवली की लगातार 4 बेटियां थीं। उनके यहां एक पुत्र होने की लालसा लम्बे समय से अपूर्ण बनी हुई थी। एक दिन जब श्री राय एवं श्री गवली गुरूजी के समक्ष बैठे हुए थे तब **श्री राय ने आन्तरिक हृदय से गुरूजी से प्रार्थना की कि वे श्री गवली की पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा पूर्ण कर दें।** यह सुखद आश्चर्य और अद्भुत उपलब्धि की बात है कि **एक साल के अंदर ही श्री गवली को एक सुन्दर और बुद्धिमान पुत्र की प्राप्ति हुई।**

1985 में ही ग्वालियर में रहते हुए गुरूजी का कार्यक्रम श्री राय और उनकी छोटी बहिन स्वर्गीय मीना के परिवार के साथ कश्मीर जाने का बना। उल्लेखनीय है कि डॉ. श्रीमती सईदा शिन्दे जो मूलतः कश्मीर की ही हैं उनके भाई तब वहां रहते थे। ग्वालियर से गुरूजी सहित सभी परिवारजन ट्रेन से जम्मू तक गये। जम्मू के पास नगरौहा नामक स्थान पर पदस्थ श्री राय के छोटे भाई मेजर वी. एस. राय के यहां गुरूजी सहित सभी रूके तथा अगले दिन श्रीनगर तक की यात्रा आर्मी की बस द्वारा सम्पन्न की गई। श्रीनगर में होटल में रूके तथा दो दिन बाद पूज्य गुरूजी डॉ. सईदा शिन्दे के भाई पुलिस अधिकारी स्वर्गीय श्री अब्दुल हमीद खान के यहां पहुंचे और वहां रूक गये। शेष सभी वापिस चले आये।

1986 का गुरू पर्व इन्दौर में ही मनाया गया था और गुरू पूजा के बाद पूज्य गुरूजी श्री डी. एल. शर्मा के साथ व्हाया खण्डवा रीवा के लिये प्रस्थान किये थे। रीवा के पूर्व सतना स्टेशन पर डॉ. श्री आर. पी. पांडे गुरूजी को लेने आये थे और कुछ देर सतना स्टेशन पर प्रतीक्षा करने के

बाद स्वर्गीय डॉ. शिन्दे एवं डॉ. सईदा शिन्दे ग्वालियर से सतना पहुंचे और सभी जन वहां से रीवा के लिय प्रस्थान किये। श्री डी. एल. शर्मा 3 दिन गुरूजी के साथ रीवा में रूके और वापिस इन्दौर आ गये थे।

नवम्बर 1986 में गुरूजी सागर पहुंचकर श्री राय साहब के यहां रूके और इस प्रवास के दौरान गुरूजी के दर्शन करने वालों में प्रमुख सागर विश्व विद्यालय के रिटायर्ड प्रोफेसर स्वर्गीय श्री सी. एस. चौहान, लेफ्टिनेन्ट कर्नल डॉ. व्यास, प्रोफेसर गोपाल आदि थे। सागर के तत्कालीन कमिश्नर श्री आर. के. गुप्ता ने पूज्य गुरूजी को अपने निवास पर आमंत्रित किया था, जिसे पूज्य गुरूजी ने स्वीकार कर उनके परिवार को अनुग्रहीत किया था।

सन् 1987 में मार्च/अप्रैल में पूज्य गुरूजी औरंगाबाद अकोला तथा अमरावती श्री बसंत हिरण्य जी के साथ वर्धा से कार द्वारा आये। राजू काण्णव भी साथ में थे और वहां डी. एल. शर्मा के घर निवास किये। उस समय गुरूजी श्री मोरगांवकर के यहां भी गये और श्री बाबूराव धर्माधिकारी जी की लड़की पुष्पा के यहां भी गये तथा सभी जन तीन दिनों में लगभग सभी स्थानों पर गुरूजी के साथ गये जहां पूज्य वर ने 1960–1965 के बीच साधना की थी। इनमें प्रमुख रूप से बुलाकी महाराज, गायत्री मन्दिर, गोल छतरी आदि प्रमुख हैं, जिनका विस्तृत विवरण मूल पुस्तक दिव्याम्बु निमज्जन में किया गया है। **यहां विशेष उल्लेखनीय बात जो गुरूजी ने बताई थी कि गायत्री मन्दिर में पहली बार 6 घंटे का ध्यान तथा गायत्री मां का साक्षात् दर्शन भी हुआ था।**

जुलाई 1987 की गुरूपूजा बिलासपुर में मनाई गई थी। और उसके बाद गुरूजी मुंगेली आश्रम चले गये। इसी वर्ष गुरूजी सागर भी गये। जैसा कि गुरूजी के पत्रों से ज्ञात होता है कि पूज्य गुरूजी 29–08–1987 को सागर, 31–10–1987 को पेन्ड्रा रोड, 3–11–87 को मुंगेली, 6–11–87 से 10–11–87 तक रायपुर, 11–11–87 को वर्धा के लिये प्रस्थान किये और वर्धा से ग्वालियर चले गये थे। 23–1–88 से 18–1–88 के बीच वर्धा रहते हुए 15 दिन का प्रवास अकोला, अमरावती तथा औरंगाबाद का भी किया था। उस समय श्री अशोक भैया, डॉ. भानु गुप्ता जी भी साथ में थे और सभी पुराने स्थानों का भ्रमण किया जहां गुरूजी साधनारत रहे थे।

सागर प्रवास के दौरान श्री राय साहब ने उन्हें अनेकों स्थानों का भ्रमण कराया। सागर में प्रमुख दर्शनार्थी के रूप में श्रीमती सुधा मलैया का नाम प्रमुख है जो डॉ. गिरीश पांडे से प्रभावित होकर गुरूजी के पास आध्यात्मिक मार्ग दर्शन हेतु आया करतीं थीं। गुरूजी ने इन वर्षों में छतरपुर भ्रमण किया। वहां के प्रसिद्ध मोटर मालिक स्वर्गीय श्री नारायणदास जी अग्रवाल जो स्वयं बड़े धार्मिक व्यक्ति थे, के यहां भोजन का आतिथ्य स्वीकार किया। गुरूजी खजुराहो के प्रसिद्ध मन्दिरों का अवलोकन करने भी गये। यद्यपि यह बड़ा आश्चर्यजनक लगता था कि वे ज्यादा समय नहीं रूके और न ही मन्दिरों के संबंध में वह उत्सुकता दर्शायी जो साधारणतः पर्यटक दिखाया करते हैं। गुरूजी ने पन्ना नगर तथा टीकमगढ़ जिले में स्थित ओरछा नगर का भी भ्रमण किया। इस दौरान पन्ना में जयश परिवार तथा श्री राम सरोज उपाध्याय सब इन्सपेक्टर गुरू जी के सम्पर्क में आये और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया।

पूज्य गुरूजी के अनुमोदन से आदरणीय स्वर्गीय श्री तकवाले जी ने वर्धा के निकट गारपीट जंगल में एक योग शिविर का आयोजन 25 से 27 दिसम्बर 1987 में किया था। इस शिविर में 70—75 शिष्य आये थे, जिनमें श्री भानु गुप्ता जी, श्री उधोपुरी जी, श्री बसंत हिरण्य एवं श्री भीमा शंकर शास्त्री जी, डॉ. व्ही. ए. शिन्दे एवं श्रीमती डॉ. सईदा शिन्दे जी एवं अनेकों आसपास से आये शिष्य बस द्वारा इस जंगल में गये थे। श्री तकवाले जी कार द्वारा पूज्य गुरूजी को लेकर गये थे। सारी व्यवस्था उस जंगल में एक आदिवासी स्कूल में की गई थी तथा पूज्य गुरूजी उसी के समीप एक डाक बंगले में श्री तकवाले जी, श्री राजू काण्णव, दीपक हरदास, देवेन्द्र शर्मा, किशोर काण्णव के साथ रूके थे। इस डाक बंगले को ''भूत बंगला'' भी कहा जाता था, परन्तु गुरूजी की कृपा से कोई भी अनहोनी घटना नहीं हुई थी। इस शिविर में जो भी उपस्थित था वह उन तीन दिनों को अविस्मरणीय यादगार के रूप में आज भी याद करता है।

1987 और 1989 के बीच गुरूजी का प्रवास प्रायः हर वर्ष सागर का हुआ है। एक बार गुरूजी को लेकर अपने जीजाजी श्री हरीसिंह ठाकुर के यहां तेंदूखेड़ा भ्रमण पर गये और भोजनोपरांत थोड़ा विश्राम करके गुरूजी ने वापिस सागर चलने का आदेश दिया जिसे सुनकर श्री राय साहब एवं उनके जीजाजी भौंचक्के रह गये तथा कुछ देर रूकने का आग्रह किया। चाय आदि पीकर जाने का आग्रह गुरूजी ने नहीं माना, फिर भी लगभग 1 घण्टा विलम्ब से निकलना हो सका। परिणामतः घनघोर बारिश और नाले में कार का फंस जाना तथा जैसे तैसे रात में 11 बजे सागर पहुंचना हो सका। यदि गुरूजी के कहे अनुसार चल पड़ते तो शाम 6 बजे के अंदर पहुंच सकते थे, और रास्ते की परेशानियों से बचा जा सकता था। इसके बावजूद न गुरूजी क्रोधित हुए और न कुछ कहा परन्तु यह सबक

जरूर मिल गया कि गुरूजी के आदेशों की कभी भी अवहेलना नहीं करना चाहिये क्योंकि पूज्य गुरूजी त्रिकालदर्शी सद्‌गुरू रूप में हमें पथ प्रदर्शन करने आये हैं।

सन् 1988 दिसम्बर माह में पूज्य गुरूजी राजू काण्णव एवं श्री बसंत हिरण्य हावड़ा अहमदाबाद एक्सप्रेस से चलकर अहमदाबाद में श्री आपटे के यहां गये और रात्रि विश्राम किया। दूसरे दिन जाम नगर के लिये रवाना हुए किन्तु गुरूजी का सूटकेस श्री आपटे के घर में छूट गया और इसे लेने श्री बसंत हिरण्य वापिस 12—15 किलोमीटर आपटे के घर गये। गुरूजी ने इस भूल के लिये कुछ भी नहीं कहा परन्तु राजू अवश्य शर्मिन्दगी महसूस कर रहे थे। गुरूजी की कृपा से ट्रेन आधा घण्टा लेट हो गई और बसंत जी जैसे ही गुरूजी का सूटकेस लेकर पहुंचे ट्रेन आ गई और जाम नगर दोपहर 3 बजे पहुंचकर अनिल धर्माधिकारी के यहां जाकर निवास किया।

पूज्य गुरूजी तीसरी बार वर्धा से अमरावती तथा सातारा 19—20 दिसम्बर 1989 को श्री बसंत हिरण्य के यहां आये और वहां भी श्री डी. एल. शर्मा जी सातारा पहुंचकर पूज्य गुरूजी के साथ सज्जनगढ़ समर्थ रामदासजी की समाधि होते हुए, कार द्वारा पूना के लिये रवाना हुए और 24 दिसम्बर 1989 को श्री पतकी जी के यहां पहुंचे, जिन्होंने मराठी अनुवाद दिव्याम्बु निमज्जन का किया है। 25—12—1989 को औरंगाबाद वापिस आकर गुरूजी मोरगांवकर साहब के यहां रूके और यहां पर पुष्पा दीदी (बाबूराव धर्माधिकारी की पुत्री) के नये मकान का उद्घाटन किया एवं श्री बसंत हिरण्य के प्लाट का भूमि पूजन भी निरंजन आश्रम के पीछे किया था।

श्री अनिल धर्माधिकारी के पिताजी श्री बाबूराव धर्माधिकारी एवं माता सौ. (विमला), माई के नाम से जिन्हें गुरूजी सम्बोधित करते थे उन्हें प्रणाम करके 15 दिन वहां निवास किया था। श्री राजू काण्णव ने बताया कि वहां भी उनसे कोई त्रुटि हो गई जिस कारण गुरूजी ने उन्हें बहुत डांटा तभी माई गुरूजी के पास आकर खटिया पर बैठ गईं और गुरूजी की पीठ पर हाथ फेरकर कहने लगीं—राजू अभी बच्चा है और अपने मां बाप को छोड़कर आपके साथ इतनी दूर आया है और डाँटने पर वह रोने लगेगा। बाद में चाय पानी हुआ और गुरूजी ने राजू को अपने पास बुलाकर कहा ''जो मेरा है उसी को मैं डाँटता हूँ।''

अगर हम दोष देखेंगे तो दोषी हो जायेंगे।
अगर गुण की तरफ हम जायेंगे तो सदगुणी होंगे। ये सिद्धांत है।
''श्री सद्गुरू जी (पं.वा.रा. तिवारी)

ऋतम्भरा—प्रज्ञा से युक्त हमारे पूज्य गुरूजी शास्त्रीय संगीत के प्रकाण्ड पंडित रहे हैं जिनसे अनेकों शिष्यों ने संगीत के गूढ़ रहस्यों एवं संगीत की बारीकियों को गुरूमुख से समझा और सीखा। श्री कुपटकर को सितार वादन में ''छत्तीसगढ़ रत्न'' की उपाधि से नवाजा गया, जिसका सम्पूर्ण श्रेय पूज्य गुरूवर का है।

गुरूजी नाट्य—शास्त्र के पंडित रहे हैं इसी कारण लम्बे समय तक रामायण मंडली में रहे और नाट्य विद्या के दुर्लभ ज्ञान का लाभ श्री कुपटकर जी को दिया, जिससे उन्होंने रंगमंच में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की।

गुरूजी मल्ल विद्या (कुश्ती) के ज्ञाता और उसमें इतने प्रवीण रहे हैं कि बिलासपुर प्रवास के दौरान स्वर्गीय श्री ठाकरे जी के निवास पर अपने शिष्यों को विशेषकर श्री कुपटकर एवं स्वर्गीय हनुमान प्रसाद जी से न केवल इसकी चर्चा अपितु नाना प्रकार के कुश्ती के दांव—पेंच स्वयं करके व शिष्यों से करवाकर अचंभित किया करते थे। गुरूजी की भारतीय अखाड़ा की जानकारी सराहनीय थी।

मंत्र—तंत्र विद्या के आचार्य गुरूजी दक्षिण मार्ग व वाम मार्ग की दुर्लभ साधनाओं के बारे में बताया करते थे। हम सभी ब्रह्म विद्या जो शुद्ध साधना होती है उसी के साधक हैं।

वाम मार्गी साधना के एक साधक भुलऊ महाराज अपनी पीड़ा से मुक्ति पाने बद—हवास अवस्था में और भूत—पिशाच बाधा से परेशान होकर श्री लक्ष्मी प्रसाद जी के निवास पर पहुंचे, जहां श्री कुपटकर भी मौजूद थे। उनकी हालत पर तरस खाकर पूज्य गुरूजी ने भुलऊ महाराज को आज्ञा

चक्र पर ध्यान केन्द्रित कराकर उनके मेरूदण्ड पर मंत्रोच्चारण करते हुए तीन बार हाथ फेरा और सभी बाधाओं से उन्हें मुक्ति दिला दी, जो गुरूजी में व्याप्त ब्रह्म विद्या का चमत्कार था।

ब्रह्म विद्या की अनेक विधियां गुरूजी को ज्ञात थीं और दीक्षा देते समय साधक की क्षमता के अनुसार उपयुक्त साधना विधि व गुरू मंत्र प्रदान किया करते थे। पूज्य गुरूजी जैन धर्म, हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, धर्मावलम्बी को उनके धर्मानुसार दीक्षा देते थे, जो हर धर्म की गहराई से जानकारी होने का प्रमाण देती है।

गुरूजी ज्योतिषाचार्य और भविष्य वक्ता रहे हैं जो कि प्रायः सभी शिष्यों के अनुभव में आया है और अपने अनुभवों में शिष्य परिवार के सदस्यों ने इसका उल्लेख भी किया है। गुरूजी के 1983 में मुंगेली आश्रम में विराजमान होने के पूर्व ऐसी अनेकों घटनायें हैं जो अभी तक प्रकाश में नहीं आई हैं। श्री कुपटकर जी के बहनोई श्री जी.डी. मोहगांवकर और सौ. सुचित्रा जो गुरू परिवार के सदस्य भी रहे हैं। मेडिकल साइंस ने उन्हें संतान योग से विमुख बताया था, परन्तु गुरूजी द्वारा दिया गया प्रसाद खाने पर उन्हें संतान प्राप्ति का सौभाग्य मिला था। श्री कुपटकर जी के बच्चों के बारे में जो भविष्य वाणी गुरूजी ने की थी वह अद्वितीय और चमत्कारिक थी। आयुर्वेद में चयनित छात्र का आश्चर्यजनक रूप से एम. डी. मेडिसिन बन जाना इसका प्रमाण है।

गुरूजी उत्कृष्ट भाषाविद् – गुरूजी उच्च कोटि के भाषाविद् रहे। अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, संस्कृत भाषा पर उनका प्रभुत्व था और विदेशी भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था। अनजान विदेशी भाषाओं के प्रसारण सुनते उनके शिष्यों ने उन्हें देखा है। श्री के. के. द्विवेदी के सुपुत्र डॉ. गिरीश

द्विवेदी को उन्होंने बताया कि शब्दों का चयन भली भांति करना चाहिये क्योंकि एक शब्द के अनेकों अर्थ होते हैं। उच्च कोटि के व्याकरणाचार्य पूज्य गुरूजी से व्यंकटेश मन्दिर बिलासपुर के प्रमुख, संस्कृत भाषा के व्याकरण पक्ष के बारे में चर्चा अक्सर, काले साहब के घर तिलक नगर में आकर करते थे।

अलौकिक आयुर्वेदिक और होम्योपैथिक चिकित्सक के रूप में उन्हें हम सभी जानते हैं। उनका आयुर्वेदिक चिकित्सा का पंजीयन क्रमांक–2038 था और इस क्षेत्र में उनकी अतुलनीय सेवायें तथा तेल्हरा का लम्बा जीवन हम पूर्व में पढ़ चुके हैं।

अन्य धर्मावलम्बी – गुरूजी से मुलाकात के बाद श्री ए.के. कुरियन का उनसे सानिध्य बढ़ता गया। वे गुरूजी से दीक्षित होकर बाईबिल (ओल्ड एवं न्यू टेस्टामेन्ट) ग्रंथ लेकर गुरूजी से आध्यात्मिक चर्चा किया करते थे। बाईबिल में दिये गये श्लोकों पर गुरूजी विस्तार से टीका करते समय आश्चर्य में डाल देते थे कि यह गीता के श्लोकों की टीका है अथवा बाईबिल के श्लोकों की। बाईबिल में गीता और गीता में बाइबिल का आध्यात्म चिन्तन दोनों महान ग्रंथों के दर्शन में एक अद्भुत साम्य दर्शाता है।

श्री कुरियन का आध्यात्म की ओर बढ़ता रूझान और सन्निकटता ने उनकी पत्नी को अत्याधिक तनावग्रस्त कर दिया था और उन्हें आशंका होने लगी कि उनके पति को षड्यंत्रपूर्वक हिन्दू बनाया जा रहा है। उन्होंने आक्रामक रूख अपनाते हुए पूज्य गुरूजी से मिलने की हठधर्मिता दर्शायी और गुरूजी से सहमति पाकर डॉ. देवरस के निवास तिलक नगर बिलासपुर में मिलने आईं। पूज्य गुरूजी पर नाना प्रकार से आरोप श्रीमती

कुरियन ने लगाये, जिसे पूज्य गुरूजी शांत चित्त से सुनते रहे और अंत में गुरूजी ने शांति के साथ क्रिश्चियन धर्म और बाईबिल पर सारगर्भित रहस्यों का प्रकटीकरण करते हुए श्री कुरियन को बाइबिल आधारित योग दीक्षा की बात बताते हुए श्रीमती कुरियन को शांत एवं आश्वस्त करके संतुष्ट किया और आक्रामक तेवर का कड़वा प्रसंग एक सौहार्द्रपूर्ण भेंट में परिवर्तित हो गया और गुरूजी की सौम्यता, सादगी और विद्वता पूर्ण चर्चा ने उन्हें कायल कर दिया।

श्री कुपटकर के मित्र श्री हिदायत अली कमलाकर जो हिन्दू धर्म के प्रति रूझान रखते थे और नियमबद्ध नमाजी भी थे। वे पूज्य गुरूवर से मिलने की हार्दिक इच्छा रखते थे। अतः 1980–81 में ठाकरे जी के यहां उन्हें मिलाने ले गये। श्री अली साहब ने आदाब बजाते हुए आध्यात्म में रूचि दिखाई। उन्होंने कुरान शरीफ की कुछ आयतों को गुरूजी को सुनाते हुए उनका तर्जुमा चाहा।

परमपूज्य गुरूजी ने अनजान अजनबी भाषा में धारा प्रवाह प्रवचन दिया जिसे सुनकर सभी अवाक् थे। हिदायत अली साहब के नेत्रों से वेग सहित अश्रुपात शुरू हो गया और वे पूज्य गुरूजी के चरणों से लिपटकर सिसकने लगे। बड़ा ही भावपूर्ण मंजर था। हिदायत अली साहब ने बताया कि गुरूजी विशेष प्रकार की अरबी भाषा में बोल रहे हैं जो कुरान शरीफ के लिये पुराने समय में बोली जाती थी। गुरूजी ने बड़ी दृढ़ता से कहा कि नमाज अदा करने हेतु पांच वक्त नहीं चाहिये, एक लम्हे में नमाज पूरी हो जावे, बस वह एक लम्हा चाहिये।

दीपावली 1975 के शुभ अवसर पर गुरूजी की महती कृपा से श्री रघुनाथ दामोदर कुपटकर जी को नाद योग में दीक्षित करके जो दिव्यानुभूति हुई वह आज और आनेवाली पीढ़ियों के लिये एक बहुमूल्य जानकारी के साथ नाद योग की बारीकियों का विश्लेषण तथा जिज्ञासु साधकों को अन्यत्र अप्राप्य पथ प्रदर्शन हेतु यहां उल्लेख किया जा रहा है।

जैसे जैसे नाद साधना अर्न्तमुखी होती गयी, प्रगति परिलक्षित होती गयी। क्रमशः चक्रों का भेदन करती हुई कुण्डलिनी के रूप में रहने वाली प्राण शक्ति सहस्त्रार की ओर बढ़ती गयी। प्रत्येक चक्र का भेदन अपने आप में एक विलक्षण अनुभव रहा।

नादयोग विस्तार से जानकारी :–

नाद दो प्रकार के हैं :–

1. आहत – जो आघात कर पैदा होता है।
2. अनाहत – जो स्वमेव उत्पन्न होता है।

अनाहत नाद–विस्तार से :–

1. चिण नाद 2. चिंचिण नाद, 3. घण्टा, 4. शंखनाद, 5. तंत्रीनाद, 6. करताल नाद, 7. बांसुरी नाद, 8. मृदंग नाद, 9. भेरी नाद, 10. मेघनाद, ये अनाहत नाद के प्रकार हैं।

नाद श्रवण के फल :–

1. सबसे पहले चिण नाद सुनाई देने से साधक के शरीर में झनझनाहट होती है।
2. चिंचिण नाद के उत्पत्ति से साधक को उसके शरीर टूटने का अनुभव होता है।

3. घण्टा नाद सुनाई पड़ने से साधक को बहुत पसीना आता है।
4. शंखनाद के श्रवण से मस्तक में कंपन पैदा होता है।
5. तंत्री नाद सुनाई देने पर साधक के तालू से अमृत टपकने की अनुभूति होती है।
6. करताल नाद की ध्वनि सुनने से अमृत के आस्वादन की अनुभूति होती हैं
7. बांसुरी की ध्वनि पैदा होने पर गूढ़ विषयों का ज्ञान साधक को होता है।
8. आठवें मृदंग नाद की उत्पत्ति होने पर साधक को परावाणी का ज्ञान होकर उसे वाक्सिद्धि मिलती है।.
9. नौवें भेरी नाद के श्रवण से शरीर की सुंदरता अदृश्य सिद्धि व आवरण रहित दिव्यदृष्टि प्राप्त होती है।
10. दसवें क्रम में नाद योगी को मेघनाद सुनाई देता है, जिससे साधक समाधि में ब्रह्म से एकता प्राप्त कर ब्रह्मरूप होता है।

लययोग की क्रिया :–

साधक की नाड़ी शुद्धि होने पर उसे अनाहत नाद सुनाई देने लगता है। नादानुसंधान के दौरान साधक का मन जिस समय आकाश तत्व में स्थित होता है उस समय सूक्ष्म आकाश से नाद प्रवर्तित होता है। जब प्राण ब्रह्म रन्ध्र में जाता है उस समय मेघ और शंख ध्वनि सुनाई पड़ती है। इसके फलस्वरूप घण्टों सरीखा महाप्रचण्ड नाद पैदा होता है। इस नादानुसंधान से चित्त की एकाग्रता होती है।

साधना के दौरान समुद्र की लहरों का तट पर जोरों से पटकना, मेघ गर्जना, झरने से जल का मंद ध्वनि के साथ गिरना, जल प्रपात की आवाज अनाहत नाद के रूप में सुनाई पड़ती है। जलती अग्नि की

ज्वालाओं का नाद, भेरी, दुदुंभी, मृदंग, शंख, घण्टा, वीणा, बांसुरी, नगाड़ा, इत्यादि नाना प्रकार के वाद्यों का असंख्य नाद सुनाई पड़ता है। बैल, मोर, भंवरा, मधुमक्खी इत्यादि पशु पक्षियों की आवाज अनाहत नाद के रूप में सुनाई पड़ती है। कई बार जप, मंत्र, श्लोक, भजन भी सुनने में आता है। इन नादों की ओर मन आकृष्ट होता जाता है और धीरे–धीरे लय होते हुए ब्रह्मभाव की उत्पत्ति होकर ब्रह्मानंद की प्राप्ति होती है।

नाद की उत्पत्ति :–

कुण्डलिनी के रूप में सूक्ष्म प्राणशक्ति में से नाद की उत्पत्ति होती है। नादयोगी इस नाद की सहायता से नाद के विश्वरूप अवस्था का दर्शन करते हैं। नाद के इस स्वरूप को पश्यंति नाद कहते हैं।

मेघ रूप में गर्जना करने वाला नाद जो हृदय में व्यक्त होता है उसे मध्यमा कहते हैं। प्राणवायु के कारण कण्ठ से जो स्वर या शब्द ध्वनिरूप बाहर निकलती है, उसे वैखरी कहते हैं। जागृत (स्थूल), स्वप्न (सूक्ष्म), सुषुप्ति (कारण) व तुरीय, ये आत्मा की चार अवस्थायें होती हैं, उसी प्रकार नाद की भी चार अवस्थायें हैं। 1. परा, 2. पश्यंति, 3. मध्यमा, 4. वैखरी, ऐसी अवस्थायें हैं। मूलाधार में बिन्दु रूप से पराशक्ति कुण्डलिनी होती है, उसे ही परा ऐसा कहा जाता है। यह परानाद की तुरीय अवस्था है। इसके आगे नाद जब स्वाधिष्ठान में उपस्थित होता है तब उसकी इस स्थिति को पश्यन्ति ऐसा कहते हैं। यह पश्यन्ति नाद की सुषुप्ति या कारणावस्था है। जब यह नाद हृदय तक पहुंचता है तब उसे मध्यमा कहते हैं। यह नाद की स्वप्न या सूक्ष्मावस्था है। अंत में नाद जब कण्ठ में पहुंचता है तब स्पष्ट शब्द रूप से उच्चारण होता है, इसे वैखरी कहते हैं। वैखरी ही नाद की जागृत या स्थूलावस्था है। मध्यमा नाद को अनाहत नाद भी कहते हैं, क्योंकि यह हृदय प्रदेश में किसी भी प्रकार के आघात के बिना पैदा होता

है। नाद योग की प्रगति की पराकाष्ठा में ही साधक को परा व पश्यन्ति नाद सुनाई पड़ता है। योग मार्ग में आगे बढ़ने वाले साधक को मध्यमा अवस्था के अनुभव आते हैं अर्थात् अनाहत नाद सुनाई पड़ता है।

नाद योग की अभ्यास विधि :—

1. नादानुसंधान के अभ्यास में प्रातःकाल शांत चित्त से बैठकर आसपास होने वाली ध्वनियों पर जैसे मंदिर में बजने वाली घण्टी, बैलगाड़ी चलते समय बैलों के गले में बंधे घुंघरूओं की आवाज, पशु पक्षियों द्वारा की जाने वाली ध्वनियों पर अपना ध्यान केन्द्रित करें। किसी एक ध्वनि पर तब तक ध्यान केन्द्रित कर उसका दूर जाते तक पीछा करें। जब यह ध्वनि सुनाई देना बंद हो जाये तो दूसरी लगातार सुनाई देने वाली आवाज पर ध्यान केन्द्रित करें, तब तक जब तक सुनाई देना बन्द हो जाये। अभ्यास की यह प्रक्रिया बारम्बार निश्चित समय के लिये प्रतिदिन किया करें।
2. एकांत में घड़ी की टिक टिक, हृदय की धड़कन झिंगुर की आवाज पर ध्यान केन्द्रित कर अभ्यास करें।
3. इस तरह के अभ्यास के बाद नाद पर एकाग्रता बढ़ती जाती है। इस अभ्यास की परिपक्वता के बाद भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास नियमित किया जाना चाहिए। नाद योग में प्रगति के लिए यह प्राणायाम अति महत्वपूर्ण होता है।
4. उपर्युक्त प्रक्रिया के अन्तर्गत आहत नाद का सहारा लिया जाता है।
5. अगले चरण में आहत से अनाहत नाद की तरफ नादानुसंधान किया जाना चाहिए। इसके लिए शांत चित्त से बैठकर दोनों कान अच्छे से बंद कर शरीर के भीतर पैदा होने वाली आवाज पर ध्यान केन्द्रित करने का सतत अभ्यास चालू रखना चाहिए।

6. नाद योग के नियमित अभ्यास के प्रति साधक की प्रतिबद्धता ही इस क्षेत्र में प्रगति का सोपान मानी जाती है।

नाद योगाभ्यास में सावधानियां :—

1. वाम मार्ग के लिए साधक अपने बांये कान में सुनाई देने वाली ध्वनियों पर ध्यान केन्द्रित कर साधना करते हैं। इस प्रकार की साधना ब्रह्मविद्या के साधकों को उचित नहीं है। साधना पद्धति में जरा सी भी चूक होने पर शारीरिक/मानसिक व्याधियों का शिकार होना पड़ता है।
2. ब्रह्मविद्या के साधक जो नाद योग के माध्यम से योगाभ्यास करते हैं, उन्हें दाहिने कान से सुनाई देने वाली ध्वनियों पर ध्यान केन्द्रित कर साधना की जाती है। यही दक्षिण मार्ग की नाद साधना होती है।
3. सद्गुरू द्वारा बताये गये विधि में जरा भी चूक हो जाये तो साधक को बहुत कष्ट झेलने पड़ जाते हैं। इस संदर्भ में मैं कहना चाहूंगा कि गुरूजी ने हमें स्पष्ट निद्रेश दिए थे कि भूल से भी बांये कान से सुनाई देने वाले अनाहत नाद पर कभी भी ध्यान केन्द्रित मत करना, क्योंकि साधना में दिशा भंग होकर कब वाम मार्गी साधक बन जावोगे, पता भी नहीं चलेगा और नुकसान हो जायेगा और हुआ वही, जिसका डर था। अनजाने में नादानुसंधान के दौरान बायें कान से आने वाली ध्वनियों पर मन खिंचता गया। इस तरह दिशाभूल हुई, जिसका दुष्परिणाम हमें भोगना पड़ा। मानसिक अन्तर्द्वन्द बढ़ गया तथा कार्डियो वेसकुलर डिसऑर्डर का शिकार हो गया। गुरूजी के समक्ष जब यह भूल लाई गई तो उन्होंने महती कृपा कर हमें इससे उबारा। बहुत करीब से मृत्यु गुजर गई।

अब तो जीवन भर दवाईयों से उस पर नियंत्रण रखना जरूरी हो गया।

4. नाद योग की साधना में भ्रामरी प्राणायाम तथा शास्त्रीय संगीत का पर्याप्त ज्ञान बहुत सहायक होता है। ऐसे जानकार साधकों की प्रगति जल्द होती है।

5. बांये कान की अनाहत ध्वनियों पर ध्यान केन्द्रित कर योग मार्ग में आगे बढ़ने वाले साधक वाम मार्ग के साधक कहलाते हैं। इस साधना से कर्ण पिशाचिनी सिद्धि भी साधक को मिलती है जो उसे मायामोह के भ्रमजाल में फंसाकर तबाह कर देती है।

6. नाद योग की साधना में साधक ज्यों ज्यों डूबता जाता है त्यों त्यों वह समाज के लिए परिवार के लिए निष्क्रिय होता जाता है।

''नादयोग'' का अभ्यास, साधक गुरूजी के समर्थ मार्गदर्शन में ही कर सकता है। अतः ऊपर वर्णित सावधानियों का ध्यान रखना साधक के लिये अनिवार्य है।

योग साधना के संबंध में श्री ठाकरे जी के निवास पर गुरूजी ने कहा था।

समाधि — ''सम्यक् अधीयते यत्र स समाधि'' बुद्धि का आत्मा में लीन हो जाना ही समाधि है।

आत्म साक्षात्कार निरोध (मौन हो जाना), समाधि के योग से बुद्धि सूक्ष्म होती है और बुद्धि की सूक्ष्मता की सीमा ही आत्म साक्षात्कार है।

मूलाधार इस चक्र में जो त्रिकोण साधक को साधना के दौरान दिखता है वह है 1. इच्छा, 2. क्रिया, 3. ज्ञान।

सहस्त्रार इसमें जो त्रिकोण दिखता है वह है 1. ब्राह्मी विचार, ब्राह्मी शक्ति, 3. ब्राह्मी कला।

मोक्ष योगः साधनानुष्ठान—निरूपण लक्षणम् योगः।

मोह का सम्पूर्णतः क्षय हो जाना।

साधक के प्रकार

1. **आत्मरति** जो अपने ही आप में मस्त रहता है।
2. **आत्मक्रीड़ः** जो अन्य लोगों को साथ लेकर कार्य करता है।

परमपूज्य गुरूजी अवस्था की निम्नानुसार व्याख्या किया करते थे—

उत्तमा सहजावस्था।
मध्यमा ध्यान धारणा।
कनिष्ठा मूर्ति पूजा च।
तीर्थ यात्रा धमा धमा।।

चिन्ता की व्याख्या इस प्रकार करते थे :—

उत्तमा तत्वचिंतावस्यात।
जप चिंता च मध्यमा।
शास्त्र चिंता स्यात् अधमा।
लोक चिंता धमा धमा।

परमपूज्य गुरूजी साधक को उसकी साधना के प्रगति व स्तर को ध्यान में रखकर निम्न प्रकार से आशीर्वाद दिया करते थे :—

4 अनाहत—ब्रह्मविद भव।
5 विशुद्धि—ब्रह्मविदवर भव।
6 आशा—ब्रह्म विदवरियान भव।
7 सहस्त्रार — ब्रह्म विद वरिष्ठ भव।

परमपूज्य गुरूजी साधकों को सभी प्रकार के कष्टों के निराकरण हेतु 1/3/5/7 की संख्या में रामायण के निम्न दोहे का एकाग्र चित्त से दोहराने की सलाह दिया करते थे—

''दैहिक दैविक भौतिक तापा।

रामराज्य नहि काहुई व्यापा''।।

यह उनके अनुसार रामबाण उपाय है।

उपासना के अनुसार परमपूज्य गुरूजी ने साधक के मुक्ति के निम्न प्रकार से व्याख्या दी थी :–

1. **सालोक्यमुक्ति** – भगवान के परमधाम में जाकर निवास करने को ''सालोक्यमुक्ति'' कहते हैं। वात्सल्य आदिभाव से भगवान की जो उपासना करते हैं वे सालोक्य मुक्ति पाते हैं।
2. **सामीप्यमुक्ति** – भगवान के परमधाम में जाकर उनके समीप निवास करने को ''सामीप्यमुक्ति'' कहते हैं। जो दासभाव से या माधुर्यभाव से भगवान की उपासना करते हैं वे सामीप्य मुक्ति को प्राप्त होते हैं।
3. **सारूप्य मुक्ति** – भगवान के परमधाम में जाकर भगवान के जैसे स्वरूप वाले होकर निवास करने को सारूप्य मुक्ति कहते हैं। जो सखाभाव से भगवान की उपासना करते हैं वे सारूप्य मुक्ति पाते हैं।
4. **सायुज्य मुक्ति** – भगवान के स्वरूप में अभेद रूप से विलीन हो जाने को सायुज्य मुक्ति कहते हैं।

जो शान्त भाव से (ज्ञान मिश्रित भक्ति से) भगवान की उपासना करते हैं तथा जो बैर से, द्वेष से अथवा भय से भगवान को भजते हैं वे भी सायुज्य मुक्ति को पाते हैं।

परमपूज्य गुरूजी ने योग के चार प्रकार बताये हैं :–

1. भक्ति योग–भावना प्रधान
2. हठ योग–प्राण प्रधान।
3. ज्ञान योग–बुद्धि प्रधान।
4. सिद्धयोग–कुंडलिनी प्रधान।

साधक के गुण–दोष :–

1. गुरूजी हमेशा कहा करते थे कि साधक को मान रहित, मोह रहित होकर साधना करना चाहिए। किन्तु देखने में यही आता है कि कुछ साधक गुरूजी के इन निर्देशों को बहुत हल्के से लेते हैं। यह दोष है। साधक अपनी साधना का डिंडोरा पीटने से बाज नहीं आते। इस दोष के कारण वह जहां तहां अपने आपको साधक के रूप में मित्रों–परिचितों के बीच पहचान बनाता है और उनके द्वारा प्रशंसा किये जाने पर फूल कर कुप्पा हो जाता है। इस मान की चाहत ही उसकी साधना को कुप्रभावित करती है, वह झूठे मान और अहं में डूब जाता है।
2. साधना पथ पर आगे बढ़ने वाले निष्ठावान साधक का ध्यान भंग करने का एवं उसे मार्गच्युत करने का हर प्रयास विभिन्न प्रकार की सिद्धियां करती रहती हैं। जहां साधक का ध्यान बंटा, तो वह सिद्धियों के पीछे भागने लगता है और अपने लक्ष्य से भटक जाता है। साधक को किसी भी परिस्थिति में प्राप्त सिद्धियों को प्रगट नहीं करना चाहिए और न ही उनका चिंतन ध्यान करना चाहिए, अन्यथा ये सिद्धियां साधक को झूठे मान सम्मान व अर्थाजन के मायाजाल में उलझाकर उसे पतित कर देती हैं।

3. गृहस्थ साधक को साधना में अतिरेक नहीं होने देना चाहिए। गुरूजी ने हमसे कहा था—साधना का नशा उतना ही करना चाहिए, जितना तुम्हारा तन—मन बर्दाश्त कर सकता है। नशे की अधिकता से साधक विचलित हो जाता है। स्वयं को सम्हाल नहीं पाता। लड़खड़ाते कदमों से लक्ष्य तक पहुंचना असंभव है।

अतिरेक गृहस्थ को सांसारिक उत्तरदायित्व, पारिवारिक उत्तरदायित्व निभाने में अक्षम बना देता है। लक्ष्य पर पहुंचने की जल्द बाजी ठीक नहीं। साधक को अपने लक्ष्य पर पहुंचने में कितना समय लगेगा, यह सिर्फ और सिर्फ परमपूज्य गुरूजी ही जानते हैं, साधक नहीं। सब गुरूजी पर छोड़कर निश्‍चिंत हो जावो, यह श्रेयस्कर मार्ग है।

1989—1990 में पूज्य गुरूजी ने बाबा तकवाले के साथ एक आश्रम वर्धा में बनाने की योजना बनाकर क्रियान्वित किया था। अनेकों शिष्य जो वर्धा और उसके आसपास के क्षेत्रों में रहते थे, उनको समर्थ मार्गदर्शन हेतु इस आश्रम की स्थापना की गई। वर्धा के पास कार्ला रोड पर निर्माण की योजना बनी थी ओर श्री वासुदेव योग प्रतिष्ठान, वर्धा के लिए गुरूजी ने बाबा तकवाले को अध्यक्ष मनोनीत किया था।

इस आश्रम के भवन का एक हिस्सा परम पूज्य गुरूदेव का निवास स्थान था। संकल्पित आश्रम भवन की प्रतिकृति श्री गुरू पूजन समारोह के साथ अवलोकनार्थ गुरू पूजा के समय 1991 में रखी गई थी। यह नागपुर के अन्तर—राष्ट्रीय ख्याति के वास्तु शिल्पी श्री जोशी जी की कृति है, तथा सौन्दर्य उष्णतावरोध, ध्वनि शास्त्र प्रकाश प्रसारण आदि विशेषताओं से परिपूर्ण है। इस सद्‍गुरू निवास की ऊंचाई 24 फिट है। इसकी दीवारों में प्रति 4 इंच जुड़ाई के बाद खड़े अवकाश स्तम्भ बने हैं। इसका आवासीय हिस्सा जमीन से 8 फिट की उंचाई से शुरू होता है।

पूज्य गुरूजी ने अपने शिष्यों को इस आश्रम के पास की जमीन खरीदने का सुझाव दिया था ताकि भविष्य में वहां रहवासी काटेज का निर्माण करके जिज्ञासुओं को गुरू सानिध्य में साधनारत होने का सुअवसर प्राप्त हो सके। आदरणीय शिन्दे साहब जिन्हें हम आदर के साथ बुआ साहब कहते हैं साथ ही श्री खोत साहब एवं पूज्यवर के अभिन्न शिष्य श्री ओ.पी. शर्मा साहब एवं श्री आर.के. दुबे साहब ने भी एक एक प्लाट गुरूजी के आदेश से क्रय किया था।

1991 में लगभग यह आश्रम बनकर तैयार था, जिसकी देखरेख एवं व्यवस्था स्वर्गीय श्री जितेन्द्र दीवान ने वहां रहकर संभाल ली थी। श्री दीवान जी 2–3 वर्ष इस आश्रम की व्यवस्थाओं का कार्यभार संभालते रहे।

गुरूजी का गिरता स्वास्थय तथा अनेकों कारणों से पूज्य गुरूजी आश्रम में निवास हेतु नहीं जा सके और अनेकों अन्य कारणों से प्रस्तावित शिष्यों के प्लाट पर भी निर्माण शुरू नहीं हो सका। गुरूजी अपने जीवन दर्शन के अनुरूप शिष्यों के पास जाकर भ्रमण करते रहे और उन्हें जगाने–मार्गदर्शन के कार्य में पूर्ववत् संलग्न रहे। शिष्यों की अनेकों व्याधियों को अपने में समेटकर अपने परिवार का कल्याण करते रहे।

1987 जुलाई 23 बिलासपुर में गुरू पर्व का आयोजन था। गोंदिया के भाई राजेन्द्र कुमार जी द्वारा परम आदरणीय सद्गुरू श्री वासुदेव रामेश्वर तिवारी जी से हमारे परिवार के सभी सदस्यों को दीक्षा लेने और गुरू पर्व में शामिल होने का न्यौता मिला। 22 जुलाई 87 को दोपहर में गुरु जी से दीक्षा हेतु निवेदन के लिये हम सभी डॉ. गिरीश पांडे के घर पहुंचे जहां गुरु जी विराजमान थे। मन में उनके दर्शनों को लेकर बड़ी उत्सुकता और कौतूहल था और जब साक्षात्कार हुआ तो दिव्यता की पराकाष्ठा पर स्थित इस दिव्य आत्मा को देखकर लगा कि हमने अपने मानव जीवन की सार्थकता को पा लिया है। मन ही मन एक ही प्रार्थना चल रही थी कि यह दिव्य आत्मा हमें स्वीकार कर अपना आशीष हमें दीक्षित करने की स्वीकृति के रूप में दे दें। हमारी विनती स्वीकार होते ही हम धन्य होकर शाम को सपरिवार दीक्षा लेने पहुंचे। उस समय गुरु जी डॉ. परिवार के साथ भोजन कर रहे थे और विनोदमय वार्तालाप चल रहा था। तब मन में एक साध आई कि क्या कभी जीवन में हमें भी ऐसा सामीप्य इस भव्य आत्मा का मिल सकेगा?

अर्न्तमन की यह पुकार गुरूजी तक पहुंच गई और हमें वह सब इतने शीघ्र मिला जिसकी हमने कभी कल्पना भी नहीं की थी। दीक्षा के तुरंत बाद हमें गुरूजी के साथ बैठकर खाना खाने के अनेकों अवसर डॉ. शिन्दे दम्पत्ति के घर पर भोपाल में मिले। एक बार तो मन में आया कि गुरूजी भोजन करते समय अपनी थाली से कुछ प्रसाद हमें दे दें और कुछ ही देर बाद हमारी सबसे प्रिय मटर की सब्जी थोड़ी सी खाने के बाद

अपनी कटोरी को हमारी थाली में गुरूजी ने रख दिया। हम गुरूजी के बगल में ही बैठकर खाना खा रहे थे और इस बात से अवाक् थे कि पूज्य गुरूजी अन्दर की आवाज को सुन लेते हैं। तब से हम इस बात के लिये काफी सजग और सतर्क रहने लगे कि गुरूजी हमारे अन्तर्मन में क्या चल रहा है–यह सब जानते हैं। यह बात अनेकों बार अनेकों अवसरों पर प्रायः सभी शिष्यों ने अनुभव की है जो गुरूवर का सर्वज्ञ होना प्रमाणित करती है।

परम श्रद्धेय सद्गुरू ने हमें हमारी पत्नी श्रीमती मणी, बेटी मीनू और बेटा राजू को दीक्षा देकर अपना अंश बनाकर धन्य कर दिया। हम सभी के जीवन का यह अमूल्य पल दिव्यत्व की पराकाष्ठा पर पहुंचने में सहायक होगा, जिसके लिये हम सभी राजेन्द्र जी के भी ऋणी और कृतज्ञ रहेंगे। 23 जुलाई 87 का पर्व आनन्द मंगल में मनाकर गुरूदेव का आशीष लेकर विदा हुये और गुरूदेव के आदेशानुसार पत्रों द्वारा सम्पर्क स्थापित करते रहे।

23–07–1988 का पर्व बालाघाट में मनाया गया जहां हमें गुरूजी के दर्शन का लाभ मिला। गुरू जी के आदेशानुसार हम उनसे पत्र व्यवहार करते रहे, उनके कार्यक्रम की जानकारी पत्रों से मिलती रही और मार्च 1989 में हम उनका आशीष लेने ग्वालियर गये।

1989 वर्षा काल में हम अपनी पत्नी सहित मेडिकल कॉलेज भोपाल में लगभग 1.30 बजे दोपहर में डॉ. सईदा शिन्दे दीदी के घर गये जहां गुरू जी सागर से श्री डी.एस. राय के साथ आये थे। लगभग 2 घंटे हम दीदी के क्वार्टर पर सीढ़ियों पर बैठे रहे और हमारी हिम्मत अन्दर जाने की नहीं हुई। करीब 4 बजे शाम को हमने अन्दर जाकर गुरू जी के दर्शन

किये। शाम को राय साहब आये और गुरूजी को लेकर सागर जाने लगे। घनघोर बरसात हो रही थी और एक पुरानी कार से गुरूजी जा रहे थे। तब मन में अनेकों प्रश्न आये। मन में आया कि काश! हम आर्थिक रूप से सम्पन्न होते तो गुरू जी को आज नई कार भेंट करते और यही वह क्षण भी था कि गुरू जी को नई कार देने हेतु मन में संकल्प लिया।

हमने डॉ. सईदा दीदी को अपना संकल्प बताया कि 1000/– रूपये प्रति सक्षम शिष्य से लेकर नये वर्ष में एक सरप्राईज देंगे। दीदी ने समझाया कि परम पूज्य से कुछ भी छिपा नहीं है और वे सब कुछ जानते हैं। पहले भी कार की योजनायें बनी हैं जो सफल नहीं हुईं। अतः उनकी आज्ञा हमें पहले लेना चाहिये। इसके 2–3 माह बाद जब गुरू जी डॉ. शिन्दे के पास रीवा में थे तब उनसे फोन पर अपनी योजना पर आशीष पाकर अतिशीघ्र इस संकल्प को पूरा करने का लक्ष्य बनाकर हम प्रयासरत हुए।

हमने एवं हमारी पत्नी मणी ने मिलकर अनेकों शिष्यों को सम्पर्क किया। हमें सभी शिष्यों का भरपूर सहयोग मिला तथा बीच बीच में गुरूजी द्वारा सफल होने का आशीष भी मिलता रहा। गुरूजी रीवा से पेन्ड्रा, मुंगेली होकर वर्धा पहुंचकर भोपाल दिसम्बर 1989 में आ गये थे। इस बीच हमारा सतत् सम्पर्क गुरूजी से पत्रों द्वारा बना हुआ था और पूज्यवर हमारी सफलता के लिये हमें स्नेहिल आशीष की वर्षा निरंतर करते रहे। लगभग 100 से उपर शिष्यों द्वारा हमें 1000/– रूपये प्रति शिष्य राशि मिली और अंत में वह दिन भी आ गया जब 1990 जनवरी माह में हम डॉ. सईदा दीदी के साथ गुरूजी का आशीष लेकर कार लेने गये तथा उसी दिन से हम गुरू जी की कार के ड्रायवर बनने का सौभाग्य पाकर धन्य

हो गये। अपने शिष्य का संकल्प पूरा कराने में जो भूमिका परम पूज्य की रही है वह वर्णन से परे है। निराशा मुझ पर हावी न हो इसके लिये गुरूजी से अनेकों पत्र मुंगेली–वर्धा–रीवा और टेलीफोन द्वारा भी हमें सफल होने का आशीष मिलता रहा। सहयोग राशि भेजते समय जो उद्गार हमें शिष्यों के पढ़ने को मिले उनसे गुरूदेव की विशालता और महानता का पता चलता है। अपने को सौभाग्यशाली मानने का गौरव भी शिष्यों ने माना। श्री झा साहब दुर्ग वालों ने लिखा था कि ''आपका पत्र आया तो देखा कि मेरे पास मात्र 1000/– रूपये हैं उसे भेजकर मैं (झा जी) अपने को धन्य मान रहा हूं।''

यह भी बताना आवश्यक है कि हमें गुरू परिवार के शिष्यों और उनकी आर्थिक क्षमताओं का ज्ञान नहीं था। अतः सक्षम शिष्यों से 1000/– रूपये प्रति शिष्य लेने का भाव जो मन में आया था वह भी पूज्य गुरूवर की ही देन थी, क्योंकि पूर्व में जब भी जिस किसी ने यह योजना बनाई थी वह सफल नहीं हुई थी। उस समय किसी शिष्य द्वारा 1000/– रूपये पूज्य गुरूजी के पास कार खरीदी के लिये जमा किये गये थे। इस योजना को कार्य रूप जब हम दे रहे थे और प्रति शिष्य 1000/– रूपये हमारे पास जमा करने आ रहा था, उस समय जब गुरूजी ने भी हमें अपने पुराने शिष्य श्री डी.एल. शर्मा द्वारा उनके पास जमा कराई गई राशि 1000/– रूपये दिये। राशि निर्धारण का कार्य पहले ही पूज्य गुरूजी द्वारा किया जा चुका था इसका प्रत्यक्ष प्रमाण श्री डी. एल. शर्मा द्वारा फरवरी–मार्च 1988 में जमा की गई उक्त राशि है, जो गुरूजी के पास थी।

गुरू जी का जन्म दिवस 1987 में बिलासपुर के बाद 1988 में बालाघाट 1989 में रीवा तथा 1990 में रायपुर में मनाया गया था। 22–23 अगस्त 1990 को मुंगेली पहुंचने का आदेश आगे की यात्राओं पर निकलने के लिये हमें मिला था और हम अपने पुत्र राजू सहित वहां गये थे। हमें पत्र द्वारा निरंतर पूज्य गुरू जी का आशीष फैक्ट्री संचालन हेतु भी मिलता रहा।

1988–89 में पूज्य गुरूजी जब इन्दौर में श्री भट्टजी वाले के यहां पर विराजमान थे, हम तथा भाई राजेन्द्र कुमार जी परिवार सहित उनके दर्शनों को गये थे और गुरू जी से इन्दौर के आसपास के जैन तीर्थों के दर्शनों को जाने की आज्ञा मांगी, जिस पर गुरूजी ''अच्छा'' कहकर मौन हो गये। थोड़ी दूर पहुंचने पर ही कार खराब हो गई और हम दूसरी कार का प्रबंध करके आगे बढ़े। कार खराब होना इस बात का संकेत था कि उस समय यह यात्रा आवश्यक नहीं थी।

सिद्धवरकूट से निकलकर ऊन सिद्धक्षेत्र जाते समय रास्ते में कार पंचर हो गई और हमारी विडम्बना थी कि हमें पहिया बदलना नहीं आता था। तभी हमारे मुंह से निकला गुरूजी अब क्या करें।

कार रोककर दूसरा पहिया निकाला ओर सोच रहे थे कि क्या करें, तभी एक दुबला पतला 20–25 साल का युवक जिसकी पोशाक से वह गांव का प्रतीत होता था क्योंकि घुटने तक की धोती–बन्डी और कन्धे पर सफेद थैला लटकाये था, आया और बोला–**''बाबूजी क्या हो गया–लाईये, मैं कार का पहिया बदल देता हूं।''** हम वैसे भी उलझन में थे क्योंकि हमें यह कार्य नहीं आता था और हमें उस युवक की बात का भरोसा नहीं था कि गांव का यह बालक कुछ मददगार हो सकता है।

उस युवक ने हमें परे हटाकर देखते देखते ही कार का पहिया बदल दिया और जाने लगा। मेरे मन में कुछ मेहनताना उसे देने की बात आई तथा हम लोगों ने उसका नाम पूछा जिसे उसने **'विट्ठल'** बताया और कहां के रहने वाले हैं, पूछने पर **'पंढरपुर'** बताया तथा आगे बढ़ने लगा। हम जब तक पैसे निकालते, करीब 10 गज दूर जाकर वह ओझल हो गया और हम तथा भाई राजेन्द्र जी के मुंह से निकला कि अरे! यह तो गुरूजी थे।

इसी यात्रा में आगे बड़वानी की 5 किलोमीटर की चढ़ाई चढ़ते समय कार का ब्रेक फेल होने के साथ हमारी मति भी भ्रष्ट हो गई और घाटी के टेढ़े मेड़े रास्ते पर ब्रेक और क्लच दोनों पर हमारे पैर जमे थे तथा कार पीछे की ओर लुढ़क रही थी। हम लगातार सभी गुरूजी को याद करते हुए असहाय होकर कार नीचे की तरफ लुढ़कते हुए देख रहे थे। तभी एकाएक एक गिट्टी के बड़े ढेर से कार टकराकर रूक गई, जिसके उस पार हजारों फुट गहरी खाई थी।

यह घाटी लगभग 5 किलोमीटर लम्बी है और हम करीब करीब पूरी घाटी की चढ़ाई चढ़कर पहुंचने वाले थे, तभी यह घटना घटी थी। हम सभी इस बात को लेकर कौतुहल में थे कि इस पूरे रास्ते में दूर दूर तक कोई भी अन्य गिट्टी का ढेर हम लोगों को नजर नहीं आ रहा था। कार को खाई में गिरने से बचाने के लिये यह गिट्टी का ढेर हम सभी की जीवन रक्षा के लिये कवच बन गया था। हम सभी हतप्रभ से कार से बाहर आये और हम सभी की प्राण रक्षा की बात सोचकर सभी एक दूसरे की ओर किंकर्तव्यविमूढ़ भाव लिये निहार रहे थे।

किसी तरह इन्दौर लौटकर पूज्य गुरूजी के पास गये। दूर से ही उन्होंने देखकर आवाज लगाई ''तीर्थयात्री आ गये हैं भाऊ'' (श्री भटजी वाले साहब को गुरूजी भाऊ बोलते थे), आईये और हमसे बोले–सारी रात आप लोगों ने सोने नहीं दिया। पूरा वृतांत गुरूजी का आदेश पाकर हमने सुनाया जिसे भटजीवाले परिवार के लोग भी सुन रहे थे। अंत में गुरूजी बोले ''**कारक को छोड़कर स्मारक पूजने गये थे।** हम सभी एक अपराधी की भांति उनके सामने हाजिर थे।

1988–89 में गुरूजी भोपाल में डॉ. शिन्दे के घर विराजमान थे। हम उनके पास रोजाना करीब 3 बजे जाते थे। कारखाने के टेक्निकल मेनेजर 65 वर्षीय श्री समरकुमार मित्रा ने हमसे पूछा, तुम रोजाना कारखाने से जल्दी क्यों चले जाते हो? हमने उन्हें बताया कि हमारे गुरूजी आये हुए हैं और हम उनके पास ही जाते हैं। उन्होंने गुरूजी के पास चलने की बात कही, साथ ही अन्य जानकारियां भी चाहीं। प्रमुखता के साथ वे जानना चाहते थे कि क्या गुरूजी को प्रणाम करना आवश्यक होगा। अनेक दुविधाओं के बीच वे रूक नहीं पाये, और गुरूजी को प्रणाम करना जरूरी नहीं होगा ऐसा मानकर, हमारे साथ गुरूजी के दर्शनार्थ गये।

डॉ. शिन्दे के यहां पहुंचकर एकाएक मित्रा जी उठे और गुरूजी के चरणों में वन्दना करने लगे और वापिस आकर बैठ गये। इस घटना के बाद गुरूजी रोजाना हमसे पूछते कि आपके मित्रा साहब क्या कह रहे थे? यही प्रश्न कारखाने में पहुंचने पर मित्रा साहब भी हमसे पूछते थे कि आपके गुरूजी कुछ कह रहे थे? अंततः मैंने मित्रा साहब से कहा कि लगातार 3 दिन से गुरूजी ऐसा क्यों पूछते हैं? तब हमें उन्होंने बताया कि

उनके स्वयं के एक गुरू हैं और वे आजकल विदेश में हैं और अन्य किसी भी गुरू को वे नमन नहीं करते।

मित्रा जी ने आगे बताया कि आपके गुरूजी को देखकर मैं रोक नहीं पाया और मन में विचार आया कि यदि ये वास्तव में एक सद्गुरू हैं तो मैं प्रणाम इन्हें करूंगा, पर दर्शन मुझे उनके चरणों में, अपने गुरू के होना चाहिये। जीवन! मैंने आपके गुरूचरणों में अपने गुरू के जो इस समय फ्रांस में हैं उनके दर्शन किये थे। यही वजह है कि गुरूजी आपसे पूछ रहे हें। धन्य हैं यह विभूति जो सर्वज्ञता की पराकाष्ठा है और सौभाग्यशाली हैं वे सभी जिन्हें उनका सामीप्य मिला है।

परम आदरणीय पूज्य गुरू जी के साथ कार द्वारा लम्बा सफर हमने किया। उनके सामीप्य में अनेकों अविस्मरणीय घटनायें घटीं हैं, जिनसे गुरू जी की दिव्यता और आध्यात्मिक पराकाष्ठा का ज्ञान हमें मिलता है। ये सभी घटनायें 1990 से 1997 के बीच की हैं और इसी काल में गुरू जी का स्वास्थ्य भी बिगड़ा है। क्योंकि गुरू जी ने अपने शिष्यों की पीड़ायें अपने में समेट ली थीं, ताकि उनके शिष्य स्वस्थ रहें। 1991 में गुरू जी का हीमोग्लोबिन काफी कम हो गया था और 1992 में 8.5 होने पर चिन्ता जनक स्थिति बन गई थी। 1991 में वर्धा में गुरू पर्व धूमधाम से मनाया गया था और 1992 में ग्वालियर में यह पर्व सम्पूर्ण गरिमा सहित मनाया गया।

1991 तथा 1992 में स्वास्थ्य की दृष्टि से गुरूजी की हालत गंभीर होते हुए भी सदैव आनंदित और प्रसन्नचित्त रहते हुए शिष्यों को आशीष और नये शिष्यों को दीक्षा देते रहे। हीमोग्लोबिन 8.5 ग्राम होने पर भी पूज्य गुरूजी की आवाज बुलंद रही और प्रसन्न मुद्रा में रहते हुए उन्होंने स्वास्थ्य की कमजोरी को कभी प्रकट नहीं होने दिया। रक्त की कमी और समस्त जांच के बाद भी विटामिन बी–12 की कमी किस कारण है यह पता नहीं चल सका था। कभी इंजेक्शन न लेने वाले गुरूजी ने अपने शिष्यों की इच्छा और डॉक्टरों की सलाह मानकर इंजेक्शन लगवाना मंजूर किया था।

1993 का पर्व मुंगेली में मनाया गया था। उस समय गुरू जी का स्वास्थ्य काफी बिगड़ गया था परंतु धन्य हैं गुरूजी जो इन्दौर से पधारे

भटजीवाले साहब को आश्वासन दे रहे थे कि इन्दौर आऊंगा, नहीं तो वहां आने के लिये एक जन्म और लेना पड़ेगा। गुरू पूजा की पूर्व रात्रि अर्थात् 22 जुलाई 1993 को एक गोला लगभग टेनिस की बाल के आकार का मलद्वार से निकला और साथ ही बहुत सारा खून भी।

23 जुलाई को पूजा भी मुंगेली में अनवरत चल रही थी और इसी बीच गुरूजी को पसीना आया और कुछ देर के लिये मूर्छित हो गये। कार्यक्रम बन्द नहीं हुआ और शेष पूजा गुरू जी की तस्वीर पर की गई। गुरू जी ने खेचरी मुद्रा लगा ली एवं उन्हें रायपुर इलाज के लिये ले जाया गया। इस मुद्रा में जीभ को उल्टा कर तालू से लगा लेने पर प्राण जाने का डर नहीं रहता।

इस समय उनका हीमोग्लोबिन 4.5 था। उसी समय रक्त देने की व्यवस्था की गई। हर शिष्य इसके लिये आगे आया तथा 2 दिन में 4 बोतल खून तथा हफ्ते भर में 7 बोतल खून चढ़ाया गया और हीमोग्लोबिन 4.5 से बढ़कर 9 ग्राम हो गया। दोबारा जांच होने पर पता चला कि पेट में गोला है। सबकी राय से भिलाई अस्पताल के प्रमुख सर्जन डॉ. चौबे को दिखाया गया। डॉक्टर साहब की सलाह थी कि पूज्य गुरूजी का ऑपरेशन करके गोला निकाला जावे।

सभी शिष्यों ने गुरूजी से डॉक्टर साहब की सलाह मानने की प्रार्थना की। गुरू जी का स्वास्थ्य अधिक खराब था। रायपुर गुरू कृपा नर्सिंग होम में उनसे शिष्यों द्वारा भिलाई अस्पताल में ऑपरेशन के लिये कहा गया, परन्तु इसके लिये गुरूजी तैयार नहीं थे। अंत में सभी शिष्यों के अनुरोध पर श्री अशोक भैया ने गुरूजी से आग्रह किया और उन्हें पुनः एक बार सभी शिष्यों की बात मान लेने को बाध्य किया। डॉक्टर साहब

की बात को अंत में गुरूजी मान गये। 16—08—1993 को उन्हें भिलाई अस्पताल में भर्ती कराया तथा 19—08—1993 को ऑपरेशन हुआ था। ऑपरेशन थियेटर में गुरू परिवार के और पूज्य गुरूजी के बहुत निकटतम शिष्य डॉ. प्रदीप जलगांवकर भी थे।

86 वर्ष की उम्र में ऑपरेशन काफी खतरनाक था और लगभग डेढ़ घण्टे यह ऑपरेशन चला। दो स्थानों से अंतड़ी को काटकर पुनः जोड़ा गया। ट्यूमर पूरी तरह निकल गया जो अंतड़ी के अंदर न जाकर बाहर की ओर जा रहा था और बड़ी आंत से निकलकर छोटी आंत में चिपक गया था। भिलाई अस्पताल के प्रमुख सर्जन आर.जे. चौबे एवं चीफ चेस्ट फिजिशियन डॉ0 जे0आर0 स्वर्णकार समय—समय पर स्वास्थ्य की जानकारी लेते रहे। डॉ. बासवाड़ा, डॉ. शशांक गुप्ता, डॉ. सी. एम. वर्मा एवं मुंगेली के डॉक्टर संजय अग्रवाल और गुरू कृपा नर्सिंग होम रायपुर के डॉ. दम्पत्ति डॉ. श्री प्रभात आचार्य एवं डॉ. अर्चना जी का यह गुरू परिवार ऋणी और कृतज्ञ है, जिनके कारण तथा गुरूजी की दृढ़ इच्छा शक्ति से अनहोनी टल गई थी।

अस्पताल में गुरूजी के अनेकों शिष्य उपस्थित थे और उनके स्वास्थ्य लाभ की सतत प्रार्थना चलती रही। भिलाई में लगभग 20 दिन रहने के बाद गुरूजी, गुरूकृपा नर्सिंग होम रायपुर में 4 माह स्वास्थ्य लाभ लेकर जनवरी 1994 में मुंगेली चले गये। रायपुर में अनेकों शिष्यों को खून देने का भी सुअवसर गुरूजी की कृपा से प्राप्त हुआ। 1993—94 में एन्टी टी.बी. थेरेपी ली और अन्य दवाईयां भी लीं।

गुरूजी के साथ अनेकों यात्राओं में जो घटित हुआ है, उसकी कुछ यादें आज भी स्मृति पटल पर विद्यमान हैं। गुरूजी कार में आगे की सीट

पर बैठकर सर्वप्रथम दोनों हाथों से सर्व शक्तिमान को नमन करते प्रतीत होते थे (मेरा अनुमान)। तब उनकी आज्ञा लेकर हम कार चलाते थे। गुरूजी के साथ कार चलाते समय हम काफी सतर्क रहते थे और कम से कम हार्न बजाने का प्रयास करते थे। सफर अक्सर सुबह 7 बजे शुरू होकर शाम होने तक पूरा करना होता था। एक यात्रा में भोपाल से कुछ ही किलोमीटर चलने पर एक नाले में उफान आया हुआ था। पता करने पर मालूम हुआ कि यह 2–3 दिन नहीं उतर सकेगा।

गुरूजी को बताया गया। ऐसे अवसर पर गुरू जी शांत रहते थे ओर सुनकर मात्र **''जी''** बोलते थे।

ट्रेक्टर ट्रेलर की मदद से कारें आ जा रही थीं क्योंकि नाले में बहाव बहुत तेज था। अतः गुरूजी की आज्ञा लेकर अपने पुत्र को कार का स्टियरिंग दिया और गुरूजी से पैर सीट पर ऊपर रखने की विनय की। शंका थी कि कार के अन्दर एक से डेढ़ फिट पानी आ जायेगा। उस पार पहुंचकर शीघ्र गुरूजी के चरणों को पोंछने गये तो विस्मय का ठिकाना नहीं था। पूरी गाड़ी में पानी था मात्र गुरू जी की सीट और चरणों वाली जगह सूखी थी जिस पर गुरूजी के चरण यथावत रखे थे। बड़े विनोदपूर्ण स्वर में गुरू जी ने कहा **''यहां पानी नहीं आया''**।

रायपुर से नागपुर जाते समय कुम्हारा के आगे एक रेस्ट हाऊस सौंदड़ में गुरूजी को विश्राम हेतु तथा दोपहर का खाना खाने के लिये कार रोकी। रेस्ट हाउस का चौकीदार हमारी कार देखकर तेजी से अपने क्वार्टर की ओर भागा, जिसका हमने पीछा किया। उसने जानकारी दी कि बिजली, पानी नहीं है अतः शाम 5 बजे के पूर्व कमरा नहीं खोलूंगा। कमरा खोलने पर कम से कम आप पानी तो मांगेंगे जिसे मैं नहीं दे सकूंगा।

चौकीदार की दलीलें सुनने के बाद हमने मात्र इतना कहा कि **''तेरे द्वार पर भगवान पधारे हैं, और तू उनके दर्शन करने की बजाये भाग रहा है''** सुनते ही वह कमरा खोलने आया और आश्चर्य से उसके मुंह से चीख निकली, क्योंकि तभी बिजली आ गई और वह दौड़कर पानी की मोटर चालू करने गया और लौटकर बताया कि 5 बजे के पहले कभी बिजली नहीं आती और अभी तो मात्र 1 बजा है, परन्तु आज क्या हो गया–हमें माफ करें। तदुपरांत हमें हर तरह का आवश्यक सहयोग देने लगा। विषम को सम बनाने वाले पूज्य गुरूजी को हमारी चरण वन्दना।

पूज्य गुरूजी के साथ अशोक भैया तो लगभग हमेशा रहते थे। एक बार डॉक्टर चन्दू शुक्ला के घर जबलपुर से निकलकर भोपाल के लिये प्रस्थान किया। रास्ते में गुरूजी ने पहले 10 एच.आई.जी. में हमारे फ्लैट पर चलने को कहा। यह आश्यचर्यजनक था क्योंकि गुरूजी एक शहर में एक ही शिष्य के घर रूकते थे। 2–3 दिन बाद ही वे डॉक्टर शिन्दे के यहां चले गये थे। उस समय एक अद्‌भुत घटना भोपाल में हमारे उद्योग ज्योति रबर कारखाने में घटी। उसका उल्लेख मात्र गुरूजी के आभामण्डल की ज्योति का प्रकाश कैसे सर्वत्र फैल जाता है यह रहस्य और उनके व्यक्तित्व और आध्यात्मिक ऊंचाईयां जिन्हें छूना हमारे वश में नहीं है; का अहसास करने में सम्भवतः सहायक अवश्य होगा। इकबाल नामक कर्मचारी हमारे ऑफिस का कामकाज कई वर्षों से देखता है जिसकी श्रद्धा पूज्य गुरूजी में है। वह ऑफिस की सीढ़ियां चढ़कर प्रथम तल पर जा रहा था। उसे अगरबत्ती की सुगंध तीव्रता से आई, जिससे उसे लगा कि हम 10–12 दिन के प्रवास के बाद लौटकर आ गये हैं।

ऊपर पहुंचकर उसने हमारे कमरे में गुरूजी की तस्वीर के समक्ष 2 अगरबत्ती जलती देखीं। बहुत देर तक हम कारखाने में कहीं भी नहीं दिखे तो उसने फोन करके जानना चाहा कि हम कब आये और कहां हैं। यह वह समय था जब हम गुरूजी को कुर्सी पर बैठाकर 10 एचआईजी के फ्लैट में लाये ही थे। इकबाल के विस्मय का ठिकाना नहीं था, जब उसे पता चला कि हम कारखाने गये ही नहीं थे और किस तरह दो अगरबत्ती गुरूजी की तस्वीर के समक्ष जल रहीं थीं और चारों ओर वातावरण में सुगंध फैली हुई थी। तब से हमने कभी भी यह नहीं सुना कि हमारे न रहने पर या गुरूजी के साथ प्रवास के समय किसी भी तरह कोई परेशानी कारखाने के संचालन में आई हो।

गुरूजी जैसे बेमिसाल, अद्वितीय, अद्भुत, नायाब और अनमोल व्यक्तित्व हम पर कृपावंत रहे, इसे हम अपना परम सौभाग्य मानते हैं।

कारखाने में अनेकों घटनायें घटती थीं, जो हमें विचलित और परेशान करती थी तथा आर्थिक क्षति पहुंचाती रहती थी। एक दिन एक दीवार में दरार पड़ गई और वायरिंग जल गई। गुरूजी को डॉक्टर शिन्दे ने हमारे समय पर न पहुंचने पर यह बात बता दी। जब हम उनके पास पहुंचे तो गुरूजी ने हमें स्नेहभरी डांट दी और कहा कि—

''आप किस तरह के इन्सान हैं, हर शिष्य अपने घर, ऑफिस, प्लाट आदि पर हमें ले जाने को कहता है और आपने आज तक हमें कारखाने चलने तक को नहीं कहा''।

हम दूसरे दिन गुरूजी, डॉक्टर शिन्दे और अशोक भैया को लेकर फैक्ट्री गये, जहां गुरूजी का पूरी श्रद्धा के साथ हम सभी ने आवभगत, पूजा की, आशीष पाया तथा उन्हें कारखाने की पूरी जानकारी दी। इसके

बाद से ही श्रमिकों के मन में सर्तकता से काम करने की भावना पैदा हुई और उन्हें ऐसा लगने लगा कि हमारे काम को कोई अव्यक्त शक्ति देखती रहती है। इसका प्रमाण भी 2—4 बार, उन्हें गुरूजी की कृपा से हमने दिया था। एक ड्रम में करीब 12 हजार कार्क रखने की क्षमता होती है। भरे ड्रमों में गुरूजी को याद करके हम अपना हाथ डालकर यह देखते थे कि तैयार माल में कोई कार्क भी खराब तो नहीं है। उनकी कृपा से यदि एक भी कार्क उन 12000 कार्कों में खराब होता तो वह हमारे हाथ में आ जाता था।

इसी तरह रबर रोल, जो सैकड़ों की तादात में रखे रहते थे, उनमें कोई खराब रोल तो नहीं है, यह जानने के लिये गुरूजी का स्मरण कर उस ढेर के किसी रोल को निकालने का आदेश देने पर यदि कोई खराब है, तो वही रोल उस ढेर से निकलता था। इन घटनाओं के बाद गुरूजी की कृपा से समस्त कर्मचारी अपनी कर्तव्य भावना और गुरूजी के प्रति पूरी श्रद्धा का भाव आज भी रखते हैं और अपना दायित्व पूरी निष्ठा से निभाते हैं। कारखाने में हर त्यौहार और पर्व पर गुरू जी की आरती सभी कर्मचारी सामूहिक रूप से करते हैं और हर वर्ष यहां 23 जुलाई का पर्व गुरू जी के जन्म दिवस के रूप में मनाया जाता है।

दिसम्बर 1992 में गुरू जी डॉ. शिन्दे साहब के यहां थे उस समय गुरू जी के पुराने शिष्य मेजर एस.पी. सिंह जिनकी पुत्री श्रीमती सरोज सिंह पत्नी स्वर्गीय श्री अर्जुन सिंह जी हैं, बार बार गुरू जी से अनुरोध कर रहे थे कि उनके दामाद अर्जुन सिंह जी अस्वस्थ हैं। डॉक्टरों ने जवाब दे दिया है तथा उन्हें चिकित्सा हेतु अमेरिका ले जाने का उपक्रम किया जा रहा है। कृपया आप उन्हें जीवनदान दें। गुरू जी को हम जबलपुर से

भोपाल लाये थे और दो दिन 10 एच.आई.जी. में हमारे साथ रूककर वे डॉ. साहब के यहां ईदगाह हिल्स पर रूके थे तथा हमें बताया था कि अभी काफी दिनों यहां रहेंगे।

मेजर साहब के अनेकों फोन एक दिन में आये और गुरू जी ने अंत में उन्हें आदेश दिया कि दिल्ली की अस्पताल में अपने दामाद श्री अर्जुन सिंह जी के कान में फोन लगाकर हमसे सम्पर्क करावें। भक्त की प्रार्थना भगवान ने सुन ली और श्री अर्जुन सिंह जी के प्राण बच गये। भोपाल से दिल्ली फोन पर मंत्रोच्चार या पता नहीं, कौन सी विधि से यह उपचार हुआ था। गुरू जी के अनन्य शिष्य मेजर एस.पी. सिंह, जो बार बार अपनी लड़की को विधवा होने से बचाने की गुहार लगा रहे थे, उन्हें यह भी वरदान हमारे पूज्य गुरू जी ने दिया कि ''तुम्हारे जीते जी तुम्हारी लड़की विधवा नहीं होगी''। यह एक अटल सत्य साबित हुआ। 18 साल बाद गुरूजी के शिष्य श्री एस. पी. सिंह की मृत्यु के 18 दिन बाद ही अप्रैल 2011 में श्री अर्जुन सिंह ने अन्तिम सांस ली थी।

गुरूजी ने अपने शिष्य की अनुनय विनय स्वीकार करके श्री अर्जुन सिंह जी की प्राण रक्षा करके उनकी अनेकों बीमारियों को अपने में समेट लिया था। उसी शाम हमें आदेश मिला कि किसी गर्म जगह हमें कल सुबह ही ले चलो। हम समझ नहीं सके कि पूज्य गुरू जी ने लम्बे समय रूकने का भाव कुछ घण्टे पहले दर्शाया था और रात होते होते भोपाल की ठंड से दूर, गर्म जगह ले चलने का आदेश मिला है।

उक्त घटना की जानकारी मिलने पर गुरू जी को उन तमाम पीड़ाओं को सहते हमने देखा है। वर्धा ले जाने के मार्ग में किस तरह पूज्य गुरू जी अपने शिष्य की प्रार्थना स्वीकार करने का भोगमान भोग रहे थे,

इसे शब्दों में व्यक्त करना अत्यंत कठिन है। भोपाल से वर्धा तक गाड़ी चलाना और लम्बे रास्ते तक अपनी गोद में गुरूजी के पैरों को रखकर मसाज करना और एक हाथ से कार का स्टेयरिंग संभालना आज भी रोमांच पैदा करता है। अपने शिष्य की मनोकामना पूरी करने के लिये प्रकृति के विरूद्ध जाकर भी जीवन दान देना, गुरूवर के सर्वशक्तिमान होने को दर्शाता है। हमने और अशोक भैया ने उनकी पीड़ा को देखा है। बर्धा शाम को पहुंचने के बाद भी लगातार गुरू जी को कष्ट सहते देखा।

करीब रात 3 बजे पूज्य गुरू जी कुछ सामान्य हुए और बोले ''आप लोगों को डॉक्टर नहीं बुलाना पड़ा और बहुत पैसा बच गया—तीन तरह के अटैक आये थे''। इन पीड़ा के क्षणों में भी गुरूजी की ममता और वात्सल्य हमने देखा है और थोड़ा ही सामान्य होते गुरूजी ने अशोक भैया को कहा ''जैन को आराम करने भेज दो, वह थक गया होगा''।

गुरू पूजा 23 जुलाई 1992 को ग्वालियर में सम्पन्न हुई थी। वहां से हम भोपाल होकर रायपुर गये थे। भोपाल से छिन्दवाड़ा—सिवनी होकर गोंदिया रात्रि विश्राम का संकल्प था अतः वहां तो पहुंचना ही था। बरसात का मौसम था और रास्ते के व्यवधानों के कारण संध्या तक गोंदिया पहुंचना संभव नहीं हो रहा था। रास्ते में भारी बरसात के कारण यात्रा में कठिनाई जा रही थी तथा पेट्रोल भी कार में डालना था। यह सोचा कि जहां सूखा मिलेगा, वहां कार रोक कर पेट्रोल डाल लेंगे। हम समय पर नहीं पहुंच सकेंगे यह घबराहट भी थी। चलते—चलते हम बालाघाट पहुंच गये। यहां भी घनघोर बारिश हो रही थी और रास्ता भी देखना दुष्कर हो रहा था। हम ऐसी तूफानी बारिश में यह साहस भी नहीं कर पा रहे थे कि पेट्रोल के लिये कार को कहीं रोकते।

रात हो चुकी थी, कुछ भी भारी वर्षा के कारण दिखाई नहीं दे रहा था। एकाएक हमने देखा कि हम बालाघाट से भी 5–6 किलोमीटर आगे आ चुके थे। पूज्य गुरूजी एवं भैया अशोक जी गुम सुम बैठे थे और रात होने के पहले गोंदिया न पहुंच पाने के कारण हम असहज महसूस कर रहे थे। हम बहुत निराशा में थे। दूसरी भूल, समय पर कार में पेट्रोल, जो लगभग शेष हो गया था, न डालने की हुई। हम अन्दर ही अन्दर डर रहे थे और गुरूजी से मन में ही पूछ रहे थे कि गुरूजी क्या करें। इसी ऊहापोह में बिना कार रोके, यह सोचकर आगे बढ़ते जा रहे थे कि जहां कार बन्द होगी, तभी जो होगा, आगे देखेंगे। मन में प्रश्न उठने लगे कि बिना पेट्रोल के कार कैसे आगे जा रही है। इसी मानसिकता में गोंदिया से 5 किलोमीटर पूर्व स्थित ''नागरा'' दिखाई दिया। यहां बारिश कम थी और हम धीरे–धीरे बिना पेट्रोल के कार आगे बढ़ाते हुए कुछ निश्चिंत भी हो चुके थे। ''कृपा सिन्धु'' की महान कृपा से गोंदिया पहुंचकर श्री राजेन्द्र जी के घर के सामने कार बन्द हो गई और हमें निश्चय हो गया कि पेट्रोल की जगह ''गुरू कृपा'' ने ईंधन बनकर कार को यहां तक लाये।

माह अक्टूबर 1993 में आदरणीय गुरूजी को लेकर इन्दौर श्री भटजीवाले के निवास पर पहुंचे। दूसरे दिन सुबह 8 बजे श्री भटजीवाले के फार्म हाउस पर वृक्षारोपण का कार्यक्रम था। हमारा भतीजा इन्दौर में रहता है। हमने गुरूजी से भतीजे के घर जाने की आज्ञा मांगी और सुबह समय पर आ जाने का आश्वासन भी दिया। देर रात तक जागने के कारण हम समय पर नहीं पहुंच पाये। चूंकि गुरूजी एवं अन्य समस्त परिवारजन हमारी समय पर पहुंचने की बात से आश्वस्त थे अतः समय पर गुरूजी को कुर्सी पर बैठाकर नीचे लाकर कार में बिठा दिया। हम

लगभग 25 मिनिट देर से पहुंचे और देखा कि 6–7 कारें एवं 15–20 अन्य लोग इंतजार कर रहे थे। इसके पूर्व श्री भटजीवाले ने गुरूजी से निवेदन किया था कि एक कार छोड़कर बाकी सभी प्रस्थान करें परन्तु गुरूजी मौन रहे थे।

हम काफी डरे और सहमें हुए वहां पहुंचे थे। ऐसा अवसर पहली बार आया था जब गुरूजी को हमारी प्रतीक्षा करना पड़ी हो, अन्यथा हम सदैव समय पर गुरूजी को कार में ले जाते थे। हमने चुपचाप कार में बैठकर हमेशा की तरह गुरूजी की चरण वंदना करके चलने की आज्ञा मांगी और आदेश में गुरूजी ने मात्र ''जी'' शब्द का उच्चारण किया।

हमेशा गुरूजी कहा करते ''मैं किसी से क्यों? कहां? कैसे? नहीं पूछता'' और आज भी यही हुआ। अन्यथा हम तो चाह रहे थे कि एक बार देरी से आने की जो असावधानी हमसे हुई है, उसकी डांट फटकार हो ले, ताकि मन में व्याप्त सहमापन और डर चला जाये। धन्य हैं पूज्य गुरूजी! जिन्होंने हमसे कुछ भी नहीं पूछा और थोड़ी बहुत नहीं 25 मिनिट की देरी के बाद भी किसी तरह का कोई सवाल या तनाव, गुरूजी के मुखमण्डल पर देखने को नहीं मिला। हमारी प्रतीक्षा करना उनकी व्यवहारिकता एवं दयालुता की पराकाष्ठा ही कहा जा सकता है।

श्री भटजीवाले के यहां से निकलकर एक शिष्य के यहां नाश्ता भी करना था। जैसे ही हम वहां पहुंचे, गुरूजी ने अपने शिष्य से कहा कि हमारे जैन साहब बिना नाश्ते के आये हैं, इन्हें अवश्य खिला दीजिये। पूज्यवर की करूणा, दया और मातृवत स्नेह से हम रोमांचित हो गये। यह अविस्मरणीय घटना हमें वात्सल्य की मूर्ति का सदैव स्मरण कराती रहती है।

सन् 1994 अप्रैल माह में आदरणीय गुरू जी को लेकर मुंगेली से रायपुर–नागपुर–वर्धा– अमरावती होकर खण्डवा में श्री ओ.पी. शर्मा के यहां पहुंचे। साथ में श्री अशोक भैया–भाभी, श्रद्धा तथा सन्जू (गुरू जी के बड़े सुपुत्र का पुत्र) साथ में आये थे। अमरावती से व्हाया परतवाड़ा होते हुए खण्डवा पहुंचे थे जबकि गुरू जी बुरहानपुर होते हुए अन्य शिष्यों से मिलकर आना चाहते थे। अधिक गर्मी के कारण ही हम बुरहानपुर होकर नहीं गये थे। खण्डवा पहुंचकर गुरू जी ने आदेश दिया कि हम कुछ दिन को भोपाल जाकर कारखाना देख आयें। हमें ज्वर भी आया हुआ था। गुरू जी ने हमें आराम करने की सलाह दी थी। हमें यह भी आदेश मिला था कि जब गुरू जी बुलायेंगे तो इन्दौर होते हुए श्री संजय भट्जीवाले एवं उनकी कार सहित आवें ताकि समस्त लोग बाकी की यात्रा दो गाड़ियों में सुगमता से कर सकें। यहां यह उल्लेखनीय है कि अशोक भैया ने संजय को ए.सी. कार लाने को कहा था जबकि गुरू जी ने इसका विरोध किया था।

हमें जब भोपाल से खण्डवा जाने का आदेश मिला तो इन्दौर से संजय भटजीवाले के साथ हम खण्डवा पहुंचे तथा दूसरे दिन इन्दौर के लिये रवाना हुए। यह अप्रैल 1994 की बात है। गुरू जी ए.सी. कार में न जाकर अपनी कार में यथावत बैठ गये, साथ ही अशोक भैया के परिवार को संजय की ए.सी. कार में आने का आदेश दिया। इन्दौर पहुंचने पर पता चला कि हर सम्भव प्रयास के बाद भी श्री संजय भट्टजी वाले अपनी कार का ए.सी. चालू नहीं कर सके। उनकी समझ से परे थी, गुरूजी की यह अबूझ लीला।

इन्दौर पहुंचने पर हमें जैसे ही संजय ने यह बताया कि मैं नहीं समझ सका, ऐसा क्यों हुआ कि ना गुरूजी ए.सी. कार में बैठे, न इस कार का ए.सी. चालू हुआ, क्या वजह हो सकती है? जब संजय भट्टजीवाले को ज्ञात हुआ कि गुरूजी ने ए.सी. कार लाने का विरोध किया था और साथ ही उन्हें एक तार भी लटकता दिखाई दिया जो ए.सी. कनेक्शन से अलग पड़ा था (जिसको लगाते ही गाड़ी का ए.सी. चलने लगा), तब उन्हें यह वास्तविकता मालूम हुई कि गुरूजी की बात का विरोध की क्या परिणति हो सकती है। उक्त घटना हमें बहुत कुछ सिखाती है। हमें यह भी समझ लेना चाहिये कि उनके बताये मार्ग पर चलकर हम इस अभीष्ट को साकार कर सकते हैं जो अदृश्य है और कठिन है, किन्तु नामुमकिन नहीं है।

उक्त घटना के बाद संजय जी ने एक ए.सी. यूनिट गुरूजी की कार में लगवाया किन्तु कतिपय कारणों से यह सफल नहीं हुआ। हमने अत्याधिक कष्ट इसकी वजह से उठाये, जिसका उल्लेख आगे आयेगा। इन्दौर से भोपाल आने पर 10 एचआईजी, में गुरूजी की सेवा का अवसर मिला।

भोपाल से गुरूजी को जून 1994 में श्री डी.एस. राय के पास रायसेन ले गये जहां वे कलेक्टर पद पर आसीन थे। रायसेन में गुरूजी ने श्री राय साहब को जो कि उनके बहुत पुराने शिष्य हैं, सरकारी उच्च पदों पर रहते हुए, जीवन की अनबूझी राहों पर उच्च आदर्श स्थापित करने की सूझ बूझ दी। इस अवसर पर श्री राय साहब की पत्नी श्रीमती कुसुम राय भी थीं और गुरू जी द्वारा जो मार्ग बताया उससे बहुत अभिभूत और भावुक होकर जीवन के रहस्यों की गहराई को समझकर उन उच्च आदर्शों को पाने में श्री राय साहब की सहायक बनीं।

यहां श्री देवेन्द्र राय द्वारा बताया गया एक अनुभव बताना उपयुक्त होगा। गुरूजी का रायसेन प्रवास उन्हीं दिनों हुआ था जब पूरे प्रदेश की तरह वहां भी पहली बार पंचायत चुनाव नये रूप में हो रहे थे। पूरे जिले में अव्यक्त तनाव था जो प्रशासन के लिए चिन्ता का कारण था। हजारों गांवों में चुनाव होना था, पुलिस बल की कमी थी और यह आशंका थी कि गांव के आपसी झगड़ों के कारण चुनावों में हिंसा की घटनायें न हों। परन्तु अन्दर ही अन्दर श्री राय आश्वस्त थे क्योंकि पूज्य गुरूजी चुनाव के दिन रायसेन में ही रूकने वाले थे और यही हुआ। छुट पुट घटनाओं के अलावा चुनाव निर्विघ्न एवं शांतिपूर्वक सम्पन्न हुए और श्री राय ने चैन की सांस ली।

सभी परिवारजनों ने हमेशा अनुभव किया है कि पूज्य गुरू जी अपने शिष्यों के कल्याण के लिये स्वयं चलकर उनके पास जाते थे। भोपाल लौटकर उन्होंने गोंदिया राजेन्द्र कुमार जी के पास चलने का आदेश दिया। हम व्हाया नागपुर–गोंदिया के लिये निकले, किन्तु कार में लगा ए.सी. हमें अत्यन्त कष्ट दे रहा था और अंत में नागपुर पहुंचकर कार बंद हो गई। गुरूजी की कृपा से यह शहर के बीच हुआ, किसी जंगल में नहीं। उसे दुरूस्त कराने का भरसक प्रयास होता रहा पर रात को लगभग 10:30 बज गये और कार चालू नहीं हो सकी।

भैया अशोक ने डॉ. जलगांवकर के यहां चलने का प्रस्ताव रखा, जिसे गुरूजी ने स्वीकार नहीं किया। अंत में उस ए.सी. यूनिट को बाहर करके किसी तरह कार चलाने योग्य हुई। नागपुर से गोंदिया गुरू जी ने हमें कैसे पहुंचाया यह मात्र गुरू जी ही जानते होंगे। रात में लगभग 12 से 1 बजे गोंदिया से आती हुई एक जीप मिली। उसमें हमारे बहुत पुराने परिचित श्री कुन्दनलाल जी भी थे। हमने उन्हें बताया कि रेडियेटर का

पानी सूख कर खूब गर्म हो रहा है तथा कार बन्द हो जाती है। श्री कुन्दनलाल जी के साथ अन्य लोग भी थे जिन्होंने कार का थोड़ा बहुत परीक्षण किया। पर रात के अंधेरे में किसी को कुछ समझ नहीं आ रहा था। अंत में यही निष्कर्ष निकला कि कार बन्द होते ही रेडियेटर में पानी डाला जाये और आगे बढ़ते जायें। उनके पास जितना पानी था, वह हमें दे दिया।

रास्ते में पानी मिलना भी दुर्लभ हो रहा था। एक जगह खेत दिखाई दिया, वहां कुएं से पानी लाकर और कई बार रास्ते के गड्ढों से भी पानी मग में लेकर हम रेडियेटर में डाल देते थे। दो–ढाई घण्टे का सफर लगभग साढ़े छः घण्टे में पूरा किया। दुर्भाग्य से कार में लाइट भी नहीं थी। सामान्यतः ऐसी स्थिति में कार चलने लायक ही नहीं रह जाती है। पूज्यवर का कार में होना और गन्तव्य तक पहुंचने की उनकी इच्छाशक्ति ही कार को आगे बढ़ाने में हमें सूझ–बूझ दे रही थी। रास्ते में कितनी बार कार रोकी और कितनी बार उसे चालू गुरूदेव कराते रहे, यह गिनना कठिन है।

सुबह 5 बजे गोंदिया पहुंचकर कार की पूरी वायरिंग, जो जल चुकी थी बदलवाई गई। गुरू जी का स्वास्थ्य ठीक नहीं था हमने भी उन्हें डॉ. जलगांवकर के यहां जाने का आग्रह किया था पर गुरू जी ने कहा तुम्हें अकेला छोड़कर नहीं जायेंगे। इतनी यात्राओं के बाद हम समझ सके हैं कि गुरूजी के रोम रोम में बसी व्यवहारिकता के साथ साथ वे गन्तव्य के लिये रवाना होने से पहले सर्वशक्तिमान को नमन (मेरा अनुमान) करके संकल्प करते थे। उन्होंने उस गन्तव्य तक पहुंचने के पूर्व कई बाधाओं के बावजूद भी अपना लक्ष्य जिस गन्तव्य का बनाया है, वह कभी नहीं

बदला। उनकी इस दृढ़ इच्छाशक्ति को हमारा बारम्बार नमन। गोंदिया से रायपुर गुरू पर्व 1994 के लिये रवाना हुए और गुरू कृपा नर्सिंग होम में निवास किया।

ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब गुरूजी ने अपने शिष्यों की अनेकों बीमारियों को अपने ऊपर ले लिया था। मुंगेली के स्थान पर रायपुर में उनके उपचार की भी बेहतर सुविधाओं को महसूस करके 1994 में गुरू पूजा कार्यक्रम में (जो कि रायपुर में चल रहा था) पूज्य गुरू जी की आज्ञा लेकर गुरू जी को मुंगेली से रायपुर निवास का हमने प्रस्ताव रखा। तदनुसार लगभग 1 लाख 85 हजार की राशि शिष्यों से एकत्र हुई और डॉ. पंधेर ने अपनी जमीन भी गुरू निवास के लिये देना प्रस्तावित किया। सभी कुछ तय होने पर भी यह कार्य विभिन्न कारणों से आगे नहीं बढ़ सका और अंत में यह राशि वर्तमान ट्रस्ट को सौंप दी गई।

सम्भवतः यह घटना 1995 की है, जब हम गुरूजी को लेकर भोपाल से छिन्दवाड़ा होते हुए सिवनी के रेस्ट हाउस में आकर रूके थे। कार चलाते समय गुरूजी को यह जानकारी दी जाती थी कि किस स्थान से निकल रहे हैं तथा अक्सर कार किस स्पीड से चल रही है यह भी गुरू जी पूछा करते थे।

गुरूजी 60–70 किलोमीटर प्रति घण्टे की स्पीड पर जाना पसंद करते थे। अनेकों बार हमने यह मनोभाव भी गुरूजी का समझा कि वे किसी किसी गन्तव्य पर शीघ्र पहुंचना चाहते थे। छिन्दवाड़ा से सिवनी के रास्ते पर हम काफी स्पीड से 80–90 प्रति घण्टा से जा रहे थे, तब पूज्य गुरूजी ने कहा ''आपको कार चलाना नहीं आती अभी तक सिवनी भी नहीं पहुंचे''।

उनके उक्त कथन का आशय हम नहीं समझ सके और उसी रफ्तार से गन्तव्य तक पहुंच गये। हमारे साडू भाई स्वर्गीय चक्रेश जी ने वहां हमारी व्यवस्था रेस्ट हाउस में की थी। यहां दो–तीन बातों का उल्लेख करना पूज्य गुरूजी की आध्यात्मिक ऊँचाईयों, उनकी सांसारिक व्यवहारिकता तथा कृतज्ञता के भाव को प्रगट करता है।

सिवनी से निकलने के पूर्व आदेश मिला कि गोंदिया चलना है और पहले हमें चक्रेश जी से मिलना है। चक्रेश जी का परिवार हमारे पूज्य गुरू जी में बिलकुल आस्था नहीं रखता था। जैसे ही गोंदिया के लिये निकलने के पूर्व उनके घर के सामने कार रोकी। चक्रेश जी सपरिवार आए। पूज्य गुरू जी ने हाथ जोड़कर उनके द्वारा की गई व्यवस्था तथा अन्य प्रबंधों के लिये आभार मानने की बात कही तथा यह भी आशीष दिया कि **''कभी भी, कहीं भी, कैसी भी परिस्थिति या विपत्ति आने पर इस नाचीज को याद करें–आपका काम बन जायेगा''।**

पूज्य गुरूजी के द्वारा दिया गया आशीष कितना प्रभावी होता है यह भी यहां उल्लेखनीय होगा। जैन समुदाय के लोग बहुत कट्टरवादी होते हैं और बाकी सभी को पूजना मिथ्यात्व की परिधि में आता है जैसा कि हमारे रिश्तेदार स्वर्गीय श्री चक्रेश जी का परिवार था। इनकी दो कन्यायें थीं। एक कन्या का विवाह नहीं हो पा रहा था, जिसके लिये सतत् 3 वर्ष यह परिवार प्रयास करता रहा पर सफलता नहीं मिल रही थी।

हमें एकाएक गुरूजी की बात याद आई और हमारे मन में आया कि उनकी पुत्री को सुयोग्य वर शीघ्र मिल सके, इसके लिये किसी तरह चक्रेश को मुंगेली भेजा जाये। उस समय मन्दिर निर्माण का कार्य चल रहा था तथा चक्रेश जी आर्किटेक्ट थे। अतः हमने उन्हें निर्माण कार्य में

अपने सुझाव देने का प्रस्ताव देकर मुंगेली भेजा। उनकी इस यात्रा के 3 दिन बाद ही उनकी पुत्री की शादी तय हो जाने का समाचार प्राप्त हुआ, जिसके लिये 3 वर्षों की मेहनत के बाद वे हार थक कर घर बैठ गये थे। यह घटना वर्ष 2001 की है।

तत्पश्चात हमने गुरूजी से कार चलाने की अनुमति मांगी तथा हम उस परिवार से विदा लेकर गोंदिया के लिये करीब 8–8.30 बजे सुबह रवाना हो गये। रजेगांव पहुंचने पर वाघ नदी में बाढ़ आयी हुई थी, जिसको सामान्य होने में काफी दिन लगते हैं।

बहुत देर तक प्रतीक्षा के बाद गुरूजी को स्थिति से अवगत कराकर रायपुर चलने का सुझाव दिया, किन्तु सदैव की भांति गुरूजी ने ''गोंदिया जाना है'' कहा व शांत हो गये।

हमें कुछ भी समझ नहीं आ रहा था कि किस मार्ग से गुरू जी को गन्तव्य तक पहुंचावें। इसी उपक्रम में कार को वापिस मोड़कर चलने लगे। रास्ते में अनेकों स्थानों पर राहगीरों से मदद लेते हुए, आगे बढ़ रहे थे और पूज्य गुरूजी निःशब्द, पता नहीं कहां खोये थे। उनकी भाव भंगिमा से कुछ ऐसा ही लग रहा था। बीच–बीच में रायपुर की तरफ चलने का निवेदन भी कर रहा था पर मात्र **''जी''** के अलावा पूज्यवर कुछ नहीं बोले। रजेगांव से गोंदिया का सफर 20 से 25 मिनिट का था और 1 बजे से पूर्व गोंदिया पहुंचना था किन्तु करीब 4 बजे शाम गुरूजी को लेकर हम गोंदिया पहुंचे। वह मार्ग कौन सा था, यह गुरूजी ही बता सकते हैं, हमारे वश की बात नहीं है।

गोंदिया जाकर देखा 2 कन्यायें अन्न जल त्यागकर गुरू जी से दीक्षित होने के लिये राजेन्द्र बाबू के घर बैठी थीं। शीघ्र ही पूज्य गुरू जी

ने दीक्षा देकर उन कन्याओं की मनोकामना पूरी की, भोजन ग्रहण किया। आदरणीय गुरूजी की संकल्पशक्ति और अनबूझे भविष्य को स्पष्ट देखने की क्षमता किसी दिव्यात्मा के लिये ही सम्भव है। मार्ग की अड़चनें और विषमताओं को उनके शिष्य, उन्हीं के आशीष से दूर कर पाते हैं।

यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि गुरूजी स्वयं स्वस्थ रहते थे, पर जरूरत पड़ने पर शिष्यों के कल्याण के लिए स्वयं कष्ट उठाते थे। अपने एक शिष्य की, जो तेल्हारा का था, अपने ऊपर सोरियेसिस नाम की बीमारी ले ली थी, जिसका निदान उस शिष्य की मृत्योपरांत ही हो सका था।

गुरूजी ने अपने शिष्यों की टी.बी., कैंसर, मिर्गी, प्लूरिसी आदि अनेकों बीमारियां अपने ऊपर लेकर अपने शिष्यों को ध्यान धारणा योग और आध्यात्मिक उंचाईयों पर पहुंचने का मार्ग सुलभ कराया था। 1995 में प्लूरिसी की वजह से डॉ. स्वर्णकार ने पीठ की तरफ से फेंफड़े से लगभग 1 लीटर पानी निकाला था। गुरूजी का 1995 में ही कूल्हे का फ्रेक्चर (शिष्य की मिर्गी बीमारी अपने ऊपर ली थी) हुआ। तब अक्टूबर 1995 में डॉ. सुदर्शन रायपुर वालों ने ऑपरेशन किया था जिसमें डॉ. संजय पाण्डे एवं डॉ. यदु सहयोगी थे। डॉ. पन्धेर और डॉ. आचार्या दम्पत्ति की उपस्थिति में ऑपरेशन करके जांघ में स्टील का गोला डाला गया था, पर यह गोला अंतिम संस्कार के बाद जब फूल एकत्र किये गये, तब गायब था।

गुरू कृपा नर्सिंग होम में पूज्य गुरूजी की सेवा का सुअवसर डॉ. आचार्य एवं डॉ. अर्चना दम्पत्ति को बहुत समय तक मिलता रहा है। इस दम्पत्ति की निश्छल और निःस्वार्थ सेवा के फलस्वरूप उपरोक्त ऑपरेशन

के बाद गुरूजी ने इस नर्सिंग होम में होने वाली मरीजों की डिलेवरी के समय कोई भी अनहोनी घटना न होने का अभय दान दिया था जो आज भी कायम है।

जनवरी 1996 में गुरूजी को डॉ. चौबे के पास बिलासपुर में ले जाया गया और परीक्षण से पता चला कि 3 सेंटीमीटर से 4 सेंटीमीटर बड़ा ट्यूमर है, जो किडनी और यूरेटर को दबा रहा है। परन्तु आयु को देखते हुए डॉ. चौबे ने ऑपरेशन करने की सलाह नहीं दी। इसके बाद हमें गुरूजी ने मुंगेली बुलाया। उस समय उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। गुरूजी कहने लगे कि **''आप हमें सभी जगह लेकर सबसे मिला लाईये''।** हमें गुरूजी की बात सुनकर अच्छा नहीं लग रहा था, क्योंकि उनके इस कथन में गहरा रहस्य छिपा हुआ था और उनका स्वास्थ्य सफर के योग्य नहीं था।

गुरूजी ने आगे कहा कि इस बार हर स्थान पर निश्चित दिनों के लिये ही रूकेंगे। मुंगेली से चलकर रायपुर आये। उस समय गुरूजी को डॉक्टर आचार्य ने भी मना किया कि आप न जावें। उनकी पत्नी का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं था तथा वे बम्बई जा रही थीं। पर गुरूजी ने बड़ी दृढ़ता से यह अवश्य कहा था कि इन्हें कुछ नहीं होगा, सब ठीक है।

पूज्य गुरूजी नहीं मानेंगे, ऐसा डॉक्टर आचार्य ने, हमें कहा। गुरूजी को लेकर हम नागपुर डॉ. जलगांवकर के यहां पहुंचे। हमने डॉक्टर साहब से गुरूजी का पूरा चेकअप कराने का अनुरोध किया तथा 2 दिन रूककर, चेकअप कराकर वर्धा के लिये निकले।

डॉक्टर जलगांवकर ने मुझे कुछ दवाओं की जानकारी दी तथा उनकी हालत की निरंतर जानकारी देते रहने को कहा और बताया कि

गुरूजी का स्वास्थ्य जाने योग्य नहीं है, पर वे नहीं मानेंगे, अतः आप ले जावें।

वर्धा, प्रभाकर पांडे जी के घर पहुंचने पर मैंने देखा कि गुरूजी के मुंह से खून निकला था। तभी डॉक्टर जलगांवकर को फोन पर बताकर कुछ दवायें लेकर वापिस श्री पांडेजी के घर पहुंचा और गुरूजी को दवायें दीं, गुरूजी को कुछ नहीं बताया था।

इस बीच पांडे जी के यहां फोन आया और डॉक्टर अर्चना आचार्य जो बम्बई में चैकअप के लिये गईं थीं उनके बारे में जानकारी दी गई। श्री पांडे जी के घर में किसी बच्ची ने फोन पर बात की थी। डॉ. श्रीमती अर्चना आचार्य के स्वास्थ्य संबंधी समाचारों से गुरूजी काफी विचलित हो गये। वास्तव में बच्ची ने ठीक से नहीं समझा था, इस कारण गुरूजी हमें तलाश रहे थे।

हम जैसे ही गुरूजी की दवाई लेकर घर पहुंचे तो गुरूजी ने बिना बताये जाने पर हमें डांटा और कहा—**''ऐसा हो ही नहीं सकता''।** आप तुरंत पता करें, डॉ. अर्चना के स्वास्थ्य के बारे में। हमने फोन करके सही स्थिति पता की और गुरूजी को बताया कि डॉ. अर्चना का परीक्षण बम्बई में हो चुका है और सारी रिपोर्ट सामान्य आई है अतः चिन्ता का कोई विषय नहीं है। उक्त रिपोर्ट के बारे में सुनते ही गुरूजी की भाव भंगिमा और जो प्रसन्नता उनके श्री मुख पर आई थी वह लिखना शब्दातीत है और गुरूजी जोर से बोले—**''ऐसा हो ही नहीं सकता कि अर्चना की रिपोर्ट सामान्य न हो''।** गुरूजी को अपने स्वास्थ्य की चिन्ता कभी नहीं हुई, पर अपने शिष्यों के स्वास्थ्य के लिये हमेशा सजग और शुभ समाचार

जानने के लिये अत्यंत उत्सुक रहते थे और इस बात का उन्हें पूरा विश्वास रहता था कि परिणाम वही मिलेगा, जिसके बारे में वे पूर्व में बोल चुके हैं।

एक दिन श्रीमती शीला पांडे जी ने दो फोटो फ्रेम कराये, उन्हें गुरूजी को बताया और गुरूजी को पहली फोटो उनके शरीर पर रखकर बताया कि इसमें श्रीकृष्ण भगवान अपनी गोपियों के साथ नौका विहार कर रहे हैं। काफी समय से पूज्य गुरूजी की आंखों की रोशनी (लौकिक) नहीं थी। इस फोटो पर गुरूजी हाथ फेरते रहे तथा दूसरी फोटो गुरूजी के पेट पर रखकर शीला पांडे जी ने बताया कि गुरूजी इसमें श्री कृष्णजी अपनी गोपियों के साथ रासलीला कर रहे हैं। गुरूजी यह सुनकर शांत हो गए और पता नहीं किस लोक में चले गये। उनका हाथ फोटो पर रखा था और अत्यंत भावुक होकर उनकी आंखों से अश्रुपात होने लगा। कुछ समय उपरांत गुरूजी ने अत्यंत क्षीण आवाज में, बड़ी मधुरता और सजल नेत्रों से कहा कि—शीला! यह किसी स्वप्न या ध्यानावस्था की या काल्पनिक बात नहीं वरन् हमने अपनी इन्हीं आंखों से यह रासलीला गोपियों के साथ प्रत्यक्ष देखी हैं। बाद में यह अलौकिक रहस्य उन्होंने हमें बताया कि शास्त्रानुसार ''कोई भी, चाहे वह योगी हो, भक्त हो या ज्ञानी हो, वह परमात्मा की विशेष कृपा के बिना रासक्रीड़ा नहीं देख सकता।''

नियत तिथि पर वर्धा से अमरावती चलने तथा तीन रात वहां रूकने का आदेश मिला। अमरावती जाते समय पहली बार स्पीड ब्रेकर दिखाई नहीं दिया, गाड़ी उस पर से उछल गई तथा गुरूजी के माथे पर बहुत बड़ा गूमड़ पड़ गया, जिसका आकार एक नींबू के बराबर था। बिना नाराज हुए गुरूदेव ने उसे स्पर्श किया और वह गायब हो गया।

अमरावती से खण्डवा श्री ओ.पी. शर्मा के यहां चलने को कहा। वहां पर 7 दिन रहने का निश्चय था। हम भोपाल जाकर कारखाना देख आवें ऐसा आदेश दिया। अशोक भैया के अलावा तेजवानी जी भी साथ में थे। हम निश्चिंत होकर भोपाल के लिये निकल गये। गुरूजी के स्वास्थ्य और उनकी हर तरह की देखभाल तथा सेवा श्री शर्मा जी एवं तेजवानी जी कर रहे थे।

वापिस 7 दिन बाद खण्डवा पहुंचकर गुरूजी को स्वस्थ देखकर हमें अत्यंत खुशी हुई। फिर गुरूजी के आदेशानुसार हम इन्दौर भटजीवालों के घर पहुंच गये। यहां गुरूजी ने तीन दिन रहने का आदेश दिया था। इसके बाद गुरूजी ने भोपाल ले चलने को कहा और अंत में गुरूजी भोपाल आकर 10 एचआईजी में विराजमान हुए।

खण्डवा में जो देखभाल पूज्यवर की हुई थी, उससे उन्हें काफी अच्छा लग रहा था। कुछ दिन के बाद पुनः गुरूजी ने श्री डी.एस. राय के पास, जो उस समय रायसेन में थे—चलने को कहा और वहां जाकर 2 दिन रहने का आदेश दिया। वहां से 2 दिन बाद ही भोपाल आ गये। यह फरवरी 1996 का समय था।

गुरूजी भोपाल में आकर काफी समय रहे और इस बीच उनके दर्शनार्थ हजारों श्रद्धालु विभिन्न स्थानों—अमरावती, वर्धा, औरंगाबाद, अकोला, रायपुर, बिलासपुर, मुंगेली, इन्दौर, ग्वालियर आदि से आ रहे थे। सुबह से रात तक कतारों में भोपाल के अलावा अन्य स्थानों से जहां कहीं भी उनके शिष्य हैं उनके दर्शन के लिये आ रहे थे। गुरूजी के मन में एक स्थान ग्वालियर और बचा था जहां उनकी जाने की तीव्र इच्छा बनी रह गई। उनके स्वास्थ्य के कारण यह लम्बा सफर करने में अनेकों रूकावटें थीं

और भोपाल में जो एक अविस्मरणीय मेला उनके दर्शनों को उमड़ रहा था। इसलिए आदरणीय गुरूजी ने ग्वालियर न जाने की बात मान ली।

एक दिन गुरूजी कहने लगे **''आप लोगों की सेवा ने मेरी उम्र 8 वर्ष बढ़ा दी है''।** इसके बाद मात्र लगभग 2 वर्ष बाद गुरूजी ने शरीर त्याग दिया था। हम व्यक्तिगत रूप से इस संबंध में काफी विचार करते रहे कि हमारे पूज्य गुरूजी ने इतने शीघ्र शरीर त्याग क्यों किया? पूज्य गुरूजी स्वयं चलकर लगातार 20 वर्षों तक अपने जैसा बनाने के लिये भ्रमण करते रहे और हमें जगाते रहे। पर हम उनके अनुरूप नहीं बन सके और अंत में पूज्यवर ने शरीर छोड़ने का निर्णय लिया होगा।

शरीर छोड़ने पर जाते-जाते भी हमें 500 वर्षों तक राह दिखाने का दीपक दे गये। गुरूजी कहते थे-

गुरूजी हमारे हैं-यह सब बोलते हैं किन्तु एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं मिला जो कहे कि हम गुरूजी के हैं। हम गुरूजी के हैं माने-आकर रहो पास में-सब छोड़ो। है हिम्मत? तो तात्पर्य है मेरा तो कोई नहीं यहां।''

हमारा यह निष्कर्ष इस बात से भी प्रमाणित होता है कि इन्हीं दिनों एक रात करीब 10-11 बजे हमसे कहा कि ''हमें एक गीत सुनना है जिसके बोल शुरू होते हैं-पानी में मीन प्यासी.....हमने भाई राजेन्द्र जी को गोंदिया फोन किया और उन्हें बताया कि पूज्यवर एक गीत सुनने का आग्रह कर रहे हैं। राजेन्द्र जी ने बताया कि यह बहुत पुराना गीत है जिसे खोजना पड़ेगा, क्योंकि मुंह जबानी याद नहीं है। कुछ अन्तराल के बाद फिर फोन करके यह गीत गुरूजी को रात में ही उन्होंने गाकर सुनाया था। गीत इस प्रकार है –

पानी में मीन प्यासी रे
मोय सुन सुन आवत हंसी रे,
आत्मज्ञान बिना सब सूना
क्या काबा क्या काशी।
घर में वस्तु धरी नहीं सूझे
बाहर ढूंढन जाती रे,
मोय सुन सुन आवे हंसी रे,
मृग की नाभि माही कस्तूरी
वन वन फिरे उदासी
तेरे प्रभु तेरे घट में बसत हैं
काहे होत उदासी रे।
मोय सुन सुन आवे हंसी रे,
दुर्लभ मानस देह कबीरा
मांगन से नहीं पासी रे
प्रभु भक्ति में लीन रहो सब
गुरू चरणन में लीन रहो सब
सहज मिले अविनाशी रे।
मोय सुन सुन आवे हंसी रे,

गुरूजी की इच्छानुसार संपूर्ण समर्पण शायद ही किसी शिष्य ने किया होगा? गुरूजी ने शरीर छोड़ने का निर्णय लेने के बाद ही 1996 में सभी शिष्यों से मिलने का निर्णय लिया, आज यह प्रमाणित हो चुका है।

पूज्य गुरूजी के मन का दुख व असंतोष इस भजन से हमें स्पष्ट हो रहा है। ''कारक'' सामने होते हुए भी हम ''स्मारकों'' में भटक रहे थे और साक्षात् ईश्वर के अवतार को अपने बीच पाकर भी अज्ञानी बने हुए थे।

गुरूजी के शिष्य न होते हुए भी गुरूजी को बहुत करीब से पहचाना था बिलासपुर के स्वर्गीय श्री नरेन्द्र सिंह जी ने। गुरूजी को न पहचान पाने का हमें मलाल रहेगा और आज अधिकांश शिष्य इस बात से उदासी में डूब जाते हैं कि हम गुरूजी के सामीप्य को पाकर भी अपने को उनके अनुरूप क्यों नहीं बना सके? इसके बावजूद भी वंदनीय हैं यह अवतारी महापुरूष, कि उन्होंने अपने परिवार को गहन स्नेह और प्यार दिया और जो कार्य सशरीर सामीप्य से नहीं हो सका, वह सूक्ष्म रूप से 500 वर्षों तक हमें प्रकाश मार्ग पर ले जाने का संकल्प लेकर आज भी हमें मार्गदर्शन कर रहे हैं।

इसी बीच श्री योगेश शर्मा रायपुर से गुरूजी का एक बड़ा फोटो बनाकर भोपाल लाये और हमें भेंट किया। हमने उस फोटो को फ्रेम करवाकर पूज्य गुरूजी की गोदी में रख दिया। बहुत देर तक गुरूजी इस फोटो पर चारों तरफ हाथ फेरते रहे और पूछा कि हम इस फोटो को कहां लगायेंगे। गुरूजी अच्छी तरह जानते थे कि जैन लोग मिथ्यात्व की चर्चा बहुत करते हैं और अपने तीर्थंकरों और साधु संतों के अलावा सभी को मिथ्यात्व पूजने वाला मानते हैं। शायद यही बात हमारे मन में भी हो, यही सोचकर गुरू जी बोले कि आप इतनी बड़ी फोटो को कहां लगायेंगे?

हमने पूज्य गुरूजी से कहा कि आप आज्ञा दें वहीं इसको लगायेंगे। तब गुरूजी बोले–आप अपने फ्लैट के बड़े हॉल में इसको टांग दीजिये और आपसे कभी भी, कोई भी यह जानकारी नहीं मांगेगा कि यह फोटो

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2

किसका है। आप पर मिथ्यवादी होने का आरोप कोई नहीं लगा सकेगा। आज इस घटना को लगभग 15 वर्ष बीत चुके हैं और यह बात सत्य सिद्ध हुई है कि किसी भी व्यक्ति ने **''किसका फोटो है''?** यह कभी नहीं पूछा। बल्कि अब हम स्वयं ही हमारे पूज्य गुरूजी का चित्र हैं, बोलकर परिचय देने लगे हैं।

भोपाल प्रवास के दौरान श्री बुआ साहब शिन्दे ने अनुरोध किया कि चिकित्सा की दृष्टि से रायपुर का प्रस्ताव नहीं जमा, अतः ग्वालियर का ही प्रयास किया जावे, क्योंकि सभी मेडिकल सुविधायें वहां उपलबध हैं। इसके लिये आदरणीय बुआ साहब ने रहने ठहरने के अलावा सभी तरह की सुविधायें देने का आश्वासन दिया था, पर यह भी कभी सम्भव नहीं हुआ, जिसका कारण गुरूजी बेहतर जानते होंगे।

पूज्य गुरूजी के साथ 7 वर्षों में लगभग 40 हजार किलोमीटर की यात्रा की थी और इस दौरान कभी कोई खराबी कार में नहीं आई और न ही कभी कार का पहिया पंचर हुआ क्योंकि गुरूजी को यह मालूम था कि उनके ड्रायवर को न पहिया बदलना आता है और न अन्य किसी तरह का ज्ञान कार के संबंध में है। कार द्वारा इस लम्बे सफर में हमें इस बात का आभास रहता था कि गुरूजी के साथ रहने से कभी कोई परेशानी नहीं होगी और जरूरत पड़ने पर आवश्यक मदद भी मिल जायेगी, क्योंकि वे मानव शरीर में साक्षात् परमेश्वर और वीतरागी थे, जो उनके साथ सफर के दौरान अनेकों घटनाओं से प्रमाणित हो चुका है। पर धन्य हैं गुरूजी! जो हमेशा इस दौरान कहते थे ''आप साथ रहते हैं तो हमें कोई चिन्ता नहीं''।

हमारे तमाम जन्मों का पुण्यफल था जो हमें और हमारे पुत्र राजेश को भी अनेकों बार साक्षात् परमेश्वर को उनके शिष्यों के द्वार पर ले जाकर अपने अपने जीवन को धन्य करने का अवसर मिला। ऐसे महान गृहस्थ संत और योगी के द्वारा पूरे परिवार को शिष्यत्व देना अपने आप में भाग्योदय का प्रतीक है जो निश्चय ही अनेकों जन्मों का पुण्य उदय होने पर सम्भव होता है। उनका इतना सामीप्य पाना भी उनकी ही कृपा है। धन्य हैं! करूणामयी मूर्ति पूज्य भगवान वासुदेव जी, जिन्होंने हमारा जीवन कृतार्थ कर दिया। हम और हमारे समस्त परिवार का रोम रोम उनका ऋणी है और परम पूज्य की दया और करूणा के कारण ही आज हम सुखी और सम्पन्नता का जीवन यापन करते हुए हर पल उस विराट, महान, सरल, ममतामयी एवं वात्सल्य की मूर्ति को याद करते हैं, जो जन्म से ही योगी और मात्र ''अपनों'' का कल्याण करने मां की कोख से अंतिम बार अवतरित हुए थे।

23 जुलाई 1997 के गुरूपर्व के बाद पूज्य गुरूजी भोपाल में विराजमान रहे और हम सभी को उनका सामीप्य मिला जो हमारे जीवन का बहुमूल्य समय था। तदुपरांत हम अपने परिवार के साथ गुरूजी को लेकर 30–31 अगस्त 1997 को मुंगेली निकले थे। स्वयं गुरूजी की एवं पूज्य गुरूजी के साथ कार यात्रा का यह अंतिम अवसर था। रास्ते में जो कुछ हुआ और मुंगेली आश्रम पहुंचकर पूज्य गुरूजी के सानिध्य में हमने जो कुछ देखा–सुना उसे हम अपने हृदय की गहराईयों से बाहर लाकर अपनी और पूज्य गुरूजी की उस पीड़ा को बांटना नहीं चाहते।

आज तक पूज्य गुरूजी के साथ जितनी यात्रायें हुईं उसमें कभी कभी हमारा पुत्र राजेश साथ रहा है। भोपाल की गुरूपूजा के बाद हमारा पूरा परिवार भी गुरूजी को विदा करने गये और ऐसा संयोगवश ही हुआ। यह मात्र गुरूजी ही जानते होंगे कि यह उनका कार यात्रा का अंतिम सफर हमारे साथ हुआ था और हमारे पूरे परिवार को उन्होंने अंतिम विदाई का यह पुण्य अवसर देकर परिवार के सभी सदस्यों को कृपापात्र बनाया था। हमारा परिवार ऐसे सद्गुरू को प्राप्त कर अपने को सौभाग्यशाली मानते हुए, उन्हीं के चरणों में साधनारत रहने की विनम्र प्रार्थना करते हैं और गुरू कृपा से ऐसा हो रहा है।

1 जून 1995 को शहडोल से कुछ लड़के मुंगेली एक सांस्कृतिक कार्यक्रम के लिये गये थे। उसी समय गुरूजी से दीक्षा का भी निवेदन किया था। गुरूजी ने 13 जून 1995 को कुंभ के दिन दीक्षा देने का आश्वासन दिया था। और उसी दिन 13 शिष्य एक साथ गुरूजी द्वारा दीक्षित हुए।

गुरूजी पलंग पर बैठ गये और सभी शिष्यों को चरणों में जल, अक्षत, सिंदूर एवं पुष्प चढ़ाने को कहा। गुरूजी ने कहा, आज से आप सभी गुरूजी के सिपाही हैं और अत्यंत भाग्यशाली हैं क्योंकि आज से आपको गुरूजी का संरक्षण प्राप्त हो रहा है। मैं आपका दायित्व ग्रहण करता हूं जो जन्मजन्मांतर रहेगा। तुम सबका कल्याण इन्हीं चरणों से होगा। आप लोग जंगल, पहाड़, नदी कहीं भी रहें, मौत सामने नाच रही हो आप गुरूजी को याद करियेगा, कोई न कोई सहायता के लिये अवश्य खड़ा होगा यह मेरा आश्वासन है। गुरूजी से स्नेह बढ़ाने का प्रयास करना। अच्छा कमाओ, अच्छा पहनो, पर आदमी को आदमी समझना, अफसर बनो लेकिन चपरासी को भी आदमी समझना। कोई भी पूछे कि आपको गुरूजी से क्या मिला? तो आप कहियेगा कि हमें गुरू भक्ति योग की दीक्षा मिली है। इस तरह 13 लोग एक साथ दिव्य संरक्षण को प्राप्त कर धन्य हुए।

गुरूजी के आदेशानुसार सामूहिक ध्यान की योजना को साकार रूप देकर एक शिष्य परिवार को टीम की भांति विकसित किया। एक किराये का कमरा लेकर, जिसका नाम मठ रखा गया वहां प्रत्येक दिन सामूहिक ध्यान होने लगा। यहां पूज्य गुरूजी का चित्र रखकर यह कार्यक्रम होता

था तथा गुरूजी के संबंध में चर्चा एवं अनुभवों से एक दूसरे को परिचित कराने का क्रम चलता था। एक दिन इसी कमरे में सभी शिष्यों ने विशेष अनुभव किए और लगा कि पूरा कमरा चार्ज हो गया है। वहां पहुंचने वाले हर व्यक्ति को, जो गुरूजी को जानता भी नहीं था, बड़ी अपार शान्ति का अनुभव हो रहा था।

1996 का गुरूपर्व शहडोल में मनाया गया था। यह पर्व बड़ी धूमधाम और एक अविस्मरणीय आनंद के साथ शहडोल के शिष्यों ने मनाया था। वहां श्री गुरू प्रसाद जी पांडे तथा कुछ अन्य शिष्यों को छोड़कर सभी युवक शिष्य थे जिनके हृदय की गहराईयों में गुरूजी बस गये थे। गुरूजी द्वारा शहडोल पर्व के समय उपयोग किया गया पलंग एवं अन्य सामान और उससे जुड़ी उनकी भावनायें तथा पूज्यवर के प्रति उनकी श्रद्धा और भक्ति के कारण उन सभी वस्तुओं को सहेजने का संकल्प कर, उसी किराये वाले कमरे, जिसे मठ का नाम दिया था, में ले आये जो इन शिष्यों का सामूहिक ध्यान केन्द्र बन चुका था। जब यह गुरूजी को बताया गया तब पूज्यवर ने कहा–''अरे! यह तो आश्रम हो गया, अब जो भी वहाँ आयेगा, उसका कल्याण होगा, नशा चढ़ेगा।'' इन शिष्यों की आराधना और स्तुति ने गुरूजी का आशीष पाया और वे धन्य हो गए।

पूज्य गुरूजी द्वारा जब शहडोल आश्रम कहकर आशीष दिया गया था उसके बाद श्री संतोष शुक्ला के पिताजी श्री रामनारायण प्रसाद शुक्ला ने अपने घर वाले प्लाट में आश्रम बनाने की अनुमति दी कि जितनी जमीन चाहिये, आश्रम बनवा लिया जाये। इस भवन में आश्रम बनवाकर 4–3–1999 को महाशिवरात्रि के दिन पूज्य गुरूजी का चित्र मठ से लाकर स्थापित किया गया तथा आश्रम का स्थापना दिवस इसी दिन हर वर्ष मनाया जाने लगा। गुरू जी की कृपा और आशीष से यह आश्रम एक

भव्य रूप लेता जा रहा है। यहां ध्यान कक्ष बना हुआ है। पूज्य गुरूजी की आरती एवं गुरूजी के शिष्यों के सत्संग का केन्द्र बन चुका है।

गुरू जी ने अपने इन शिष्यों को ''वानर सेना'' का नाम बड़े वात्सल्य भाव से दिया था। यह अब सद्‌गुरू मिशन का रूप लेकर सद्‌गुरू पब्लिक स्कूल चला रहा है, जिसमें मूल्य आधारित शिक्षा बच्चों को दी जाती है। शिक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाते हुए भारतीय गुरूकुल परम्परा को आधार बनाते हुए पश्चिम की वैज्ञानिक एवं विकासवादी सोच को भी शामिल किया गया है। बच्चों को व्यवहारिक ज्ञान के साथ साथ व्यवसाय एवं वैज्ञानिक आधार देना इसका लक्ष्य है। पूज्य गुरूजी के आदर्शों के प्रचार प्रसार और बच्चों को वैदिक मंत्रोच्चारण ध्यान धारणा एवं आरती के माध्यम से संस्कार देना, उन्हें उच्च आदर्शमय नागरिक बनाना और इस महान दिव्यात्मा की ज्योति को प्रज्जवलित रखना भी, लक्ष्यों में शामिल है।

. शहडोल शिष्य परिवार इस आश्रम को देवालय या तीर्थ स्थल के समान मान्यता दे रहे हैं जहां भजन, आरती, ध्यान के साथ गुरूजी को भोग लगाकर प्रसाद वितरण नित्य हो रहा है। सुबह इस कार्यक्रम के अलावा संध्या को आरती, ध्यान नियमित होता है और गुरूजी की कृपा का आभास वहां के शिष्य परिवार निरंतर कर रहे हैं।

शहडोल परिवार का विस्तार होता जा रहा है और साथ ही रीवा एवं आसपास के अन्य लोग भी इससे जुड़ते जा रहे हैं। पूज्य गुरूजी की दिव्यानुभूति हर शिष्य यहां कर रहा है और भविष्य में यह सद्‌गुरू मिशन जिसके तहत सद्‌गुरू पब्लिक स्कूल चल रहा है, निश्चय ही पूज्य गुरूजी की स्मृति को अमरत्व प्रदान करने में सहायक होगा।

यह भी उल्लेखनीय है कि शहडोल परिवार के सभी शिष्यों का बहुमूल्य सहयोग और शिवपुर धाम मुंगेली में मनाये जाने वाले गुरूवर का जन्म दिवस 23 जुलाई, निर्वाण दिवस 14 मार्च में सक्रिय भागीदारी तथा समर्पण भाव हर आगन्तुक के लिये प्रेरणा प्रदान करता है। 23 जुलाई को जन्मोत्सव पर्व के लिये इस परिवार की भोजन व्यवस्था के लिये आजीवन आर्थिक सहयोग राशि का संकल्प भी अत्याधिक सराहनीय है जो उस परिवार की पूज्य गुरूवर के प्रति आस्था एवं श्रद्धा भक्ति तथा विश्वास की दृढ़ता का द्योतक है।

इस सद्‌गुरू मिशन का उद्‌देश्य सभी वर्ग के अनाथ बच्चों को निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था, सामाजिक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण हेतु जल प्रबंधन, शुद्ध पेयजल संरक्षण, वृक्षारोपण एवं भूजल स्तर बढ़ाने हेतु कार्यों को सम्मिलित किया गया है। साथ ही अल्प आयु वर्ग के बच्चों, महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने का संकल्प भी इस सद्‌गुरू मिशन ने अपने सद्‌गुरू को भक्तिमय श्रद्धांजलि के रूप में शामिल किया है। इस शहडोल परिवार ने जिस ज्योति को प्रज्जवलित रखने का संकल्प लिया है वह गुरूकृपा से अवश्य लक्ष्य प्राप्ति में सहायक होगी।

गुरू जी का स्वास्थ्य निरंतर गिर रहा था क्योंकि उनका शरीर अपने अनेकों शिष्यों की व्याधियों को अपने में समेट चुका था। 1997 की गुरू पूजा का भोपाल में आयोजन भी तय हो चुका था। गुरू जी को भोपाल लाने की योजना हम निरंतर बना रहे थे और यह भी ज्ञात था कि गुरूजी को लाना कठिन होगा। श्री जे. के. जैन ने एम्बेसडर कार इस ढंग से तैयार की कि गुरूजी सोते हुए कार से आ सकें। डॉक्टर अरविन्द चौहान को साथ लेकर मुंगेली पहुंचकर उन्होंने देखा कि गुरूजी अधिक अस्वस्थ हैं और मुंगेली के डॉक्टर अग्रवाल ने उन्हें सफर न करने की सलाह दी थी। गुरूजी ने हमें फोटो से पूजा करने की सलाह दी परन्तु उनके मनोभाव से यह लगा कि गुरूजी स्वयं भोपाल आना चाहते थे।

डॉक्टर अरविन्द को लेकर श्री जे. के. जैन ने डॉक्टर अग्रवाल के घर जाकर सारी चर्चा की तथा उनसे अनुरोध किया कि जो भी टेस्ट जिस किसी इंस्ट्रूमेंट से आपने किये हैं, क्या उनसे और अधिक श्रेष्ठ इन्स्ट्रूमेंट से आप फिर से गुरूजी के शरीर का परीक्षण कर सकेंगे? डॉक्टर साहब उनकी बात मान गये और फिर से परीक्षण करके मदद करने का आश्वासन दिया। शाम को तथा रात में डॉ. अग्रवाल ने फिर से गुरूजी के शरीर का परीक्षण किया तथा बताया कि उन्हें आराम से ले जाने में सफर में कोई खतरा नहीं होगा। अन्धा क्या चाहे–दो आंखें? यही हाल श्री जैन तथा डॉक्टर अरविन्द का था। यह सुनकर गुरूजी के चेहरे पर जो खुशी के भाव देखे गए उन्हें शब्दों में व्यक्त करना सम्भव नहीं है। गुरूजी ने अशोक भैया को आवाज दी और कहा कि डॉक्टर साहब ने चलने की इजाजत दे दी है–चलो।

अशोक भैया सहित बड़े आराम से कार में लेटाकर पूज्य गुरूजी को मुंगेली से लेकर यह दल रवाना हुआ। चिल्पीघाटी पर होटल के सामने गाड़ी रोककर गुरूजी को जल पान कराया। इस सफर में श्री जैन व डॉ. अरविंद ने अनुभव किया कि गुरूजी का स्वास्थ्य, जैसा वे चाहें, उसी अनुरूप हो जाता है। उनका बड़ा अनुग्रह हम भोपालवासियों पर है जो 23 जुलाई 1997 का अंतिम पर्व उनके शरीर में रहते हुए भोपाल में मनाया गया था। ऐसा लगा मानो पूज्य गुरूजी ने भोपालवासियों की अन्तर्आत्मा की आवाज सुनकर ही अपने स्वास्थ्य की दिशा बदल दी थी।

पूज्य गुरूजी की सशरीर उपस्थिति में 23 जुलाई 1997 का गुरू पर्व अंतिम था जो उनकी दिव्य शक्तियों और उनके ही दृढ़ संकल्प और भोपालवासियों के प्रति उनका अनुराग का प्रतीक (ऐसा हम मानते हैं) बनकर मनाया गया था, जिसकी प्रशंसा पूज्य सद्‌गुरू ने स्वयं भी की थी। सभी शिष्य परिवार के लोगों के प्रति गुरूजी का अनुराग समान था और एक साथ गुरू पर्व के मंच से जहां तक हमारी जानकारी है पूज्य गुरू जी से 101 परिवार दीक्षित हुए थे जिसमें समस्त शिष्यों की संख्या सपरिवार 146 थी। सामूहिक दीक्षा का यह प्रथम और अंतिम अवसर था। इसके बाद गुरूजी द्वारा उनके परिवार में अन्य कोई सम्मिलित नहीं किया गया।

पूज्य गुरूजी की स्वीकृति मिलने के बाद इस कार्यक्रम को सुचारू रूप से सम्पन्न करने के लिये विभिन्न समितियां बनाई गईं थीं। भोपाल बड़ा शहर होने से व्यवस्था करना आसान नहीं था। श्री जे. के. जैन एवं परिवार श्री डी. एस. राय, श्री दिलीप मराठे, श्रीमती सुलभा माकोड़े एवं परिवार, श्रीमती प्रतिभा गुर्जर, श्री नेपाल सिंह एवं परिवार, श्री चन्द्र भूषण शर्मा, श्री बसंत राठौर, श्री कृष्णा कराडे आदि ने आवास वाहन एवं भोजन व्यवस्था, कार्यक्रम स्थल की सज्जा आदि का भार सम्हाला था।

कार्यक्रम रविशंकर नगर स्थित माध्यमिक शिक्षा मण्डल के हाल में किया गया था। 21 जुलाई 1997 से भोपाल में तेज पानी बरस रहा था परन्तु गुरूजी की कृपा से चमत्कारिक रूप से बरसात 22–07–97को दोपहर बाद बन्द रही और कार्यक्रम सम्पन्न होने के बाद ही 24–07–1997 को बरसात पुनः शुरू हुई। गुरू पर्व को मनाने के लिये पूज्य गुरूजी को एक चल समारोह के रूप में श्री जैन साहब के निवास से कार्यक्रम स्थल तक लाया गया। इस चल समारोह में लगभग 15 वाहन शामिल थे।

गुरू पूजन एवं दीक्षा कार्यक्रम के अलावा संध्या का कार्यक्रम आदरणीय रिटायर्ड चीफ जस्टिस एवं मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष श्री सोहनी साहब की अध्यक्षता में नव निर्मित आरती गायन से शुरू किया गया था। पूज्य गुरूजी का सम्बोधन एवं आशीष वचन आगे दिया गया है। इस महान पर्व पर सदगुरू की आरती ''एक अमरत्व कृति'', स्तुति वन्दन और गुरू नगरी की महिमा का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा।

अ. सद्गुरू की आरती – एक अमरत्व कृति

गुरूजी के शिष्य राजू काण्णव को याद करना आवश्यक होगा क्योंकि वे काफी विचलित थे और उनके मन में इस बात की पीड़ा थी कि इस महान योगी को रोज स्थूल रूप से स्मरण करने हेतु कोई विधि नहीं है। अतः श्री घुसे साहब नागपुरवाले, जिन्हें गुरूजी ने 1996 के नागपुर प्रवास के दौरान ही इस जन्म में मुक्त होने का आशीष दिया था, से राजू काण्णव ने उन्हें गुरूजी की आरती लिखने का अनुरोध किया। श्री घुसे जी ने कहा कि वे कोई लेखक या कवि नहीं हैं और बिना गुरूजी की प्रेरणा के और बिना उनके मार्गदर्शन के यह महान कार्य सम्भव नहीं होगा। यह बात भी राजू द्वारा जब गुरूजी तक पहुंचाई गई तब पूज्य

गुरूजी ने कहा कि इस अमरकृति का निर्माण श्री घुसे द्वारा ही होगा और यह रचना अमर होगी–ऐसा आशीष भी मिला।

यहां श्री घुसे साहब का परिचय देना आवश्यक होगा–श्री श्रीधर सीताराम पंत घुसे। नागपुर निवासी घुसे साहब से गुरूजी के शिष्य राजू काण्णव हमेशा चर्चा किया करते थे। घुसे साहब भी वर्धा में तकवाले जी के यहां गुरूजी से मिल चुके थे और उन्हें सभी धर्म के लोगों को ईश्वर का सानिध्य दिला देने वाले योगी मानते थे। श्री घुसे संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड विद्वान एवं व्याकरणाचार्य हैं और उन्होंने अपने गुरू से हमारे सद्गुरूजी से आध्यात्मिक चर्चा और मार्गदर्शन की जिज्ञासा के लिये आज्ञा मांगी तो उन्होंने बताया कि अवश्य उनके पास जावें–वे तो जन्मसिद्ध योगी हैं।

श्री घुसे जी ने उन्हें लोकोत्तर महापुरूष बताते हुए जन्म से ही सिद्धयोगी और जीवन मुक्त के रूप में ही इस संसार में अवतीर्ण हुए हैं जो साध्य नहीं सिद्ध हैं। गुरूजी को संस्कृत, संगीत, ज्योतिष, आयुर्वेद, होम्योपैथी का सफल चिकित्सक निरूपित किया। गुरूजी को स्वमेव प्राप्त सिद्धयोग का सदगुरूपद धर्म, पंथ, संप्रदाय, निरपेक्ष था। इसी कारण से हिन्दु, मुसलमान, ईसाई, सिख, बौद्ध व जैन आदि सभी धर्म पंथों के स्त्री पुरूष उनसे अनुग्रहित रहे, गुरूजी लोगों को उनके धर्मों के अनुसार साधना प्राप्ति की राह बताते थे। एक नवीन तथा अद्‌भुत मार्ग दिखाने वाले, मातृवत् हमारे श्री वासुदेव जी की जय हो।

23 जुलाई 1997 के कार्यक्रम की पत्रिका जैसे ही श्री घुसे जी को मिली, वह एक विशिष्ट ध्यान अवस्था में पहुंच गये। यही वह क्षण था जब उन्हें इस अमर कृति को रचने का संदेश और प्रेरणा गुरूजी द्वारा दी गई और वर्तमान आरती के 4 छन्द उन्होंने लिख लिये।

इसके आगे उन्हें कुछ समझ नहीं आया कि आगे क्या लिखा जाये। तब गुरूजी को याद करते हुए उनके मन में आया कि हमने गुरूजी से कुछ मांगा नहीं है। इसके बाद ही आरती के अन्तिम 2 छन्दों की रचना गुरूजी की प्रेरणा से श्री घुसे जी ने की थी।

इस अमर कृति को, भोपाल, जहां गुरूजी विराजमान थे, भेजा गया। उसका श्री घुसे द्वारा लिखित आरती का पन्ना श्री जे. के. जैन को गुरूजी ने दिया तथा तत्काल उसका फ्रेम बनवाने का आदेश दिया जो आज भी उनके पास सुरक्षित है। 9 जुलाई 1997 को रचित यह आरती पूज्य गुरूजी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रकट करती है और आज उसकी धुन और सत्य के पुजारी की महिमा का वर्णन चिरकाल तक इस महान योगी की गाथा के रूप में हम सभी को प्रेरणा देती रहेगी और स्वयं को सौभाग्यशाली होने का आभास कराती रहेगी।

प.पू. गुरूजी की आरती का मूल पाठ

ॐ जय जय जय गुरूजी
जय गुरूदेव दयानिधि, कृपासिंधु जय हो।
जय जय करूणासागर, वासुदेव जय हो।। ध्रु.
अष्टसिद्धि तव दासी, नवनिधि के स्वामी।
जनदुखहरण–परायण, सबके सुखकामी।। 1
जन्मसिद्ध तुम योगी, नित परहित–कर्ता।
साधकजन–पथदर्शक, शरणागत–त्राता।। 2
शुद्ध बुद्ध तुम मुक्त भि, निश्चल अविनाशी।
सत्–चित्–सुख–घन ईश्वर, भक्तहृदय–वासी।। 3
गुरूजी, हम पुत्रों की, तुम वत्सल जननी।

तव गुणवर्णन करते, मौन बने वाणी।। 4
एक यही वर मांगें, हम तव चरणों में।
अविचल भक्ति तुम्हारी, सदा रहे मन में।। 5

(बुधवार, दिनांक 9 जुलाई 1997, दोपहर 1 बजे)

1997 पर्व की शुरूआत गुरूजी की आज्ञानुसार उक्त आरती के साथ हुई थी।

प.पू. श्री सद्गुरू गुरूजी की आरती
सरल शब्दार्थ तथा गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ–श्री घुसे द्वारा

मूल पंक्ति : ***ॐ जय जय जय गुरूजी।***

शब्दार्थ : ***परमात्म–स्वरूप गुरूजी की तीन बार जयकार हो।***

गूढ़ अर्थ : ॐ परब्रह्म परमात्मा का वाचक शब्द है, जिसके स्मरण मात्र से परमात्मा का बोध या अनुभूति होती है। सम्पूर्ण सृष्टि के आदि तत्व परमात्मा से बढ़कर मंगल क्या हो सकता है? इसलिये **ॐ** से उसका आरंभ में उल्लेख है। गुरूजी सर्वोत्कर्षशाली मानव–देहधारी व्यक्ति रूप होने पर भी उपनिषद वचन (ब्रह्मविद ब्रह्मैव भवति) अनुसार स्वयं परब्रह्मरूप है अतः गुरूजी की त्रिवार जय हो।

मूल पंक्ति : ***जय गुरूदेव दयानिधि, कृपासिंधु जय हो।***
जय जय करूणासागर, वासुदेव जय हो।। ध्रु.।।

शब्दार्थ : ***दया के निधि, कृपा के सिंधु करूणा के सागर वासुदेव अर्थात् गुरूजी आपकी तीन बार जयकार हो।***

गूढ़ अर्थ : दया, कृपा तथा करूणा ये तीनों शब्द समान्यतया एक ही अर्थ के प्रतीत होते हैं, परन्तु तीनों के अर्थों में महान भेद है। दूसरे के दुःख की अंतर में समान अनुभूति दया कहलाती है। (दया में दुःख दूर करने की इच्छा या प्रयास आवश्यक नहीं होते।) हमारे गुरूदेव वासुदेव (गुरूजी) इस दया के खजाने हैं। कृपा परमेश्वर की अनुग्राहिका शक्ति को कहते हैं। परमेश्वर दया कर सकता है, पर निर्गुण–निराकार होने से कृपा नहीं कर सकता। कृपा करने के लिए उसे मानव–देह धारण कर सद्गुरू का रूप लेना पड़ता है। गुरूजी सद्गुरू हैं, इसीलिए कृपा अर्थात् अनुग्रह के अधिकारी ही नहीं बल्कि उसके अथाह सागर भी हैं। इतना ही नहीं, विश्वरूप होने के कारण चराचर सृष्टि में व्याप्त सजीव निर्जीव सभी पदार्थों की पीड़ा वे अनुभव करते हैं। इसी कारण उन सबके प्रति उनका करूणा भाव होता है। प्रत्येक के प्रारब्ध–भोग के अनुसार सबकी पीड़ा हरण कर ईश्वर की सृष्टि–संचालन में वे बाधा तो नहीं उपस्थित करते, परंतु करूणा से वे हमेशा भरे होते हैं। सागर में जैसे सर्वत्र पानी ही पानी भरा होता है वैसे ही उनके अन्तर में सर्वत्र करूणा ही करूणा भरी रहती है। इसलिए वे करूणा के सागर भी हैं। ऐसे हमारे सद्गुरू वासुदेव की तीन बार जयकार हो।

मूल पंक्ति : ***अष्टसिद्धि तव दासी, नवनिधि के स्वामी।***
जनदुखहरण–परायण, सबके सुखकामी।।

शब्दार्थ : ***अणिमादि आठ सिद्धियां आपकी दासियां हैं, दूरदर्शन आदि नौ निधिओं के आप स्वामी हैं। लोगों के दुःख दूर करना यही आपके जीवन का एकमात्र कार्य है, तथा आप सबके सुख की ही कामना करने वाले हैं।***

गूढ़ अर्थ : जब कोई भी मानव–देहधारी सिद्ध पुरूष होता है तो वह योगी होता ही है। योगशास्त्र के अनुसार, ईश्वरी–योजना के कारण, उस सिद्ध पुरूष को संकल्पित कार्य करने के लिए अणिमा, गरिमा, महिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकामी, ईशित्व एवं वशित्व नामक ईश्वर की शक्तिरूप आठ सिद्धियां स्वेच्छा से सहकार्य करती हैं। इसीलिए ये सिद्धियां गुरूजी की दासियां हैं।

दूरदर्शन, दूरश्रवण, परकायाप्रवेश (दूसरे के शरीर में प्रवेश कर उस शरीर के द्वारा कार्य करना), जीवदान, जीवहरण (ईश्वरी योजना के अनुसार किसी भी जीव को देह से मुक्त करना), सर्गहरण (आवश्यक नई वस्तुओं का स्वरूप से निर्माण), सर्गकरण (अनावश्यक वस्तु को मूल स्वरूप में विलीन करना), अतीतअनागतज्ञान (भूतकालीन तथा भविष्यकालीन घटनाओं को जानना), कायव्यूह (एक ही समय अपने शरीर के समान अनेक शरीर धारण करना) ये नौ

ईश्वर के विशेष गुण नवनिधि के नाम से विख्यात हैं। गुरूजी आप इन नवनिधियों के स्वामी हैं। परमार्थिक दृष्टि से सद्गुरू होने के नाते गुरूजी ऐसे जीवों के दुःख दूर करने में अर्थात् उनका उद्धार करने में ही निरंतर लगे रहते हैं।

मूलपंक्ति : ***जन्मसिद्ध तुम योगी, नित परहित–कर्ता।***
साधकजन–पथदर्शक, शरणागत–त्राता।।

शब्दार्थ : ***गुरूजी आप जन्मतः सिद्धावस्था प्राप्त योगी हैं, निरंतर दूसरों के हित के कार्य ही आप करते हैं, साधक (साधना मार्ग में लगे हुए) जनों को अपने लक्ष्य का मार्ग आप दिखलाते रहते हैं, एवं जो आपकी शरण में आता है, उसकी आप रक्षा करते हैं।***

गूढ़ अर्थ : योगी पुरूष दो प्रकार के होते हैं। पूर्व जन्म में साधना करते–करते देहपात होने के कारण अगले जन्म में उस साधना की पूर्ति कर सिद्धावस्था प्राप्त करने वाले, तथा पहले किसी भी जन्म में सिद्धावस्था प्राप्त कर शरीर छोड़ने पर भी ईश्वरी इच्छानुसार ईश्वर के ही कार्य के लिए पुनः शरीर धारण करनेवाले। पहले प्रकार के योगी को साधन–सिद्ध योगी कहा जाता है, एवं दूसरे प्रकार के योगी को जन्म–सिद्ध योगी कहा जाता है। गुरूजी दूसरे प्रकार के योगी हैं। वे अमरीका के ब्रिटिश–गुयाना जैसे प्रदेश में हिन्दु परिवार में जन्म

लेनेपर भी पूर्व जन्म में ही सिद्धावस्था प्राप्त कर चुके थे। केवल ईश्वरी इच्छानुसार वहां शरीर धारणकरते हुए बाल्यावस्था में ही भारत में आकर हम लोगों के उद्धार के लिए कार्यमग्न हुए। इसी कारणवश मुमुक्षु तथा साधक जनों के आध्यात्मिक हित में आप निरंतर लगे रहते हैं।

मूल पंक्ति : ***शुद्ध बुद्ध तुम मुक्त भि, निश्चल अविनाशी।***
सत्–चित्–सुख–घन ईश्वर, भक्तहृदय–वासी।।

शब्दार्थ : ***गुरूजी आप शुद्ध (पवित्र), बुद्ध (ज्ञानरूप) एवं मुक्त (बंधनरहित), भी हैं। आप निश्चल (सदास्थिर), अविनाशी (विनाशरहित, अमर) हैं। (इतना ही नहीं तो) सत् (सदा अस्तित्वशाली) चित् (चैतन्यरूप) एवं सुख (आनंद) के घनीभूत रूप होने के नाते साक्षात् परमेश्वर हैं। आप भक्तों के हृदय में सदा निवास करते हैं।***

गूढ़ अर्थ : वेदान्तशास्त्र में आत्मा नित्य शुद्ध, नित्य बुद्ध तथा नित्य मुक्त होने का स्पष्ट निर्देश है। आत्मतत्व कभी अशुद्ध, अपवित्र नहीं होता। इसीलिए वह नित्य शुद्ध कहा गया है।

परब्रह्म–परमात्मा सर्वत्र व्याप्त होने के नाते उसे हिलने–डुलने के लिए कोई स्थान ही शेष नहीं है। इसीलिए वह चलनवलन–रहित (अचल) है। जो उत्पन्न

होता है उसी का नाश होता है। जो कभी उत्पन्न ही नहीं होता उसका विनाश कैसे संभव है? आत्मभिन्न वस्तुएं उत्पन्न होती हैं इसीलिए उनका विनाश भी होता है। परन्तु आत्मतत्व सत्‌रूप होने के नाते उसकी उत्पत्ति ही नहीं है, इसीलिए उसका नाश भी नहीं है। इसीलिए वह अविनाशी कहलाता है।

जिस व्यक्ति को आत्मसाक्षात्कार रूप आत्मज्ञान हो जाता है वह शरीरधारी होने पर भी आत्मरूप बन जाता है। इसीलिए वह चैतन्यरूप और ज्ञान रूप भी हो जाता है।

गुरूजी, आप स्वयं परमेश्वर स्वरूप होने के नाते परमेश्वर के ये सारे गुण विशेष आप में घनीभूत होकर (ठूंस–ठूंसकर) भरे हुए हैं। वस्तुतः परमेश्वर स्वरूप होने के कारण आप विश्वरूप तथा विश्वाकार हैं। आप नहीं है, ऐसा कोई भी स्थान, कहीं भी शेष नहीं है। फिर भी यह सत्य सब की समझ में नहीं आ सकता। जो भक्त उनके प्रति संपूर्णतया समर्पित है उस भक्त को अपने अन्दर गुरूजी का निवास होने का अनुभव होता है। इसीलिए आप भक्त हृदयवासी हैं।

मूल पंक्ति : ***गुरूजी, हम पुत्रों की, तुम वत्सल जननी।***
तव गुणवर्णन करते, मौन बने वाणी।।

शब्दार्थ : ***गुरूजी, हम आपके (भक्त नहीं) पुत्र हैं, और आप हमारी प्रेममयी मां है (अब तक की कड़ियों में आप के गुणों का वर्णन करने पर भी वह वर्णन अपूर्ण है इसलिए) आपके गुणों का वर्णन करना असम्भव है। इसीलिए हमारी वाणी मौन हो जाती है।***

गूढ़ अर्थ : ईश्वर जीवों के कर्म के अनुसार फलदाता है। इसीलिए वह पिता की तरह कठोर हो सकता है, होता है। परन्तु उसी का मानव देहधारी रूप सद्‌गुरू, माता की तरह कोमल हृदय होता है। अध्यात्मशास्त्र के अनुसार जब तक कोई आत्मसाक्षात्कारी पुरूष किसी भी व्यक्ति में अपनी वह शक्ति संक्रमित नहीं करता, तब तक वह सद्‌गुरू नहीं बन सकता। ऐसा शक्ति संक्रमित व्यक्ति ही शिष्य कहलाता है। इन दोनों के बीच आध्यात्मिक माता–पुत्र का नाता स्थापित हो जाता है। वह शक्ति केवल कृपा रूप होती है। इसी कारण हमारे लिए गुरूजी सामान्य महापुरूष ही नहीं है, बल्कि वत्सल (पुत्रों के प्रति अपार स्नेह रखने वाली) और समस्त जीवों का उद्धार कर हमारी मुक्ति का प्रयास करने वाली मां है। और हम उस वत्सलता के अधिकारी पुत्र हैं, केवल भक्त या शिष्य नहीं। परमात्मा का वर्णन करते करते जिस प्रकार वेद मौन हो जाते हैं, उसी

प्रकार गुरूजी का वर्णन करते करते हम सामान्यों की वाणी असमर्थ होकर चुप हो जाती है। हमारी मूकता ही गुरूजी का यथार्थ वर्णन है।

मूल पंक्ति : ***एक यही वर मांगें, हम तव चरणों में।***
अविचल भक्ति तुम्हारी, सदा रहे मन में।।

शब्दार्थ : ***गुरूजी, हम आपके चरणों में एकमात्र यही मांग करते हैं कि, हमारे मन में आपके प्रति कभी न डिगने वाली भक्ति हमेशा हमेशा बनी रहे।***

गूढ़ अर्थ : वस्तुतः, एक असामान्य महापुरूष, और हमारे लिए मातृरूप होने वाले सद्गुरू (गुरूजी) का वर्णन करना असम्भव हो गया है। परन्तु गुरूजी के प्रति हमारा पुत्र का नाता होने के कारण हमारा मांगने का अधिकार भी अभी शेष है। इसीलिए इस अन्तिम कड़ी में एक पुत्र अपनी मां के प्रति याचना करता है। गुरूजी अष्टसिद्धि तथा नवनिधि के स्वामी हैं, इसीलिए वे हमें, जो मांगें, वह दे सकते हैं। परन्तु वे सारी चीजें नश्वर होंगी, नाशवान होंगी। उन चीजों को मांगने के बदले गुरूजी सच्चिदानंदरूप परब्रह्म होने के नाते उनकी वही सच्चिदानंदरूपता हमें उनसे मांगनी चाहिए, पर वह मांगने की चीज नहीं है। गुरूजी के प्रति सम्पूर्ण शरणागति और अनन्यता होने पर गुरूजी स्वयं स्वेच्छा से यह सच्चिदानंदरूपता हमें दे सकते हैं। परन्तु

उसके लिए उनके चरणों के प्रति आत्मनिवेदन रूप (आत्मसमर्पण रूप) भक्ति ही होनी चाहिए, और वह भक्ति भी स्थिर और सर्वकाल होनी आवश्यक है। गुरूजी के चरणों में ऐसी भक्ति हमारे प्रयास से साध्य नहीं है। वे हमसे कराएंगे तभी वह भक्ति हमसे हो सकती है। वैसी अचल भक्ति का वरदान ही गुरूजी के चरणों से अन्त में मांगना सर्वथा उचित है।

पूज्य गुरूजी के सभी शिष्य श्री घुसे जी के आभारी हैं जिन्हें हमारे गुरूवर का आशीष मिला जिसके फलस्वरूप उन्होंने हमारे गुरूजी के पूर्ण व्यक्तित्व को शब्दों के चयन के साथ आरती के हर छन्द में लिखकर गुरूजी के रूप में मिले उस वीतरागी और अरिहंत का गुणगान चिरकाल तक आरती द्वारा करते रहने का सुअवसर प्रदान किया। इस अपार आनन्द के अवसर पर भाव विभोर होते हुए पूज्य गुरूजी ने कहा था कि **''घुसे जी आपकी साधना इसी जन्म में पूरी हो। जब आप शरीर छोड़ेंगे तब आप दिव्य प्रकाशमय हो जायेंगे।''**

इस आरती में दयानिधि, कृपा सिंधु, करूणासागर, वात्सल्य जननी एवं साधकों के पथ दर्शक आदि अनेकों रूपों से गुरूजी के व्यक्तित्व का गुणगाान किया गया है जिसका अनुभव हर शिष्य ने किया है। अपने शिष्यों के असाध्य रोगों का निवारण करते हुए उन्हें सुखमय जीवन प्रदान करके साधना और (गुरूजी के शब्दों में) ''अभ्यास'' करके लक्ष्य प्राप्ति का आशीष पूज्य गुरूदेव ने सदैव दिया है।

ब. भोपाल गुरू पर्व पर स्तुति वन्दन

(भोपाल में आयोजित गुरूपर्व 1997 एवं परम पूज्य गुरूजी के 90 वें जन्मदिन के उपलक्ष्य में रचित गुरूगौरव गाथा)

जिस गुरू ने मुझको होश दिया,
जिस गुरू ने मुझको बोध दिया,
उस गुरू का गौरव गाता हूं,
श्री वासुदेव का चेला हूं,
उनकी ही बात सुनाता हूं।।घु.।।

1. गुरू चले तो संग ब्रह्माण्ड चले
जहां रूकें, सभा सी लग जाये
सरिता का पानी थम जाये,
धरा स्वर्ग लोक सी हो जाए,
हे महाश्रमण। हे विघ्न हरण।
तुम्हें नित–नित..........2, शीश झुकाता हूं।। 1 ।।

2. देखें है बहुत सत्गुरू हमने, पर तुमसा सतगुरू कोई नहीं।
कई सतगुरूओं पे प्रश्नचिन्ह? तुम पर कभी उंगली उठती नहीं
हो दिगम्बरत्व की लाज तुम्हीं,
ये सोचके...........2, मैं इतराता हूं।। 2 ।।

3. तुम इस युग के महावीर हो, तुम ''कुंद–कुंद'' के कुन्दन हो।
श्री ''मानतुंग'' के अर्पण हो, ''अकलंक'', ''उमा'' के दर्पण हो।
तुम जिनवाणी के गायक हो, मैं शान से कहता जाता हूं।। 3 ।।

4. देखे हैं बहुत सतगुरू हमने, तुम सबसे अलग क्यूं ध्रुवतारा?
चलते फिरते तीरथ हो तुम, तुम जैन धर्म की परिभाषा।
हे महाधीर। हे महावीर। तेरा नित–नित...........2,
वन्दन गाता हूं ।। 4 ।।

राजेन्द्र कुमार जैन, गोंदिया
बुधवार, 23 जुलाई 1997

स. गुरू नगरी महिमा

श्री वासुदेव–योगाश्रम, मुंगेली कौन सा नगर है? कौन दिव्य सतपुरूष ''अक्षर पुरूषोत्तम'' वहां वास करता है?, इस पावन स्थली में शिष्यों एवं भगवत प्रेमियों को कैसे आना चाहिए? एवं आश्रम–प्रवेश एवं सत्गुरू दर्शन से क्या रूपांतरण घटित होता है?

वासुदेव का प्रेम नगर ये,
महावीर का धर्म नगर ये,
यहां संभलकर आनाजी,
तुम होश जगाये आनाजी,
जो भी आया गुरूचरणों का,
हो बैठा दीवानाजी............ ।।घृ.।।

1. ऐसा बरसे रंग यहां पर, अन्तरमन तक मन भीगे।
फागुन बिना चुनरिया भीगे, सावन बिना पवन भीगे।
ऐसी बारिस होय यहां पर, बचे ना कोई घराना जी।। 1 ।।

2. यहां न झगड़ा ऊंच–नीच का नाहीं अमीरी गरीबी का।
एक सभी की प्यास यहां पर एक ही है प्याला सबका।
यहां गुरू से मिलना हो तो परदे सभी हटाना जी।। 2 ।।

3. यहां द्वेष की सुई नहीं चुभती, घुले बताशा पानी में।
दिव्य शक्ति की धारा बहती, गुरू के पावन चरणों में।
यहां नाव में नदिया डूबे, सागर सीप समाना जी।। 3 ।।

4. जनम–जनम के पाप कटें, गुरू चरणन शीश झुकाने में।
मजा कहां वो जीने में, जो मजा यहां मर जाने में।
हाथ जोड़कर मौत यहां पर..................
हाथ बांधकर मौत यहां पर ....
खुद चाहे मर जाना जी......................... ।। 4 ।।

राजेन्द्र कुमार जैन, गोंदिया
(भोपाल 10 एच.आई.जी त्रिवेणी काम्पलेक्स, टी.टी. नगर, भोपाल)

अ. शिष्यों की जिज्ञासाओं का समाधान

दुर्ग से आने के बाद बिलासपुर में काफी समय गुरूजी अपने शिष्यों के बीच रहे। उस समय विभिन्न शिष्यगणों के प्रश्नों के उत्तर में गुरूजी ने अत्यंत सरलतापूर्वक आध्यात्म मार्ग की बारीकियां समझाईं। किसी एक बिन्दु पर चर्चा उठते ही गुरूजी विस्तार से विषय को स्पष्ट कर देते थे।

साधक को आध्यात्मिक उन्नति करने के लिये आवश्यक मन की चंचलता पर नियंत्रण और मानस की एकाग्रता की जो आवश्यकता होती है, उस पर गुरूजी के आदेश हम सभी को लाभप्रद है।

प्रश्न– गुरूजी अभ्यास करते समय मन में उठने वाले सतत विचारों पर नियंत्रण करने का जितना प्रयास करते हैं, उतने वेग से विभिन्न प्रकार के विचार आते हैं। मन निर्विचार नहीं हो पाता। कृपया समस्या का समाधान बतायें?

उत्तर– मनुष्य का मन बहुत चंचल होता है। आसानी से विचारों का क्रम थमता नहीं। प्रयास लगातार करना चाहिए। जितना मन को एकाग्र करने का प्रयास करोगे, उतना वह विद्रोह करता है। यह कहावत सुनी होगी कि ''करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान''। जहां तक विचारों पर नियंत्रण का प्रश्न है, वह लगातार अभ्यास से ही संभव है। एक विचार आता है और कुछ क्षण बाद वह लुप्त होता है, फिर दूसरा विचार आता है। इन दो विचारों के मध्य में पड़ने वाला निर्विचार काल क्षणिक होता है, किन्तु सतत अभ्यास के बाद

निर्विचारकाल धीरे–धीरे बढ़ते जाता है और वह समय आता है जब दो विचारों के बीच का निर्विचार काल काफी लम्बा होते चला जाता है। यही साधक के लिए लाभदायक है।

मन की चंचलता पर नियंत्रण कठोर अनुशासन से ही संभव होता है। वास्तव में मनुष्य का मन एक चिमटे के समान होता है। एक समय पर एक ही वस्तु को पकड़ सकता है। एक वस्तु पकड़ता, फिर उसे छोड़ता, दूसरी वस्तु पकड़ता, यह क्रम अनवरत चलता रहता है। दूसरे शब्दों में ऐसा कह सकते हैं कि मन उस शैतान की तरह होता है जो एक काम तत्काल पूरा कर अपने मालिक से दूसरा काम पूछता है, फिर उसे जल्द पूरा कर तीसरा काम पूछता है। यह क्रम थमता नहीं।

इसलिए शैतान को ऐसा काम करने हेतु कहो जो कभी खत्म न हो, जैसे खड़े खम्बे पर नीचे से ऊपर व ऊपर से नीचे चढ़ने उतरने पर लगा दो। शैतान व्यस्त हो जायेगा व वह बार बार काम पूछने नहीं आ सकेगा। वैसे ही मन को किसी एक काम में लगा दो, उसमें वह व्यस्त हो जायेगा और मन एकाग्र होता चला जायेगा। मन को काम चाहिए, खाली बैठ नहीं सकता। हठ योग पद्धति में अजपाजप विधि है। उससे मन लगातार जप क्रिया में व्यस्त हो जाता है, इससे एकाग्रता आती है।

मन को एकाग्र करने हेतु निम्न में से किसी एक प्रक्रिया का पालन हमेशा करना चाहिए :—

1. अपना ध्यान नासिकाग्र पर केन्द्रित कर नासिका से भीतर जाने व आने वाले श्वास पर ध्यान दें। तटस्थ होकर इस स्वैच्छिक क्रिया पर निगाह रखें।
2. मन में आने वाले विचारों को केवल साक्षी रूप से देखते रहें। कोई प्रतिक्रिया न आने दें।
3. मन में ज्यों ही कोई विचार आता है तत्काल उसे मन के बाहर निकाल दें, फिर विचार आये उसे निकाल दें। यह सतत प्रक्रिया मन को धीरे धीरे निर्विचार स्थिति में लाती है।
4. ज्यों ही मन में कोई विचार आता है, उसमें समरस हो जावो। वह जैसे समाप्त होता है दूसरा विचार आता है, उसके साथ भी हो जाओ। इस तरह भी मन एकाग्र होता चला जाता है व निर्विचार स्थिति आती है। यह सभी विधियां योग में अर्न्तमन होने की सहज प्रक्रिया होती है।

प्रश्न— भारतीय योग पद्धति में ''मानस पूजा'' का विशेष महत्व होने का उल्लेख मिलता है, कृपया इस पूजा विधि के बारे में सविस्तार बतायें?

उत्तर— योग शास्त्र में मानस पूजा का विशेष महत्व होता है। इस पद्धति में शांत चित्त होकर बैठें व अपने इष्टदेव, देवी या गुरू की, आंखें बन्द कर, वैसे ही पूजा मन ही मन करें जैसे प्रत्यक्ष की जाती है। अर्थात् कल्पना करें कि आपके गुरू आपके निवास पर पधारते हैं, उनका स्वागत करें, पाद प्रक्षालन करें। उन्हें सादर घर के भीतर आमंत्रित करें। उन्हें आसन दें व बैठने का अनुरोध करें। विस्तार से उनकी पूजा आरती करें, फिर उन्हें स्वादिष्ट भोजन खिलायें। भोजनोपरान्त हस्तप्रक्षालन के बाद श्रीफल, शाल व तांबूल प्रदान करें। फिर उन्हें साक्षात दण्डवत प्रणाम कर उनके दाहिने पैर के अंगूठे पर एकाग्र चित्त हो ध्यान केन्द्रित करें।

इस सारी प्रक्रिया में छोटी से छोटी बातों का ध्यान रखते हुए मानस पूजा करें। इस विधि से दो प्रकार के लाभ हैं, मन को काम मिल जाता है, वह उसे संपादित करने में मग्न हो जाता है। इस समय अन्य कोई विचार मन में नहीं आता, मन पूजा में लग जाता है और अपने आप वह एकाग्र व निर्विचार हो जाता है। इससे दूसरा लाभ अपने गुरू की पूजा ध्यानावस्था में हो जाती है। इस सारी प्रक्रिया को सूक्ष्म से अतिसूक्ष्म स्थिति तक ले जाने पर साधक सहज समाधि में डूब जाता है। यह योग विद्या में सबसे सरल व निरापद पद्धति होती है। अभ्यास अवधि बढ़ते जाती है और मन आनन्द सागर में डूबता चले जाता है।

प्रश्न— कहीं पढ़ने में आया कि किसी व्यक्ति ने आप पर यह आरोप लगाया था कि आप पति पत्नी, भाई—बहन, पिता—पुत्र, इन सब को दीक्षा देते हैं। इससे तो पति—पत्नी, गुरू भाई गुरू बहन हो गये, पिता—पुत्र, गुरू—भाई हो गये। यह तो रिश्तों के साथ खिलवाड़ हो गया। यह तो आपत्तिजनक है।

उत्तर— परम पूज्य गुरूजी ने स्मित हास्य करते हुए कहा कि ऐसा आरोप निराधार व बेतुका है। एक ही गुरू से दीक्षित होने के उपरान्त पति—पत्नी, भाई—बहन, पिता—पुत्र के बीच आत्मिक संबंध होता है, बायोलॉजिकल रिलेशन्स नहीं होता। गुरू के सभी शिष्य वर्ग, चाहे उनका बायोलॉजिकल रिलेशन्स कुछ भी हो, गुरू भाई, गुरू बहन ही कहलाते हैं।

प्रश्न— गुरूजी यह बताने की कृपा करें कि श्रेष्ठ साधक किसे कहेंगे?

उत्तर— सन्यासी, जिसने सन्यास की दीक्षा ली है, वह श्रेष्ठ साधक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि घर परिवार व समाज से दूर जंगलों, कंदराओं में एकांतवास करते हुए साधना करने के पश्चात भी उसका ध्यान बारम्बार भौतिक जगत की ओर, मोह माया की तरफ खिंचा जाता है। चाहकर भी अपने आपको भौतिक जगत से अलग नहीं कर पाता। विषय वासना की आसक्ति की अग्नि पर राख ढंकी रहती है। भीतर धीरे—धीरे सुलगती रहती है, व कभी भी तेज आंच के साथ प्रगट हो सकती है।

सन्यास दीक्षा (मुण्डकोपनिषद के अनुसार) में सन्यास लेने के पहले अपने माता–पिता, पत्नी से अनुमति लेना जरूरी होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि सन्यास धर्म की दीक्षा के समय अपने समस्त भौतिक रिश्ते नातों को विधिवत तिलांजलि देनी पड़ती है, अर्थात् वह इस भौतिक जगत, अपने समाज व परिवार के लिए मृत प्राय होता है। गेरूएं वस्त्र पहने इन आधुनिक सन्यासियों (जिनका सन्यास धर्म के अनुसार किसी भी गृहस्थ परिवार के घर की दहलीज भी पार करना सर्वथा वर्जित है) को तो घर–परिवार से दूर किसी वृक्ष के साये में ही ठहरना चाहिए, न कि गृहस्थ के घर में आमंत्रित किये जाने पर उनकी दहलीज पार कर घर में प्रवेश करना, अपना स्वागत सत्कार करवाना या विश्राम के लिए ठहरना चाहिए। यह सर्वथा वर्जित है, सन्यास धर्म के विपरीत है। ऐसे सन्यासियों को हम श्रेष्ठ साधक का दर्जा कदापि नहीं दे सकते, जिनकी साधना व सांसारिक मोह माया व वासना में अनवरत अन्तर्द्वन्द जारी रहता है।

श्रेष्ठ साधक, हमारी राय में, वास्तव में एक गृहस्थ ही होता है। गृहस्थ, सांसारिक प्रपंचों, सामाजिक पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए कुछ समय ईश्वरोपासना योग साधना में व्यतीत करता है। दोनों दायित्वों (सांसारिक प्रपंच और योगाभ्यास, ईश्वरोपासना) में अद्भुत, सामंजस्य स्थापित किये रहता है। यह सराहनीय होते हुए भी अत्याधिक कठिन अभ्यास है, किन्तु स्तुत्य है। अतुलनीय है। यही श्रेष्ठ साधक की वास्तविक परिभाषा है।

प्रश्न– गुरूजी, आपके शरीर पर रूखी त्वचा व खुजलाहट अधिक होती है, जिसके लिए आप बिटनोवीट दवा मलहम के रूप में लगाते हैं। वह त्वचा रोग कौन सा है, वह कब से है?

उत्तर– त्वचा का यह रोग सोरायसिस कहलाता है। इससे पूरे शरीर पर चकते सदृश्य उभर आये हैं। ये बहुत खुजलाते हैं, काफी समय से है। बिटनोवीट से काफी आराम मिलता है। हमारे एक साधक को यह व्याधि थी। काफी परेशान रहता है, उसकी परेशानी को देखकर हमने इस व्याधि को स्वयं अपने शरीर पर लेकर उस साधक को इस व्याधि से छुटकारा दिलाया है। पता नहीं, कब यह व्याधि समाप्त होगी।

"(उक्त साधक के देहावसान के तत्काल बाद गुरूजी के शरीर से यह व्याधि अपने आप चली गई)।"

ब. श्री गुरू प्रसाद जी पाण्डे ने पूज्य गुरूजी के समक्ष अपने सरल स्वभाव के अनुरूप प्रश्न रखे जिनका पूज्यवर द्वारा किया गया समाधान यहां प्रस्तुत करना लाभकारी होगा–

प्रश्न–1 (साधना में पूछा गया प्रश्न) गुरूजी! सभी परिवारजन पूछते हैं कि गुरूजी के शरीर त्याग के बाद उनकी सहायता कौन करेगा? क्या उत्तर दूं?

समाधान– जो लोग साधना करते हैं या गुरूजी पर विश्वास करते हैं उनके मन में ऐसी शंकायें नहीं आतीं। ऐसे (प्रश्न पूछने वाले) लोग न साधना करते हैं न विश्वास करते हैं। तात्पर्य यह है कि ऐसे लोग न तो कुछ करते हैं और न ही करेंगे।

प्रश्न–2 आपके शरीर त्याग के बाद शिष्यों का क्या होगा?

समाधान– तुम्हारे गुरूजी उसी रूप में उसी शक्ति के समान रहकर कार्य करेंगे।

प्रश्न–3 गुरूजी क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर कैसे दूर होंगे?

समाधान– ये अवगुण जन्मजात होते हैं। सांसारिक भाव में रहते हुए ये सभी साथ रहते हैं, और ब्रह्मलीन होने पर ही अपने आप जाते हैं। जो गुण या अवगुण अर्जित किये जाते हैं उनको ही त्यागा जाता है।

प्रश्न–4 गुरूजी वर्तमान में रहना क्या है?

समाधान– गुरूजी ने बताया कि अपने अन्दर जो भविष्य के विचार हैं उसे कम (घटाया) किया जाये तो शून्य बचता है। शून्य ही आत्मा का रूप है। शून्य अनन्त है, अक्षय है, अस्तित्ववान भी है और अस्तित्व शून्य भी। अतः ब्रह्मलीन होना ही वर्तमान में रहना है। यही निष्काम कर्मयोग है।

प्रश्न–5 आदेश और निर्देश में भेद बतायें?

समाधान– आदेश में किसी शब्द को तोड़ा मरोड़ा नहीं जाता और उसका उसी रूप में पालन किया जाता है। (गुरूजी ने कभी निर्देश नहीं दिये)।

प्रश्न–6 गुरूजी आप सोते समय कुछ अस्पष्ट सा क्यों बोलते रहते हैं?

समाधान– सुषुप्तावस्था में दिव्य शक्तियां वायुमण्डल में विचरण करती रहती हैं वही आकर बातें करती हैं।

प्रश्न–7 गुरूजी आपके शरीर से इत्र की सुगंध कहां से आती है?

समाधान– जब शरीर का शोधन हो जाता है तो उसका सारा मल निकल जाता है तब उससे सुगन्ध आने लगती है। दुर्गन्ध वासनाओं से उत्पन्न होती है और पृथ्वी तत्व का गुण सुगन्ध है तथा पृथ्वी तथ्व शुद्ध होने पर सुगन्ध आती है एवं पसीना आना भी बंद हो जाता है।

समस्त आध्यात्मिक शंकाओं का समाधान और जिज्ञासाओं का सरलीकरण तथा दिव्य संदेशों का प्रस्तुतिकरण करना उसी दिव्य आत्मा के लिये संभव हो सकता है, जिसे वेद, पुराण, उपनिषद और धार्मिक शास्त्रों का सम्पूर्ण ज्ञान एवं स्व–अनुभव हो। परम पूज्य गुरूजी ऐसे ही ब्रह्मविद्वरिष्ठ रहे हैं, जो करूणा और हृदय में असीम प्यार की साक्षात मूर्ति थे। उनके चरणों में बैठकर हर शिष्य को अपने जीवन की श्रेष्ठता का आभास होता है। हमें अपने उस महान योगी की कृपा और अनुराग का सदैव ऋणी रहना होगा। समस्त गुरू परिवार को इस महान सद्गुरू का शिष्यत्व प्राप्त होना भाग्योदय का प्रतीक है क्योंकि कई जन्मों के पुण्योदय से ही ऐसे विरले संत का साक्षात्कार प्राप्त होता है।

स. रोचक आध्यात्मिक रहस्योद्घाटन

प्रश्न : राजू काण्णव ने एक बार गुरूजी से पूछा कि गुरूजी आप शिष्यों के नाम लेते और कहते कि ये आया नहीं वो आया नहीं और कुछ देर बाद वही शिष्य आ जाता है। क्या यह मात्र योगा योग है?

समाधान : गुरूजी ने समाधान किया कि यह मात्र योगायोग नहीं है। आप लोग मेरे पास आने का संकल्प जैसे ही लेते हो, मुझे स्पर्श हो जाता है।

इस संदर्भ में एक रोचक घटना का उल्लेख यहां प्रमाण के रूप में प्रस्तुत है– राजू काण्णव और वर्धा निवासी श्री मकरंद उमालकर गुरूजी के दर्शनार्थ रायपुर के लिये घर से निकले और नागपुर पहुंचने के बाद रॉयल ट्रेवल्स वालों ने बताया कि आज कोई भी बस रायपुर नहीं जायेगी। रात रूकने के बाद सुबह ट्रेन से रवाना हुए और रायपुर पहुंचने पर गुरूजी ने पूछा आप लोग कब निकले थे। राजू ने कहा आज सुबह 6 बजे। यह सुनते ही गुरूजी ने राजू को डांट दिया और कहा कि आप लोग हमसे झूठ क्यों बोलते हो? फिर सोचकर सही सही बताओ, तब इन शिष्यों को अपनी भूल का अहसास हुआ कि वे तो कल शाम चले थे और रात बस न आने से नागपुर रूककर दूसरे दिन सुबह रवाना हुए थे। गुरूजी ने कहा हां, अब सच बोला कि कल रात को निकले थे। क्योंकि मुझे रात को ही दिख गये थे कि आप

लोग आ रहे हैं। यह भी गुरूजी की विशालता जो उन्हें परमसत्ता में से ही एक हैं का रहस्योद्घाटन करती है।

द. श्री लूनिया जी ने अपनी जिज्ञासाओं को भक्त वात्सल्य कल्पतरू स्वामी गुरूदेव और आध्यात्मिक योगी से जो समाधान पाया था उन्हीं के निर्मल और दिव्य आशीष से इसे यहां लिपिबद्ध किया जा रहा है।

प्रश्न–1 पूज्य गुरूवर, आध्यात्मिक सद्गुरू की परिभाषा क्या होनी चाहिए?

उत्तर– जो योग साधना में निपुण हो, शास्त्र रूपी समुद्र का परगामी हो, हमेशा समता रस के सागर में डूबा रहता हो, क्षमाधारी हो, अपनी इन्द्रियों का दमन करने वाला हो, एकमात्र आत्मकल्याण में निष्ठापूर्वक रत रहता हो, अपने शिष्यों को चित्त में, संसर्ग मात्र से, शुद्धि पैदा कर देता हो, जो स्वयं भवसागर तरता है, दूसरों को निःस्वार्थ भाव से तारता है, जिन्हें आत्मज्ञान व शरीर ज्ञान का पूर्ण अनुभव है, ऐसे जन सद्गुरू कहलाते हैं और उसके अधिकारी होते हैं।

प्रश्न–2 योगी किन गुणों के अधिकारी होते हैं?

उत्तर– योगी को अतीन्द्रिय पदार्थ का ज्ञान हो जाता है। वे भूत, भविष्य, वर्तमान को साक्षात देखते हैं। इसी को सातिशय सर्वज्ञता का बीज कहा है।

प्रश्न–3 आध्यात्म में रत्नत्रय किन्हें माना गया है?

उत्तर– सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र को रत्नत्रय माना गया है।

प्रश्न–4 सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र की परिभाषा क्या समझनी चाहिये?

उत्तर–
1. **सम्यग्दर्शन** –जिस गुण या शक्ति के विकास से सत्य अथवा तत्व की प्रतीति हो, सम्यग्दर्शन कहलाता है।
2. **सम्यग्ज्ञान**–नय प्रमाण से जीवादि तत्वों का यदि बोध हो तो सम्यग्ज्ञान समझना चाहिये।
3. **सम्यक्चारित्र**–काशायदिक भाव और राग, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, भय, मान, घृणा, लज्जा आदि की निवृत्ति से प्राप्त होने वाला स्वरूप यह सम्यक्चारित्र यानि पूर्ण चरित्र यानि मोक्ष–कैवल्य। इसे ही चारित्रय कहा है।

साधना के माध्यम से साधक इन त्रय रत्नों को प्राप्त कर मुक्तावस्था को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न–5 आत्मा के संक्षिप्त गुणधर्म क्या है?

उत्तर– आत्मा निर्मल है। आत्मा परम, अचल अविनाशी, सर्वत्र, सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान, अजर, अमर है। आत्मा का जन्म मरण नहीं है। आत्मा सदा नवीन सदा एक रस है। आत्मा परम तत्व है। आत्मा सदा पूर्ण है। इस आत्मा को ''आप'' नाम भी दिया गया है। 'आप' को जल भी कहते हैं। हम सदा के लिऐ अपने आप को भूल गए, मात्र आप रह गया।

प्रश्न–6 आत्मा किस (भव) जन्म में मुक्त होने में समर्थ होता है?

उत्तर– आत्मा अपने मानव भव में साधना के माध्यम से मुक्त होने में सक्षम है। मात्र मानव ही परमपद प्राप्त कर अपने को जीवन मरण से मुक्त करा सकता है।

प्रश्न–7 पुनर्जन्म की मान्यता के विषय में मार्गदर्शन करें।

उत्तर– पुर्नजन्म की मान्यता है। पुनर्जन्म होता है। यह सत्य व शाश्वत है।

प्रश्न–8 साधना के माध्यम से क्या पुरूष व स्त्री आत्मसाक्षात्कार के लिए समान रूप से सक्षम है?

उत्तर– सद्गुरू के सान्निध्य में पुरूष व स्त्री दोनों साधना के माध्यम से आत्म साक्षात्कार करने के अधिकारी हैं। अपने ही परिवार में महिला साधकों में कईयों की स्थितियां योगदर्शनानुसार अच्छे गुण स्थानकों में है। वे सब इस सत्य की साक्षी हैं। अनेक महिलाओं को आत्मसाक्षात्कार हुआ है। हमारे शास्त्र भी उसकी साक्ष्य हैं।

प्रश्न–9 निष्काम कर्म किसे समझना चाहिये?

उतर– आत्मक्रीड सिद्ध लोग आत्मसाक्षात्कार हेतु जो कर्म करते हैं, योग की भाषा में उसे निष्काम कर्म माना है। आत्मक्रीड सिद्ध लोग आत्मसाक्षात्कार रूपी वृक्ष का बीजारोपण करते हैं और यह बीज अक्षय होता है। साथ ही फलस्वरूप इसमें दोष नहीं होता है। कर्म करते हुए कर्म बंध नहीं करता।

प्रश्न—10 मुख्य कोष कितने माने गये हैं?

उत्तर— 1. अन्नमय कोष 2. मनोमय कोष 3. प्राणमय कोष

4. विज्ञानमय कोष 5. आनंदमय कोष

इस तरह मुख्य पांच कोष हैं।

प्रश्न—11 बुद्धि शुद्ध कब होती है?

उत्तर— बुद्धि की 1. प्रमाण, 2. विपर्यय, 3. विकल्प, 4 निद्रा, 5. स्मृति, यह पांच वृत्तियां हैं। जब बुद्धि इन वृत्तियों से रहित होती है तब वह शुद्ध बुद्धि कहलाती है। जब बुद्धि शुद्ध होती है तब वह प्रकृति में लीन हो जाती है। तब पुरूष भी प्रकृति में लीन हो जाता है। इस स्थिति को कैवल्य कहा है। कैवल्य प्राप्त हो जाने पर भी स्थितियों वश केवल पुरूष मात्र रह जाता है। यह स्थिति आयुष्य पूर्ण होने तक रहती है।

प्रश्न—12 मनुष्य का जन्म व पुनर्जन्म क्या उसकी स्वयं की इच्छा पर निर्भर है?

उत्तर— मनुष्य असहाय या निरीह प्राणी नहीं है कि प्रकृति या मनमानी काल्पनिक इच्छा शक्तियों के वशीभूत होकर रह जाए। मनुष्य अपने कर्मों को, चरित्र को, अपनी घटनाओं को, नियंत्रित व परिवर्तत करने में समर्थ है। इसलिये कर्म, चरित्र एवं घटनाओं के परिणाम के प्रति स्वयं उत्तरदायी है। तभी कहा गया है कि बीता कल तो मर चुका आने वाले कल का

अभी जन्म नहीं हुआ है, भविष्य की चिंता क्यों, जब वर्तमान अपने हाथ में है। मात्र मनुष्य में अपने आपको बदल सकने की शक्ति प्राप्त है तथा स्वयं को उत्कर्ष, चरमोत्कर्ष पर ले जाने की क्षमता है। तभी तो यह सिद्ध है कि मनुष्य का जन्म एवं पुनर्जन्म उसकी इच्छा पर निर्भर है।

प्रश्न—13 साधकों को मुख्य किन श्रेणियों में बांटा गया है?

उत्तर— देशकाल के अंतर्गत साधकों की मुख्यतः तीन श्रेणियां होती हैं—

1. ऋजु प्राज्ञ — ये सरल समझदार होते हैं तथा शीघ्र समझ भी जाते हैं वह गुरू आदेश का पूर्ण रूप से पालन करते हैं।

2. ऋजु जड़ — गुरूवाणी को कठिनता से समझते हैं और समझने पर अच्छी तरह से पालन करते हैं।

3. वक्र जड़ — कठिनता से समझते हैं और पालन भी कठिनता से करते हैं तर्क कुतर्क का सहारा लेते हैं।

ऋजु का अर्थ कुडलिनी है।

प्रश्न–14 आत्मा का मुख्य स्वभाव क्या है?

उत्तर– जिस तरह गैस भरा बैलून ऊपर की ओर जाता है, उसी प्रकार आत्मा का स्वभाव साधना काल में ऊपर की ओर (उर्द्धवगति) जाने का है। सुषुम्ना के द्वार खोल साधक अपने इस मनुष्य भव की (जन्म की) आध्यात्मिक उपलब्धि प्राप्त कर ले तो उसका आत्मकल्याण निःसंदेह होगा ही। इस आध्यात्मिक स्थिति में आत्मा स्वभावानुसार ऊपर की गुण स्थानक (केन्द्र) की ओर जायेगा।

प्रश्न–15 मानव देव या दानव की स्थिति किस अवस्था में प्राप्त करता है?

उत्तर– यदि मानव मानवता की सीमा तक रहे तो वह मानव नहीं देव है। यदि बिना साधना के अपने में देवत्व अनुभव करे तो वह मानव नहीं दानव है।

प्रश्न–16 सही अर्थ में समर्पण किसे कहना चाहिए?

उत्तर– मनके साथ भाव का पूर्ण समर्पण होना चाहिये। इसे ही सही समर्पण कहते हैं।

प्रश्न–17 भावातीत स्थिति कब होती है?

उत्तर– सद्गुरू के प्रभाव से साधक को जो अनुभव होता है, वह भावातीत स्थिति कहलाती है।

प्रश्न–18 साधक का शरीर देवालय अवस्था कब प्राप्त करता है?

उत्तर– साधक आज्ञा चक्र के बाद जैसे–जैसे साधना के द्वारा उर्ध्वगति प्राप्त करता है (ऊपर की ओर बढ़ता है) तब उसका स्थूल शरीर न रहकर वह देवालय होता है।

प्रश्न–19 पूज्य गुरूजी एक किवदन्ती है कि स्वयं मरे सिवाय स्वर्ग नहीं मिलता, इसका योगदर्शन में क्या आशय है?

समाधान सद्गुरू के सान्निध्य में रहकर साधक अभ्यास के द्वारा गुण स्थानकों के केन्द्रों में आत्मा के गुण के अनुरूप ऊपर चढ़ते जाता है (उर्ध्वगति प्राप्त करता है)। जब साधक 99 वें गुण स्थान में (केन्द्र में) स्थापित होता है तो वह समाधि अवस्था प्राप्त करता है। यह स्थिति मृत्यु अवस्था के तुल्य होती है। किन्तु इस अवस्था में साधक का शरीर गलता नहीं, अकड़ता नहीं, सड़ता नहीं। साधक के शरीर के पास कोई जीव जंतु जाकर नुकसान नहीं पहुंचाता। यहां साधक के प्रभा मण्डल का प्रभाव साधक के शरीर की रक्षा करता है।

साधक का यह शरीर यथावकाश पूर्ववत् सामान्य स्थिति प्राप्त करता है। इस प्रकार साधक शेष अर्जित कर्मों को भोगते हुए साधना के द्वारा अगले गुण स्थानक की ओर बढ़ता जाता है। इस अवस्था में साधक 'अष्ट सिद्धियों' व ''नव निधियां'' जैसी शक्ति प्राप्त कर लेता है। परंतु योगदर्शन में इन शक्तियों को निषिद्ध माना गया है। इस स्थिति में साधक आगे बढ़ते बढ़ते मुक्तावस्था को प्राप्त कर लेता है। इस अवस्था को व्यवहारिक भाषा में 'स्वर्ग' कहते हैं।

इस सम्पूर्ण आध्यात्मिक स्थिति को स्वयं मरे बिना स्वर्ग नहीं मिलता ऐसा कहा गया। किन्तु यह किवदन्ती नहीं परंतु शाश्वत है।

प्रश्न–20 अरिहन्त, सिद्ध, स्मारक व कारक ये स्थितियां क्या हैं?

समाधान अरिहन्त कारक है। सिद्ध निराकार है। स्मारक निर्जीव है। कारक सजीव है।

प्रश्न–21 कौन सा सुख अक्षय सुख कहलाता है?

समाधानः आत्मा की मुक्ति ही अक्षय सुख है जिसका कभी भी अंत नहीं होता। दूसरे सारे सुखों का अंत हो जाता है।

प्रश्न–22 आध्यात्मिक संसार का परिवार कैसा होता है?

उत्तर– धैर्य–पिता है। क्षमा माता है। शान्ति–पत्नी है। सत्य–अनुभव के बोल–पुत्र। दया–बहिन। संयम–ब्रह्मचर्य–भ्राता (भाई)। भूमि–शैया। दशो–दिशा–वस्त्र। अमृत–भोजन (मुक्ति प्राप्ति की साधना)। मानव साधना के माध्यम से इस परिवार को प्राप्त कर सकता है। योग में साधक की इस स्थिति को उच्चतम स्थिति माना गया है।

प्रश्न–23 आध्यात्मिक दीक्षा देने का अधिकार किसे होता है?

उत्तर– आध्यात्मिक दीक्षा देने का अधिकार केवल सद्‌गुरू को ही है। यह भारतीय दर्शन की भी मान्यता है। दीक्षा देने वाले को आत्मबोध व शरीर बोध होना आवश्यक है, तभी वो दीक्षा देने का अधिकारी है।

प्रश्न–24 साधक अंतर जगत में कब जाता है?

उत्तर– जब तक साधक सद्‌गुरू के सान्निध्य में साधना द्वारा सुषुम्ना के द्वार नहीं खोलता तब तक अंर्तजगत में नहीं जाता। वह मृत्यु केन्द्र पर, मृत्युभय पर विजय प्राप्त करता है। प्राण कंठगत हो जाता है। यहां केवल संचित कर्म ही रह जाते हैं। नये कर्मबंध नहीं होते, कर्मबंध होते भी हैं तो उस कर्म की निर्जरा होती रहती है। विधाती कर्मों का विनाश होने लगता है। साधक आरोहण में (उर्ध्वगति को) जाता है। यहां सारा भूमण्डल ज्योति से ओतप्रोत हो जाता है। ब्रहरंध्र शिखर है। मेरूदंड का ऊपरी भाग सीधा सा खड़ा है। साधक यहां पहुंचने पर परम पद को प्राप्त करता है।

प्रश्न–25 आध्यात्मिक जगत में योगी की स्थिति क्या होती है?

उत्तर– योगी स्वयं मुक्तावस्था को प्राप्त करने में सक्षम रहते हैं। योगी अभय हो जाते हैं। उन्हें काल का भय नहीं रहता। अपने शिष्य साधकों को अपने समान आध्यात्मिक स्थिति प्राप्त कराने में सक्षम होते हैं। उनकी वाणी के अनुसार फल होते हैं। आत्म योग से उनकी बुद्धि सूक्ष्मता को प्राप्त करती है। यही आत्म ज्योति है। अपने पर अपने आप सुनियंत्रित हो जाता है। यहां अरिहंत स्थिति प्राप्त करता है। सिद्ध पुरूष हो जाता है। आत्मा यहां स्वयं कुछ नहीं करती पर उसकी प्रभामंडल के तेज से औरों का कल्याण होने लगता है। उन्हें पिछले जन्म का (भव का) बोध होने लगता है। यह पूर्ण योगेश्वर है।

प्रश्न–26 ॐ पर प्रकाश डालिये?

उत्तर– साधकों की बुद्धि जब मणिवत् हो जाती है तब आकाशवाणी के द्वारा उन्हें श्रवण में आता है। इसकी अनुभूति मात्र साधक स्वयं की साधना के द्वारा करता है। आत्मा मुक्तावस्था की अधिकारणी हो जाती है। इसी को नाद् ज्ञान कहा गया है। आत्मा की नाम भी ॐ है। हरिओम्।

प्रश्न–27 निरोध अवस्था किसे समझना चाहिए?

उत्तर– जब बुद्धि अपने आप में समाहित हो जाती है, तब साधक की अवस्था निरोध कहलाती है। सातिशय सर्वज्ञता का बीज है। यही केवल्य ज्ञान है। अंर्तमुखी गति रहित होने की स्थिति को भी निरोध कहते हैं।

प्रश्न–28 साधक किस गुण स्थानक (केन्द्र) पर पहुंचकर नीचे की ओर नहीं आता?

उत्तर– बारहवें गुण स्थानक पर (केन्द्र पर) विधाती कर्म के विनाश होने पर सद्गुरू के अनुग्रह से साधक नीचे नहीं आता। साधक 13वें गुण स्थानक केन्द्र पर त्रिकालदर्शी हो जाता है।

प्रश्न–29 एकाग्रता की स्थिति कब आती है?

उत्तर– विचारों का उदय व विचारों का अस्त होना बंद हो जाता है, तभी एकाग्रता प्राप्त होती है।

प्रश्न–30 किन कारणों से जीव सुख व दुख भोगता है?

उत्तर– जीव अपने अतीत व वर्तमान में मनकरण, वचनकरण, शरीरकरण व कर्मकरण से कर्म सुख व दुख उपार्जन करता है। पुण्य व पाप अर्जित कर्मों का भोग सुख व दुख के रूप में भोगता है। अर्जित कर्मों को जीव से लगाकर देव और योगी भी सुख और दुख के भोक्ता बनते हैं। मोहवासीत आत्मा रोती, बिलखती हाय–हाय करती कर्म भोग भोगती है। परंतु ज्ञानवासीत आत्मा हंसते हंसते अर्जित कर्मों का भोग भोगती है।

प्रश्न–31 किस अवस्था में आत्मा कर्मबंध या उपार्जन नहीं करती?

उत्तर– योगी व सिद्ध जीव को वेदनीय कर्म नहीं बांधते। यहां पर कर्मों की निर्जरा मात्र होती है। तत्पश्चात आत्मा मुक्तावस्था की अधिकारिणी होती है।

प्रश्न–32 मनुष्य का स्वभाव क्या है?

उत्तर– स्वभाव–सत्व, रज व तम है। यह प्रकृति है। तीन भागों में मिश्रित है। सत्य–अनुभव के बोल, आत्मसाक्षात्कारी अनुभव के बोल बोलते हैं जो सत्य पर आधारित होते हैं।

रजोगुण–ये फलाकांक्षा है। तमोगुण–व्यसन करना क्रोध, सोना, खाना, कुलहीन जनों से मित्रता करना, काम और क्रोध लोभ ये नरक के द्वार हैं। इन्हें छोड़ना चाहिये।

प्रश्न–33 मनसा वाचा कर्मणा का आशय क्या है?

उत्तर– कर्म–शुभाशुभ कर्म करते हैं, जिससे किसी का अहित नहीं होता। अकर्मण्य विषयभोग में लिप्त रहता है। योगी अपना

हित व अन्यजनों का हित चाहता है। वे हित करवाने में सक्षम होते हैं। स्वार्थ रहित हो जाते हैं। लोगों से भी हित करवाने में पूर्णरूपेण वे सक्षम हो जाते हैं।

प्रश्न–34 आत्मबोध, शरीर बोध साधक कब करता है?

उत्तर– जहां आत्मबोध होता है वहां शरीर का भी बोध हो जाता है। धर्म साधना के लिये शरीर स्वस्थ होना चाहिये। जीवों को जो योगानुभूति होती है वह शास्त्रोक्त होती है।

प्रश्न–35 भाषा का तात्पर्य क्या है?

उत्तर– भा, वर्ण, ज्ञान है लिंग नहीं है। षा–स्त्रीलिंग है। भाषा ज्ञान है। इसे जगत् की वस्तुओं को व्यवहार में लाने के लिये सिखाया जाता है। बोलने पर ज्ञान लिखने पर यह भाषा है। गुरू, मां, शिक्षक, समाज, अतिथि (स्वयं को जानने के लिये जो बोध करा दे) ये पांचों गुरू ही हैं। संक्षिप्त में जो हम नहीं जानते उसका ज्ञान कराने वाले गुरू हैं। आध्यात्मिक गुरु सजीव व कारक होते हैं। हमारे यहां कारक को ही स्मारक बनाया है।

प्रश्न–36 साधक उच्चतम गुण स्थानक में पहुंचकर कौन सी अष्टसिद्धियां प्राप्त कर लेता है?

उत्तर– साधक साधना के द्वारा अपने मृत्यु केन्द्र को पार कर पुनः साधना के द्वारा जब आगे की ओर अग्रसर होता है तब उसे अष्ट सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। ये अष्ट सिद्धियां निम्न हैं:–

1.	अणिमा	अणु सरीखा होने की क्षमता का धारक हो जाता है।
2.	महिमा	पर्वत जैसा महान रूप बनाने में सक्षम होता है।
3.	लग्मिा	छोटे से छोटा रूप धारण कर सकता है।
4.	गरिमा	सब कुछ करने की क्षमता रहती है।
5.	व्याप्ति	सदा संतुष्ट रहता है।
6.	प्रकाम्य	उसके प्रभाव से सारे कार्य अपने आप होते हैं।
7.	ईशीत्व	प्रभाव से सबको वश में करने की क्षमता रहती है।
8.	वशीत्व	अजात शत्रु याने कोई भी शत्रु नहीं होता है।

प्रश्न–37 अष्ट सिद्धियां प्राप्त करने के साथ साथ साधक जो नवनिधियां प्राप्त करता है वह कौन सी है?

उत्तर– साधक जिन गुण स्थान को पर (केन्द्र पर) अष्ट सिद्धियां व नवनिधियां प्राप्त करता है वहां वह अरिहंत पद का उपार्जन करने में सक्षम हो जाता है। यहां वह सब कुछ करने का पूर्ण अधिकारी हो जाता है। साधक को केवल जीवन मुक्ति चाहिये अतः वह इन (सिद्धियों का तथा नवनिधि) का उपयोग नहीं करता। उसका लक्ष्य केवल मुक्ति प्राप्त करना रहता है। अतः वह इसी लक्ष्य के प्रति अपने आपको समर्पित रखता है और इनका स्वयं अधिकारी रहता है।

ये नवनिधियां निम्न हैं:–

1. प्रज्ञा – भूत भविष्य जानना
2. परकाया प्रवेश –
3. काहयू – एक ही समय अनेक जगह प्रकट होना
4. जीवन दान
5. जीव हरण
6. जीव करण
7. सर्ग करण – बसाना
8. सर्ग हरण – बरबाद करना
9. दूरदृष्टि, दूर श्रवण–

ये अपार शक्तिशालिनी नव निधियों व अष्टसिद्धियों के धारक के प्रति समर्पण भाव रखने वाला भी अपना आत्म कल्याण करने में सक्षम हो जाता है। आध्यात्मिक शक्तियों जो प्राप्त होती हैं उनका साधक अपने तथा दूसरों के आत्मकल्याण हेतु उपयोग करता है।

प्रश्न–38 जो तांत्रिक जन साधना के माध्यम से विद्यायें प्राप्त कर तंत्र–मंत्र में फंसे रहते हैं वे आत्म कल्याण के अधिकारी हैं?

उत्तर– आध्यात्मिक शक्तियों का आत्मकल्याण के सिवाय उपयोग करना स्पष्ट रूप से निशिद्ध माना गया है। अतः सिद्धियों का उपयोग आत्मकल्याण में सहायक नहीं होता है।

प्रश्न–39 नमो शब्द का आशय क्या है?

उत्तर– धर्मशास्त्र की दृष्टि से इसका आशय विनय है। गुरू की सेवा ही विनय है। नमो शब्द का संधि–विच्छेद न + अ + म + ओ ये सब वर्ण हैं। इन वर्णों को उलटे क्रम से पढ़ने पर ओ + म + अ + न यानि शब्द की उत्पत्ति होती है। नमो का प्रभाव कल्याणकारी है।

प्रश्न–40 साधक साधना मार्ग में अधोगति पर कब उतरता है।

उत्तर– साधना काल में साधक की अधोगति होने के कई कारण हैं। उनमें से एक यह है :– साधक जब आज्ञाचक्र में पहुंचता है। तब उसके अधोगति का भय रहता है। यह स्थान यानि तृतीय नेत्र PEINIAL BODY BLS MYSTIRIALS GLAND कहते हैं। यहां GONEDAL का स्त्राव होता है, जिससे कामवासना को बढ़ावा मिलता है यही साधक के भ्रष्ट होने का भय रहता है यही अपने आपको रोक नहीं सकता और उसका पतन हो जाता है।

इसके लिये अपनी मौत को देखना जरूरी है। जब तक अपनी मौत देखकर आज्ञा चक्र के आगे नहीं बढ़ता, पतन होने की संभावना बनी रहती है।

प्रश्न–41 साधक मृत्यु केन्द्र का भेदन करते वक्त जब समाधि अवस्था में समाहित हो जाता है तब क्या उसका शरीर छूट जाता है?

उत्तर– साधक जब मृत्यु केन्द्र का भेदन कर समाधि अवस्था में समाहित होता है तब समय पर्यंत वह सशरीर लौटकर आध्यात्मिक प्रक्रिया पूर्ण करने में लग जाता है। जैसे कर्मों को निर्जरा कर अपने अगले केन्द्र में स्थापित करता है।

ऐसी ही स्थिति में साधक के भृकुटी मध्य में स्वर्णमयी प्रकाश के रूप में ज्योति जो महीन धागे के समान होती है उससे वह केन्द्र ज्योर्तिमय प्रकाश से प्रकाशित होता रहता है। उसके शरीर की किसी प्रकार से हानि नहीं होती है। यह सब ज्योति का प्रभाव है। यहां यदि ज्योति सम्पर्क टूट गया तो निर्वाण हो जाता है। साधक पुनः उस शरीर में नहीं आता।

प्रश्न–42 साधक का शरीर साधना के किस काल में तीर्थराज बन जाता है?

उत्तर– बारहवें केन्द्र के बाद साधक आत्मदेव केवली की श्रेणी में आ जाता है। कबीर जी ने इसे 90 वीं खिड़की करके संबोधित किया है आश्रव समाप्त होने पर वह स्वयं तीर्थ हो जाता है। यह महान स्थिति है। इस स्थिति से अन्य कोई महान स्थिति नहीं है। यहां वह पूर्ण हो गया। इन्हें तीर्थराज भी कहा गया है दश इन्द्रियों तथा मृत्यु केन्द्र पर विजय पाकर 92 वें केन्द्र पर पहुंचता है। तब उसे पसीना आना बंद हो जाता है। उसका शरीर देवालय हो जाता है। उनके प्रभामंडल के प्रभाव से वह स्थान प्रभावित रहता है।

प्रश्न–43 अरिहंत एवं सिद्ध पुरूषों का क्या भविष्य होता है?

उत्तर– अरिहंत एवं सिद्ध पुरूष पूर्ण हैं अतः उनका कोई भविष्य नहीं।

प्रश्न–44 साधक का अवरोहरण कब होता है?

उत्तर– मृत्यु केन्द्र पर विजय प्राप्त करने के पश्चात साधक का अवरोहण हो जाता है। अवरोहण के बिना साधक को साक्षात्कार नहीं होता। विधाती कर्मों के विनाश होने के पश्चात अवरोहण होता है। हमारे जो स्मारक हैं वे केवल स्मरण के लिये हैं। हमें तो कारक प्रयास करना है। जैसे माचिस व तीली में अग्नि रहती है परंतु जब तक घर्षण नहीं करेंगे अग्नि प्रकट नहीं होगी, तीली प्रज्वलित नहीं होगी।

प्रश्न–45 साधक का जीविका, सुरक्षा, उद्धार, के संबंध में क्या प्रयास होना चाहिये?

उत्तर– अखंड आत्मशक्ति प्राप्त होने पर साधक अपनी रक्षा, अपनी जीविका, अपने उद्धार के साधनों के प्रति चिंता रहित हो जाता है।

प्रश्न–46 सूक्ष्म शरीर के संबंध में आध्यात्म की क्या धारणा है?

उत्तर– प्रत्येक प्राणी के अंदर सूक्ष्म शरीर रहता है। जब आत्मा इस पंचमहाभूतों के शरीर को त्याग देता है तब यह सूक्ष्म शरीर भी बाहर निकल जाता है। यही परलोक में वहां के जीवन और भोगों का भोक्ता बन जाता है।

प्रश्न—47 ब्रह्मरंध्र केंद्र पर साधक की स्थिति क्या होती है?

उत्तर— ब्रह्मरंध्र केन्द्र पर जब साधक अपने को स्थापित कर लेता है तब इस स्थिति में उसकी कुण्डलिनी स्थायी हो जाती है। यहां वह लोभ, भय, षडविकारों से दिन रात देश काल सबसे परे हो जाता है। विदेही की स्थिति हो जाती है। भव के संस्कार पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। यह जितेन्द्रिय की स्थिति है। जगत में इससे महान कोई आत्मा नहीं है।

प्रश्न—48 पूज्य गुरूजी अपने परिवार के सदस्य आपके सान्निध्य में जब उच्च कोटि के अनुभव प्राप्त करते हैं। तब आप उन्हें कहते हो कि आपने अपनी जननी को तार दिया। इसका आशय क्या?

उत्तर— साधक अपने गुरू के सान्निध्य में जब साधना के द्वारा विशिष्ट आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करता है। तब साधक की आध्यात्मिक कृति से साधक की जननी आत्मदर्शन प्राप्त करती है। आत्मदर्शन करने वाले जीव का आत्मकल्याण हो जाता है। अतः साधक की इस उच्चतम आध्यात्मिक स्थिति से उसकी जननी का भी आत्मकल्याण होकर वह इस भवसागर से तर जाती है।

प्रश्न—49 आकाशवाणी से साधक को संदेश कब प्राप्त होते हैं?

उत्तर— प्रकाशमय लोक में अरिहन्त व सिद्ध पुरूषों को अनेक बार अनेक प्रकार से आकाशवाणी प्राप्त होती रहती है। (आदरणीय बंधुओं आप सभी जानते हैं पूज्य गुरूजी को आकशवाणी द्वारा कई बार संदेश प्राप्त हुए हैं। पूज्य गुरूजी अपने शिष्य परिवार को इन्हीं संदेशों के माध्यम से समय समय पर मार्गदर्शन करके उनका कल्याण करते हैं)।

प्रश्न—50 पारिवारिक जनों को आध्यात्मिक योग शिक्षा दिलाने के लिये कौन सी अवस्था उचित एवं सहज होती है?

उत्तर— 12 से 18 वर्ष की किशोरावस्था में उनका मन निर्मल रहता है। अधिकांशतः वे बंधनमुक्त रहते हैं इस काल में यदि सद्गुरू प्राप्त हो जाये तो उनमें साधना के द्वारा भवसागर तर जाने की क्षमता आती है। अतः किशोरावस्था में ही उनको तीर्थंकरों के तीर्थ में भेजना चाहिये जिससे वहां के प्रभाव से उनका कल्याण हो जाये क्योंकि अरिहंत तथा सिद्ध पुरूषों का उस क्षेत्र में प्रभाव देशकाल तक विद्यमान रहता हैं

प्रश्न—51 तीर्थंकरों का मार्ग रिद्धि है या सिद्धि?

उत्तर— तीर्थंकरों का मार्ग सिद्धि पर आधारित न होकर रिद्धि पर आधारित है।

प्रश्न—52 आत्मसाक्षात्कारी साधकों के लिए अरिहंत क्या प्रेरणा देते हैं?

उत्तर— साधक की आत्म साक्षात्कार की साधना में अरिहंत सहायता करते हैं वे साधक को गिरने व डूबने से बचाते हैं तथा उसे विचलित नहीं होने देते हैं परंतु देवी, देवता तो केवल प्रलोभन देते हैं। सच्चा साधक मांगता नहीं। किन्तु उसका लक्ष्य आराधना के द्वारा आत्मकल्याण करना ही होता है। वैसे तो साधक को अपने सद्गुरू की कृपा से अपने आप लौकिक तथा अलौकिक लाभ प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से मिलती है।

प्रश्न—53 अपने सद्गुरू से साधक को क्या उपार्जन करना चाहिये?

उत्तर— साधक को सदा अपने आचरण से अपने गुरू का कृपापात्र बनना चाहिये जिससे गुरू की कृपा के साथ साथ दया व अनुग्रह प्राप्त हो सके।

प्रश्न—54 सद्गुरू के द्वारा आत्मकल्याण हेतु जो बीज बोया जाता है उसकी महत्ता क्या है?

उत्तर— सद्गुरू अपने शिष्य के आत्मसाक्षात्कार हेतु शक्तिपात के द्वारा दीक्षा के रूप में बीजारोपण करते हैं। तत्पश्चात साधक शनैः—शनैः इस बीज की शक्ति से आत्मसाक्षात्कार के लिए अग्रसर होता है। जब तक उसे आत्मसाक्षात्कार नहीं होता है वह बीज उसका पथ प्रदर्शक बना रहता है। जैसे कहा है ''भक्तिबीज पलटे नहीं, जावे युग अनन्त, ऊंच—नीच घर अवतरे, रहे संत का सन्त।।''

प्रश्न—55 मनुष्य कर्मबंधन किन किन मार्गो से करता है?

उत्तर—
1. ज्ञानावर्णी कर्म — आत्मा के अनन्त ज्ञान को रोकता है।
2. दर्शनावर्णी कर्म — आत्मा के दर्शन गुण को रोकता है।
3. वेदनीय कर्म — आत्मा के अव्याबाघ गुण को रोकता है।
4. मोहिनी कर्म — आत्मा के सम्यग्दर्शन व सम्यग्ज्ञान के गुण को दबा देता है।
5. आयु कर्म — आत्मा के अविनाशित्व धर्म को रोकता है।
6. नाम कर्म — आत्मा के अश्वपित्व धर्म को रोकता है।
7. गौत्र कर्म — यह आत्मा के अगुरू लघु गुण को रोकता है।
8. अन्तराय कर्म — यह कर्म आत्मा के दान, लाभ, भोग, उपभोग वीर्य, गुण, आदि लब्धियों को रोकता है।

इस तरह ये मुख्य 8 कर्म आत्मकल्याण के मार्ग में बाधक होते हैं।

प्रश्न–56 ध्यान की मुख्य श्रेणियां कितनी हैं?

उत्तर– ध्यान चार मुख्य श्रेणियों में बांटा गया है।

1. आर्त ध्यान 2. रौद्र ध्यान 3. धर्म ध्यान 4. शुक्ल ध्यान

प्रश्न–57 गुरूजी कार्योत्सर्ग का आशय क्या है?

उत्तर– ध्यान, वाणी ओर मन से ही होता है परंतु कार्योत्सर्ग से काया को भी नियंत्रित करना पड़ता है।

प्रश्न–58 किन पदार्थों का चिन्तन करना चाहिये?

उत्तर– आत्मकल्याण के लिए साधक को, जीव अजीव, आश्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा व मोक्ष आदि 7 तत्वों का ज्ञान होना चाहिये। इनका चिन्तन आत्मकल्याण हेतु सहायक है।

प्रश्न–59 जीव को किन किन श्रेणियों में बांटा गया है?

उत्तर– जीव मुख्यतः पांच श्रेणियों में बांटे गये हैं–
1. एकेंद्रिय जीव 2. द्विएन्द्रिय जीव 3. त्रयेन्द्रिय जीव
4. चतुरेंद्रिय जीव 5. पंचेन्द्रिय जीव
इस तरह इन संसारी जीवों के 5 भेद हैं। इसी तरह
1. पृथ्वीकाय 2. जलकाय 3. अग्निकाय 4. वायुकाय
5. वनस्पति काय
ये 5 भेद अलग होते हैं।

प्रश्न–60 ध्यान मौन की स्थितियां समझाईये?

उत्तर– ध्यान ही तो मौन है ध्या–दौड़, न–भविष्यता। मौन का भार बढ़ने पर आत्मदर्शन हो जाता है। आत्मा स्वयं प्रकट होती है। मौन–स्थायी है। ध्यान–अस्थायी है।

प्रश्न–61 दीक्षा के कुल कितने प्रकार हैं?

उत्तर– दीक्षा के निम्न प्रकार हैं

1. कूर्म दीक्षा 2. स्पर्श दीक्षा 3. दृष्टिपात दीक्षा 4. स्वप्न दीक्षा

5. मंत्र दीक्षा।

ये पांच प्रकार हैं। इन विधियों से सत्गुरू अपने शिष्यों को दीक्षित करते हैं।

प्रश्न–62 मोक्ष के पर्यायवाची शब्दों के विषय में बताईये?

उत्तर– 1. मुक्ति 2. निर्वाण 3. कैवल्य 4. उपवर्ग
5. निश्रेयस 6. श्रेयस 7. अमृत 8. मोक्ष

ये पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न–63 केवल आत्मा ही कब विद्यमान रहती है।

उत्तर– ज्ञान का प्रवेश सुषुम्ना के द्वारा हृदय (विज्ञानमय) कोष में पहुंचता है तब तूर्यावस्था में भूत, भविष्य वर्तमान ये तीनों कालका बोध होता है। तत पश्चात आनंदमय कोष में पहुंचकर सारे सुख दुख के बीज निर्बीज होकर आत्मा में समाहित होकर केवल आत्मा ही विद्यमान रहती हैं

प्रश्न–64 दीपावली की दीपज्योति से क्या गृहण करना चाहिये?

उत्तर– दीप ज्योति हमें, आत्म ज्योति के दर्शन हेतु प्रेरित करती है। हम सजग रहकर ध्यान धारणा के द्वारा इसे प्राप्त कर सकते हैं। इसी आत्म ज्योति का प्रतीक बुद्धि में समाहित होकर चित्त में संचित हो जाता है वह जन्म जन्मांतर तक ये ज्योति साथ रहती है।

प्रश्न–65 लाखों कोस जो गुरू बसे, दीजिये सुरति पठाय का क्या आशय है?

उत्तर– जब भी शिष्य पर कोई भी आपत्ति आ जाती है, संकट आता है और ऐसे समय वह अंतःकरण पूर्वक अपने सद्‌गुरू को आवाज देता है या स्मरण करता है तब यदि सत्‌गुरू लाखों कोस दूर भी हो तो पलक झपकते ही वे शिष्य की रक्षा करते हैं उसे बचा लेते हैं इसे डिवाइन टेलीपेथी (कूर्म दीक्षा) कहते हैं।

प्रश्न–66 क्या केवल केन्द्रों स्थित शक्ति के स्पर्श से ही साधक सिद्ध अवस्था को पहुंचता है?

उत्तर– साधक जब साधना में लीन होता है तब उसे प्रत्येक केन्द्र में सोई हुई प्राकृतिक अशक्ति का स्पर्श होता है। किन्तु इस जड़ शक्ति के केवल स्पर्श से ही सिद्ध अवस्था प्राप्त नहीं होती। विघाती कर्मों के विनाश पर ही सिद्ध अवस्था प्राप्त हो सकती है। उसका बीज ॐ है।

प्रश्न–67 घृणा करने से क्या कर्मबंध होते हैं?

उत्तर– घृणा नहीं गई तो फिर क्या गया? वही तो जाना चाहिये। घृणा किसी से भी नहीं करना चाहिये। इससे कर्मों का बंध हो जाता है जिसे भोगना पड़ता है। अतः वे लोग धन्य हैं जो इस घृणापूरित संसार में घृणा से बचकर जीते हैं।

प्रश्न–68 साधना का केन्द्र शरीर है या आत्मा?

उत्तर– साधना का केन्द्र आत्मा ही है। शरीर पर नियंत्रण होना चाहिये इससे आत्मा को निर्मल बनाने में बल मिलता है। अतः साधना के माध्यम से जीवन मरण को संवारना सुधारना और ज्योर्तिमय बना देना यही लक्ष्य होना चाहिये।

प्रश्न–69 आत्मा के संबंध में जानना व आत्मा को जानना इनमें क्या अंतर है?

उत्तर– ये दोनों भिन्न हैं और दोनों में मौलिक अंतर है। आत्मा के विषय को शास्त्रों का अध्ययन तथा विद्वान व्यक्ति द्वारा समझा जा सकता है। परन्तु आत्मा को जानने के लिये स्वयं अभ्यास करना होगा। इसे आत्म साक्षात्कार से ही जाना जा सकता है। इसके लिये सद्‌गुरू की कृपा की आवश्यकता है। केवल शास्त्रों के अध्ययन से यह कभी भी संभव नहीं।

प्रश्न–70 अरिहंत अवस्था से क्या समझना चाहिये?

उत्तर– अरिहंत, अनंतज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख, अनंत आत्मशक्ति के धारक होते हैं।

प्रश्न–71 जल की कौन कौन सी अवस्थायें है?

उत्तर–
1. मरीची – अंतरिक्ष में व्याप्त
2. मर – पृथ्वी के निर्मीती में सहायक
3. भाप – पृथ्वी के गर्भ में रहने वाला
4. अम्ब – छुलोक–सूर्य प्रदेश से उर्ध्व प्रदेश में व्याप्त

प्रश्न–72 योगी का अर्थ क्या है?

उत्तर– योगी – योग + ई

योग – मिलन, ई–शक्ति (दिव्य शक्ति)

योगी – दिव्य शक्ति का मिलन

प्रश्न–73 आध्यात्मिक रंगों का क्या महत्व है?

उत्तर–
1. लाल–क्रोध का सूचक
2. नारंगी–सहन शक्ति। हिल मिलकर रहना इसका द्योतक
3. पीला–त्याग सेवा दासता
4. हरा–प्रेम–स्नेह, बंध, सत्य पर चलने वाला
5. आसमानी–सेवा, वात्सल्य, आदर सत्कार, मातृभाव का सूचक
6. नीला–सेवा करते हैं पर किसी के नहीं होते
7. बैंगनी–हानि, रोग युक्त, वृति–विकारयुक्त मन, अविश्वास आदि का सूचक है। सब रंग मिलाकर सफेद (शुभ्र) रंग बनता है जो शांति का प्रतीक है।

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2

मनुष्य सब रंगों से परे है। याने जीवन मुक्त। किसी भी आश्रम में रहकर आप जीवन मुक्त हो सकते हैं और जीवन मुक्त होना ही हेतु है।

प्रश्न–74 उद्धार और कल्याण का क्या अर्थ है?

उत्तर– उद्धार का आशय हमें जन्म मरण से मुक्ति पाना कल्याण का आशय शुद्ध होकर हमेशा उन्नति की ओर अग्रसर हो आत्म साक्षात्कारी पुरूष की सेवा से कल्याण होता है। किन्तु संचित प्रारब्ध को भोगना ही पड़ता है।

प्रश्न–75 जीव की उत्पत्ति कैसे हुई?

उत्तर– परलोक से जीव मेघ में आया, मेघ से बरसात के द्वारा पृथ्वी उसे गृहण करती है। पृथ्वी से अन्न धारण करता है। अन्न से मनुष्य धारण करता है। यही जीव की उत्पत्ति का आशय है।

प्रश्न–76 चैतन्य समाधि का क्या तात्पर्य है?

उत्तर– धी नाम बुद्धि है। बुद्धि जिसमें समाहित हो वह समाधि है। वह चाहे सांसारिक हो या आत्मिक हो (सम्यक् अधीयते यत्रा से समाधि) जब बुद्धि सम्यक् रूप से आत्मस्थ होती है तब वह समाधि है। एक चैतन्य (सबीज समाधि) दूसरी निर्बीज समाधि (सिद्ध अवस्था) है। प्रारंभ में जो शरीर पाया है केवल भोग भोगने के पश्चात निष्काम कर्म रूप एवम धर्म रूप के प्रभाव से बुद्धि शुद्ध होकर स्फटिक मणिवत् आत्मप्रकाश से जब युक्त हो जाती है। तभी ऐसा अनुभव प्राप्त होता है। यही चैतन्य समाधि है। जीते जी वह साधक जीवनमुक्त होता है।

प्रश्न—77 फकीर का क्या तात्पर्य है?

उत्तर— संधि विच्छेद के अनुसार फकीर शब्द का विच्छेद फे+क़ी+ये+र आदि वर्ण बनते हैं। फे—वर्ण का आशय फाका—यानि खाने को मिला तो भी ठीक नहीं मिला तो भी बिगड़ता नहीं। की—जितेन्द्रय यानि दशेन्द्रियों को जीतने वाला। दशेन्द्रिय और मन जिसके काबू में है वह ये—याद आत्मतत्व जो स्वयं प्रकाश है, दिव्य ज्योति है वो याद रहे। र—रहम दया करने वाला (शांति दया सम)।

प्रश्न—78 स्त्री को अर्धांगिनी क्यों कहा गया है?

उत्तर— स्त्री में (एक्स) बीज ही है। पुरूष में एक्स व वाय ये दोनों बीज हैं। जब पुरूष से एक्स बीज प्राप्त होता है। तो कन्या का एक्स जन्म होता है। जब पुरूष से एक्स व वाय ये दोनों बीज प्राप्त होते हैं तो पुत्र होता है। स्त्री में एक्स है और उसमें पुरूष का एक्स मिला तो स्त्री प्रधान यानि कन्या होती है। जब स्त्री में वाय बीज जाता है तो पुत्र होता है। अतः स्त्री में केवल एक्स बीज होने से उसे अर्धांगिनी कहा है। अबला कहा गया है।

प्रश्न—79 जिणाणं शब्द का अर्थ क्या है?

उत्तर— जिणाणं शब्द प्राकृत भाषा का है। इसका तात्पर्य जिनेश्वर से है। इसका पूर्ण आशय जो स्वयं जिन बने हैं एवं जो दूसरों को जिन बनाने में सक्षम हैं।

प्रश्न—80 साधक बैर, प्रतिशोध से कब मुक्त होता है?

उत्तर— अरिहंत व सिद्धसाधक पुरूष बैर भाव से मुक्त रहते हैं। उनके मन में प्रतिशोध की भावना नहीं रहती। इस अवस्था में तो केवल अमृत प्रदान करने वाली अभय प्रदान करने वाली विशुद्धि करूणामय स्थिति रहती है।

प्रश्न—81 आत्मानुभाव प्रति का माध्यम क्या है?

उत्तर— आत्मानुभाव सिखाया नहीं जाता, किया जाता है। इसके लिये अंतःकरण पूर्वक ध्यान लगाने का प्रयास करना पड़ता है। यह किसी दूसरे के भरोसे नहीं होता इसमें सब कुछ सत्गुरू के मार्गदर्शन में स्वयं को करना पड़ता है। सत्गुरू के प्रभाव से ही यह संभव है।

प्रश्न—82 क्या आत्मा आत्मा में भेद है या सभी आत्माएं एक हैं?

उत्तर— सभी आत्माएं समान हैं। आत्माएं छोटी या बड़ी नहीं होतीं। प्रत्येक आत्मा स्वभाव से परम है। अंतरमुख होकर यदि हम पुरूषार्थ करें, अपने आपको जानेंगे, अपने आपमें रत हो जायें, तल्लीन हो जायें तो प्रत्येक आत्मा परमात्मा बनने में सक्षम है।

प्रश्न—83 क्या साधक को साधना के लिये धर्म परिवर्तन करना आवश्यक है?

उत्तर— साधना के लिए किसी भी साधक को धर्म परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। वह जिस धर्म का पालन करता है।

उसी का पालन करे। इसके लिए सत्गुरू के मार्गदर्शन की आवश्यकता है। यदि सद्गुरू प्राप्त होते हैं तो उनके बताये गये मार्गानुसार साधना में रत हो जाओ। आत्म कल्याण के लिए स्वयं अपने सतगुरू के सान्निध्य में साधना करना चाहिए।

आप सबको ज्ञात है कि मैंने आज तक मेरे पास आत्म कल्याण हेतु जो जो आया उसको न धर्म परिवर्तन छोड़ने, घर गृहस्थी छोड़ने तथा पारिवारिक जिम्मेदारियां छोड़ने को कहा है। न कभी किसी से उसके जात पात व धर्म के विषय में पूछा है। बल्कि उसकी जैसी मान्यता है उसके पूर्ण अनुरूप आत्मसाक्षात्कार हेतु बीजमंत्र दिया है। अपने शिष्य परिवार में सभी वर्ग, जाति तथा धर्मावलंबी साधक अपनी मान्यताओं के अंतर्गत रहकर आत्मकल्याण में रत हैं।

प्रश्न–84 भव्य आत्मा व अभव्य आत्मा की स्थिति क्या होती है?

उत्तर– भव्य का अर्थ मोक्ष प्राप्ति के लिये योग्य व अभव्य का अर्थ मोक्ष प्राप्ति के लिये अयोग्य। भव्य जीव में ही मोक्ष स्थिति जागृत होती है। अभव्य आत्मा में यह स्थिति नहीं होती।

प्रश्न–85 तप के मुख्य प्रकार क्या हैं?

उत्तर– तप के दो प्रकार 1. बाह्य तप , 2. अभ्यंतर तप

1. बाह्य तप – जो बाहर से कष्ट रूप प्रतीत होते हैं। इसमें बाहर लोक में प्रसिद्धि मिलती है।

2. अभ्यंतर तप – अभ्यंतर तप का आशय आंतरिक मलिन प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त करना होता है। अभ्यंतर तप के बिना आत्म कल्याण, आत्म साक्षात्कार नहीं होता।

प्रश्न–86 योगज विभूति लब्धि धारक किसे कहा जाता है? वह किसी एक इन्द्रिय से पांचों इन्द्रिय का काम ले सकता है, यह किसी मनीषी ने कहा है। इस इन्द्रियों की विकसित शक्ति को संभिन्न स्त्रोतोपलब्धि कहा गया है। कृपया इस पर प्रकाश डालिये।

उत्तर– साधक साधना के माध्यम से जब आत्मस्थ हो जाता है तब उस स्थिति में ऐसा करने का वह अधिकारी हो जाता है यह सत्य है।

प्रश्न–87 योगी अरिहंतों से उपकृत होता रहता है, इससे क्या समझना चाहिए?

उत्तर– अरिहंत के निर्माण के बाद भी उनका आत्मसाक्षात्कार करने वाली भव्य आत्मा पर उपकृत होता रहता है। न केवल देशना के द्वारा ही वे जगत का उपकार करते हैं, उनकी नाम मात्र की उपासना करने वालों का भी कल्याण होता है। उनका नाम मात्र का अवलंबन लेने वालों को भी तत्स्वरूप की प्राप्ति होती है।

प्रश्न–88 आराधना के अधिकारी कौन होते हैं?

उत्तर– आराधना के अधिकारी या आराध्य वे ही बन सकते हैं जिनकी आराधना करने वाला साधक–आराधक स्वयं आराध्य बन जाता है। पूज्य गुरूजी स्वयं कहते हैं कि मैं शिष्य नहीं बनाता मैं तो अपने शिष्य साधक को समकक्ष बनने का मार्ग प्रशस्त करता हूं।

प्रश्न–89 भय कौन कौन से हैं एवं आत्मसाक्षात्कारी साधक भयमुक्त कब होते हैं?

उत्तर– भय निम्न होते हैं 1. लोकभय 2. परलोक भय 3. मृत्यु भय, 4. बेदना भय, 5. अकारण भय, 6. अगुप्ती भय, 7. आकस्मिक भय

आत्मसाक्षात्कारी साधक जब मृत्यु केन्द्र पर जय प्राप्त कर लेता है तो वह सारे भयों से मुक्त हो जाता है।

प्रश्न–90 हमें मौन कितने प्रकार से करना चाहिये?

उत्तर– मौन का आश्रय साधक को पूर्ण सहायक होता है। मनका मौन, वचन का मौन व तनका मौन

1. मनका मौन – आत्मा से भिन्न अनात्मक पोषक पदार्थों का चिंतन न करना यह मन का मौन है।
2. वचन मौन – असत्य, अप्रिय, क्रोधमय अभिमानयुक्त लोभमय न बोलना वचन मौन कहलाता है।

3. तनका मौन – काया से आध्यात्म भाव की ओर अग्रसर होने की क्रिया तन का मौन कहलाती है।

मौन के द्वारा आत्मा अशुभ वृत्ति, प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त कर लेती है। मौन अवस्था में हमारी क्रिया सम्यग्ज्ञान पर आधारित होनी चाहिये।

प्रश्न–91 आध्यात्मिक योग के अन्तर्गत कौन कौन से योग माने गये हैं?

उत्तर– आध्यात्मिक योग के अन्तर्गत मुख्यतः

1. आध्यात्म योग 2. भावना योग 3. ध्यान योग
4. समता योग 5. वृत्ति संशय योग माने गये हैं।

प्रश्न–92 शरीर किन पांच तत्वों से बना है? उनके गुणधर्म क्या हैं?

उत्तर– जिन पांच तत्वों से शरीर बना है वे तथा उनके गुणधर्म इस प्रकार हैंः–

1. मिट्टी (पृथ्वी) – गंध
2. आप (जल) – धर्म पसरना गुण–शीतल
3. तेज (अग्नि) – धर्म–दाह, गुण–प्रकाश
4. वायु–धर्म–स्पर्श, गुण–रूक्ष
5. आकाश–धर्म–ध्वनि, गुण–शब्द (ध्वनि का वहन करना)

प्रश्न–93 दान की दूषण व भूषण अवस्थाओं के विषय में बताईये?

उत्तर– दान देते समय विवेक, सात्विक बुद्धि निःस्वार्थतता के भाव होने चाहिये। दान देते समय दान लेने वाले का अनादर नहीं करना चाहिये। दान देने में विलम्ब नहीं करना चाहिये। दान अनिच्छा से नहीं करना चाहिये। दान करने के पश्चात पश्चाताप नहीं करना चाहिये। दान करते समय इन सभी दोषों से बचना चाहिये। दान करते समय आनंद की अनुभूति होनी चाहिये। पात्र का बहुमान तथा उसे प्रिय वचन से संबोधित करना चाहिये। दान योग्य पात्र का अनुमोदन करना चाहिये।

प्रश्न–94 दान के क्या अलग अलग प्रकार होते हैं?

उत्तर– दान अलग अलग प्रकार से किया जाता है।

1. अभय दान – भयभीत जीव को भयरहित करना अभयदान कहलाता है।
2. सुपात्र दान – अच्छे तथा उत्तम व्यक्ति को दिया दान सुपात्र दान कहलाता है।
3. अनुकम्पादान – दया दान, करूणा दान, सहानुभूति दान ये सब अनुकम्पा दान कहलाते हैं।

4. उचित दान – बक्षीस के रूप में या कर्तव्य के नाते धन या साधन देना उचित दान कहलाता है।
5. कीर्ति दान – अपनी बढ़ाई, प्रसिद्धि या कीर्ति की लिप्सा से दिया दान कीर्ति दान कहलाता है।

प्रश्न–95 अभ्यंतर तप के अन्तर्गत कौन–कौन से तप आते हैं?

उत्तर– अभ्यंतर तप के अन्तर्गत 6 प्रकार के तप आते हैं।

1. प्रायश्चित, 2. विनय, 3. वैयावृत्य, 4. स्वाध्याय, 5. ध्यान, 6. कायुत्सर्ग इन सभी को सत्गुरू का सान्निध्य तथा मार्गदर्शन आवश्यक है।

प्रश्न–96 आध्यात्मिक विकास में कौन सी भावनायें सहायक होती हैं?

उत्तर– अनित्य भावना, अशरण भावना, संसार भावना, एकत्व भावना, अन्यत्व भावना, अशुचित्व भावना, आश्रव भावना, संवर भावना, निर्जरा भावना, लोक स्वरूप भावना, बोधि दुर्लभ भावना, धर्म भावना। इस प्रकार 12 भावना सहायक होती है। किन्तु मात्र नाम सुन लेने से तो कोई आध्यात्मिक लाभ नहीं होता। सत्गुरू से जो उपदेशित होता है या उसे जो आदेश होता है, उसके अनुसार आत्मसाक्षात्कारी साधक को अपनी साधना में रत होना चाहिये।

प्रश्न–97 शरीर में शरीर शास्त्रियों द्वारा बताई गई ग्रन्थियों का योग चक्रों से क्या संबंध है?

उत्तर– हमारे शरीर में अनेक ग्रन्थियां हैं। योगियों ने योग चक्र कहा है। वर्तमान में शरीर शास्त्र में इन्हें ग्लेंडस कहा जाता है। हमारे योग शास्त्रों में इन चक्र केन्द्रों का जो स्थान व आकार बताया गया है आज उसे शरीर शास्त्री मान रहे हैं–

	शरीर शास्त्रानुसार ग्रन्थि	**योग चक्र**
1.	पीनीअल ग्रन्थि	सहस्त्र चक्र
2.	पीट्यूटरी ग्रन्थि	आज्ञा चक्र
3.	थायरॉइड ग्रन्थि	विशुद्ध चक्र
4.	थाइमस ग्रन्थि	अनाहत चक्र
5.	एंड्रीनल ग्रन्थि	मणिपुर चक्र
6.	गोनाड ग्रन्थि	स्वाधिष्ठान चक्र
7.	गोनाड ग्रन्थि	मूलाधार चक्र

प्रश्न–98 ब्रह्म का क्या अर्थ होता है?

उत्तर– बृहत् धातु से ब्रह्म शब्द की उत्पत्ति है। ब्रह्म का अर्थ महान होता है।

प्रश्न–99 विश्लेषज, मोहज, अनुतापज व आंगामी दृष्यदर्शन का क्या अर्थ है?

उत्तर–
1. विश्लेषज – मृत्यु के पहले पीड़ा में बेहोश हो जाता है (मृत्यु शैय्या पर)
2. मोहज – परिवारजन इकट्ठे होते हैं, डॉक्टर वगैरह आते हैं। परिवारजनों से संपत्ति आदि के बारे में चर्चा चलती है इस स्थिति को मोहज कहा है।
3. अनुतापज – अनु–पश्चात्, तापज–ताप जिस योनि में जाना है उसका बोध होता है।
4. आगामी दृश्य दर्शन– कर्म का फल जैसा जीवन भर किया वैसा दिखता है उसमें संचार कराया जाता है। जिन विचारों से जीवन यापन किया उसके फलस्वरूप उसी योनि में संचारित किया जाता है।

प्रश्न–100 आरती का क्या तात्पर्य है?

उत्तर– आरती में एक प्रकार का समर्पण, न्यौछावर होने की भावना है। दीप से वलय है, ज्योति है, गति है, उनको बढ़ाना है। स्वयं को उसमें सौंप देना है। आरती हमें आत्मज्योति की ओर इंगित करती है।

प्रश्न–101 सिद्धियां कैसे प्राप्त होती हैं?

उत्तर– किसी किसी को जन्म से ही सिद्धियां प्राप्त होती हैं। उसके पूर्व जन्म के संचित कर्म व संस्कार उसके पास रहते हैं जो अगले जन्म में उसके कारक बन जाते हैं।

मंत्र के अभ्यास से भी सिद्धि प्राप्त हो सकती है। तप के द्वारा भी प्राप्त होती है। औषधियों के प्रयोग से भी अनेक सिद्धियां प्राप्त हो सकती हैं। समाधि में आत्मस्थ अवस्था प्राप्त होते होते सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

प्रश्न–102 साक्षात्कार का क्या अर्थ है?

उत्तर– साक्षात्कार – स+ अक्ष + कार इन तीन धातुओं से इस शब्द का निर्माण हुआ है। स–वह–अर्थात् पूर्ण ब्रह्म। अक्ष–देखना एवं संशय है। कार–अथवा कारय–या कार्य (कुरू धातु से) अतः साक्षात्कार का अर्थ–उसे (आत्मा) को देखना या पाना या उसमें आश्रित होना या आधीन होना।

प्रश्न–103 साक्षात्कार कैसे होता है?

उत्तर– साक्षात्कार, सत्गुरू (सत्पुरूष) या सिद्ध पुरूष के द्वारा ज्ञान प्राप्त कराये जाने पर या उनके वाक्यों द्वारा या वर्ण समूह द्वारा उनकी अपनी शक्ति प्रदान कर, यह जो संशय है वासना जन्य आवरण या परिणाम है, उसे उस प्रक्रिया द्वारा जो शक्ति सुख दुख के प्राप्ति में व्याप्त होती है अर्थात् जन्म मरण में उलझाये रखती है, उसी शक्ति को विशेष मार्ग का अनुसरण कराके आत्मज परमपद को प्राप्त कराते हैं।

प्रश्न–104 प्रणाम आशीष व आशीर्वाद में परस्पर क्या संबंध है?

उत्तर– प्रणाम के पश्चात आशीष मिला, उसे जोड़कर श्रृंखला बनती है। आशीष के प्रभाव से कार्य होता है। आशीर्वाद एक वाद है, तत्व है। इस वाद में ही आशीष मिलती है।

प्रश्न–105 त्रिवेणी संगम का तात्पर्य क्या है?

उत्तर– गंगा–यमुना की धाराओं के बीच में लकीर सी दिखती है यही सरस्वती है। इसी प्रकार भूलोक बीच में है। मानव यही से चाहे ऊपर जाये चाहे नीचे जाय, यह उसकी इच्छा पर है। क्योंकि मनुष्य स्वतंत्र हैं। अतः त्रिवेणी संगम का तात्पर्य मनुष्य जन्म और भूलोक से है। (सुवर्ण संधि, सुवर्ण भूमि)।

प्रश्न–106 आचार्य किसे कह सकते हैं?

उत्तर– शास्त्र–अनुभूत विषय का अभ्यास करके (स्व. के आत्मा की अनुभूति के बाद) गांवों गांवों में जाकर स्वयं आचरण में लाकर लोगों में प्रसार एवं (सिखाना) प्रचार करता है उसे आचार्य कहते हैं।

(आच्चिनोती शास्तार्थमाचारे, आचार्यस्तेन चोच्यते)

प्रश्न–107 अरिहंत राग–द्वेष की प्रवृत्ति से मुक्त रहते हैं। पर जब प्रार्थना, भक्ति उनकी करते परमात्मा को हम कर्ता मान रहे हैं। क्या ये वास्तविकता है या हमारा भ्रम है?

उत्तर– यह सच है कि अरिहंत या सर्वज्ञ या परमात्मा वहां स्वयं कुछ नहीं करते केवल भक्त का समर्पण भाव परिणतिमय बन शुभ परिणाम प्राप्त कर लेता है। इन परम आत्माओं की स्तुति की परिणति से आत्म साक्षात्कारी साधक को सफलता के साथ मुक्तावस्था प्राप्त होती है। अरिहंत कर्ता तो नहीं है। पर उनका निमित जन्य कर्तव्य अवश्य माना गया है।

जब भोपाल में वर्ष 1997 में गुरू पर्व सम्पन्न हुआ, तब पूज्य गुरूजी का स्वास्थ्य बिलकुल ठीक नहीं था और वे काफी कमजोर हो गये थे। परन्तु पिछले कई वर्षों में उनका बीमार पड़ना और फिर स्वस्थ हो जाना हमेशा शिष्यगणों को इस विश्वास में रखता रहा कि पूज्य गुरूजी को कभी कुछ हो ही नहीं सकता। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने या तो अपना शरीर छोड़ने का निश्चय कर लिया था या उन्हें इस बात का आभास था कि वे कब इस संसार को छोड़ेंगे।

वैसे भी दिव्य आत्माओं के शरीर छोड़ने का स्थान एवं समय का निर्धारण परमसत्ता द्वारा किया जाता है न कि किसी सांसारिक योजना के द्वारा। पूज्य गुरूदेव ने कभी अपने दर्शन या आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार प्रसार नहीं किया और न ही किसी प्रकार का दिखावा किया। सभी परिवार वालों को भली भांति ज्ञात है कि आर्थराइटिस, सोरायसिस, एलर्जी, शरीर में गांठ और गम्भीर बीमारियों और उनसे होने वाले घोर कष्टों से पीड़ित होने के बाद भी गुरूजी के मुखारबिन्द से कभी भी एक आह या उफ तक नहीं निकली। फिर उनके द्वारा संकेत किये बिना हम सभी अल्पज्ञानी शिष्य कैसे समझ सकते थे कि गुरूजी कब यह भौतिक शरीर छोड़ेंगे।

स्पष्ट संकेत देने के बाद भी श्री जैन तक नहीं समझ सके कि पूज्य गुरूजी शरीर छोड़ने का संकल्प कर चुके थे। हम गुरूजी से 1 सितम्बर 1997 को जब विदा लेकर वापिस आ रहे थे तब पूज्य गुरूजी ने कहा था कि **"इस बार हमारी खोज खबर जल्दी जल्दी लेना"**। वे उनके इस संकेत को नहीं समझ सके। अन्य शिष्यों को भी गुरूजी यह कहते रहे कि उनके पास अब समय कम होता जा रहा है परन्तु किसी ने भी इसे

गंभीरता से नहीं लिया था। मगर गुरूजी के वे शब्द कि ''अब मैं धीरे–धीरे जा रहा हूं'', भविष्य में घटित होने वाली घटना की ओर उनका स्पष्ट संकेत था। इसके बावजूद भी हम उनसे अनमोल आध्यात्मिक मार्गदर्शन पाने में स्वयं उतने जाग्रत नहीं थे जैसी उनकी अपेक्षा थी।

लूनिया जी को भगवान महावीर के दर्शन में ''सन्थारा'' की क्रिया के हर पहलू को समझाते हुए गुरूजी ने बताया था कि आध्यात्म में उसकी सार्थकता है। इस विधि का गुरूजी ने भी उपयोग किया। धीरे धीरे अन्न ग्रहण करना घटता गया और जब अन्न की मात्रा नाममात्र की बची तब शंका होने लगी थी कि गुरूजी अपने शरीर त्यागने के संकल्प में आगे बढ़ चुके हैं।

26/12/1997 को पूज्य गुरूजी ने मुंगेली में शांतिलाल जी लूनिया से बातचीत में जो कुछ कहा वह अनमोल अनुभव के बोल दुहराना उनके द्वारा महाप्रयाण का मात्र संकल्प या संकेत नहीं था अपितु एक ऐसा निर्णय था जो पूरी सजगता से लिया गया अंतिम निर्णय था। अपने इस अनमोल बोल में जिन्हें पूरी सावधानी से कैसेट में रिकार्ड किया गया था पूज्य गुरूजी ने कहा कि–

''15 साल की आयु में घर–बार, संपत्ति, सब छोड़कर 'सत्य की खोज करना' व जीवन की सार्थकता समझना मामूली घटना नहीं थी। इस तपस्या में मैंने अपना मूल शरीर देखा है, शरीर का कहां से आदि एवं अंत है तथा शारीरिक अवयवों का कार्य संचालन सभी कुछ देखा है। मुझे आकाशवाणी होती है, परमपद प्राप्त करना कोई मामूली बात है? यह सब मेरे एक जन्म की तपस्या नहीं है। अनेक जन्मों की है, युग–युगान्तर की है। सैकड़ों जन्म बीत चुके हैं। भूत–भविष्य, दूरदृष्टि, दूरदर्शन, दूरश्रवण,

जीवदान, एक समय में कई जगह उपस्थित होना, आपत्ति विपत्ति में संरक्षण देना, क्या यह सब एक तपस्वी की विलक्षण प्रतिभा और सद्गुरू के अलावा किसी से सम्भव हो सकता है?''

मैं तत्व की बात बोलता हूं, मैं महावीर स्वामी हूं, मैं वासुदेव हूं, मैं गुरूनानक हूं, मैं स्वामी रामदास, तुलसीदास हूं, खाली नाम अलग है, रूप अलग अलग हैं, काल अलग हैं बाकी तत्व एक है–कुण्डलिनी एक है, परमपद प्राप्त करने, मृत्यु प्राप्त करने के लिये रास्ता एक है। अब मैं शरीर छोड़ने पर आया हूं, **चार–पांच महीने बाकी हैं।** सभी देवी–देवताओं ने हमे वरदान दिया, लेकिन मैंने किसी देवी–देवता से कुछ नहीं मांगा। मुझे राम, जानकी, रामजानकी सिंहासन में, गुरू वशिष्ठ, हनुमान, लक्ष्मी, शंकर, पार्वती, गौरी, दुर्गा, गणेश, राधिका, कृष्ण और संतों में बहुत मिले हैं। मैं अनेकों बार निष्प्राण रहा कभी 3 दिन, कभी 5 दिन कभी 7 दिन निष्प्राण रहा फिर जीवित हो गया। 26–27 जुलाई 1982 को वह तत्व हमें प्राप्त हो गया, सारा ब्रह्माण्ड ज्योति से भर गया और अकेला मैं उसके बीच में था।

मैं महावीर स्वामी को देखा हूं, पेन्ड्रा रोड के श्री वीरचन्द्र जैन गवाह हैं। सारा ब्रह्माण्ड ज्योति से भरा है चारों तरफ मणिवत ज्योति। वहीं महावीर स्वामी बैठे हुए थे। मैं गया और वीरचन्द्र मेरे पैर पकड़े हुए गया। मैंने कहा, कर लो दर्शन–दिव्यलोक में महावीर स्वामी हैं। मेरी छः बार मृत्यु हो चुकी है और अभी भी जीवित हूं। मैंने परमपद पा लिया है, मैं परमहंस हूं, मैंने सब बंधन काट लिये हैं। मृत्यु केन्द्र के ऊपर गया और ब्रह्म रंध्र में जाकर स्थायी हुआ। सहस्त्रार में जाने के बाद 21 दिन में मृत्यु हो जाती है। ईश्वर कोटि के अवतारी पुरूष ही वहां से लौट सकते हैं। महाकारण में जाकर केवल देवता लौट सकते हैं, वे जो अवतार के साथ

आते हैं, नित्य सिद्ध होते हैं। मैं अवतार के साथ आया हूं। गुरू बिना ज्ञान नहीं होता। किसी न किसी जन्म में मेरा मार्गदर्शन हुआ। कौन से जन्म में हुआ, यह अभी नहीं मालूम। इस जन्म में नहीं हुआ। इस जन्म में तपस्या करके निकला। नियमों का पालन करें, पुण्य होगा, पुण्य से स्वर्ग मिलेगा, पुण्य क्षीण होगा तब मृत्यु लोक में आप आ जायेंगे.... अब हो गया। हमने कल्याण का बीज दिया है।

दिसम्बर 1997 से मार्च 1998 के बीच गुरूजी के अनेकों शिष्यों ने मुंगेली आश्रम में रहकर गुरूजी की सेवा का लाभ उठाया एवं अनेकों रहस्य जो गुरूजी द्वारा समय समय पर प्रकट किये उन्हें भी रिकार्ड कर लिया था।

इसी दौरान जनवरी फरवरी 1998 में श्री सुधीर देशमुख ने जो रिकार्ड किया था उसमें पूज्य गुरूजी ने बताया था कि उनका एक जन्म आयरलैण्ड में हुआ था और उस जन्म में भी गुरू माता ही उनकी पत्नी थीं और उस देश के राजा रानी होने का सौभाग्य उन्हें मिला था। पूज्यवर ने प्रकट किया कि एक समारोह में हिस्सा लेकर बग्गी में बैठकर निकल पड़े तथा चारों ओर दिव्य प्रकाश व्याप्त था जहां न सूर्य, न चन्द्र का पता था और इसी दिव्य प्रकाश के बीच एक नदी के किनारे बग्गी से उतर कर एक पत्थर पर खड़े हो गये और उसके बाद क्रमशः दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवे, छटवें और अंत में सातवें पत्थर पर जाकर हम दोनों ने जल समाधि ले ली थी। आगे गुरूजी बताते गये कि इसी तरह एक जन्म इन्हीं गुरुमाता जी को पत्नी रूप में हिमालय में टिहरी—गढ़वाल प्रदेश में भी राजा रानी के रूप में हुआ था और ऊंचे ऊंचे पहाड़ों से बीच मैदान में आकर भू—समाधि लिये थे। इसी प्रकार वर्तमान जन्म में लगभग 72 वर्ष की उम्र में पत्नी ने कह दिया था कि हमारा आपका कोई संबंध नहीं है

आप सन्यासी हो और आप कहीं भी जा सकते हैं। गुरुमाता से यही हमारा आखिरी रिश्ता था जो जून 1977 में उनके देह छोड़ने पर सदा के लिये समाप्त हो गया।

गुरूजी ने अपनी बात बोलते हुए यह भी प्रकट किया कि उन्होंने अपनी सौतेली मां की 14—15 की उम्र में डिलेवरी करायी थी और अपना जनेऊ तोड़कर मां से लड़की की नाड़ अलग की थी। मैंने एक गायनाकालाजिस्ट और बच्चों के डॉक्टर के रूप में भी प्रसिद्धि पाई थी क्योंकि मेरे मुंह से निकला कि अच्छे हो जाओगे, और ऐसा हो जाता था। मैं भारतीय संस्कृति के लिये पागल हूं। मैंने यवतमाल में 4 आने रोज पर ईंट सर पर ढोयी, लोहा तोड़ा, मजदूर के साथ सड़क पर गुड़ चना खाकर सोया, लेकिन किसी के दरवाजे पर जाकर अन्न या पानी भी नहीं मांगा। भीख कभी नहीं मांगी। ''मांगने से मर जाना अच्छा'' यही गुरू की सीख है। गुरूजी अपनी जीवन लीला को विराम देने का निश्चय कर चुके थे और जाते जाते यह भी उनके शिष्यों ने रिकार्ड किया कि गुरूजी ने फोर्ड और सेव्हरलेट जैसी कार भी चलाईं और उन्हें दुरूस्त भी किया है।

मैं शंख हूं, मैं महाशंख हूं। इस मुंगेली में 40 हजार की बस्ती है लेकिन कोई आता नहीं क्योंकि मैं पागल हूं। सारा जीवन मोह और माया में बीत जाता है।

योगी तीर्थराज होता है, लेकिन किसी ने मुझे पहचाना नहीं। मैं ऊँकार हूं, मैं सद्गुरू हूं, मैं परब्रह्म हूं। त्याग और प्रेम आज से नहीं जन्म जन्म से होता है। मैं आशीर्वाद देता हूं और वैसा हो जाता है। ये थीं पूज्यवर के द्वारा दी गई कुछ अविस्मरणीय सार्थक जानकारियां जो महा प्रयाण के पूर्व रिकार्ड की गईं थीं।

उन्होंने यह भी प्रकट किया कि मेरा सब काम भगवान श्रीकृष्ण ठीक उसी तरह करते हैं जैसे वह सुदामा का करते थे। Love of God inforces me, power of God, protects me, wherever I go, he is.

यहां यह बताना प्रासंगिक होगा कि एक बार सुधीर देशमुख को गुरूजी बोले कि उन्हें एक अंगूरा स्वेटर चाहिये था और उसी दिन से शाम को उनके शिष्य उपहार में बिना जाने स्वेटर लाने लगे। यह सिलसिला लगातार आठ दिन तक चलता रहा और जो भी शिष्य आया उन्हें उपहार में स्वेटर ही लाकर दे रहा था। आठवें दिन किसी ने अमेरिका से एक बढ़िया अंगूरा स्वेटर पू. गुरूजी के लिये पार्सल से भेजा, जिसे गुरूजी ने बहुत पसंद किया और इसके बाद भेंट में आने वाले स्वेटर बंद हो गये।

एक अन्य घटनाक्रम में जो सम्भवतः 1994 की है जब जे. के. जैन उन्हें नागपुर से वर्धा लेकर गये थे। उस दिन राजू काण्णव ने गुरूजी से पूछा कि गुरूजी बाजार से कुछ लाना है? गुरूजी ने कहा कि एक कॉटन की चादर ले आओ। जब चादर लेकर गया तो गुरूजी ने श्रीमती शीला पांडे (जहां गुरूजी विराजमान थे) को कहा कि मेरे प्रिय शिष्य राजू ने यह चादर लाई है और इसे ओढ़कर मैं सोता हूं। लगभग 1 घंटे बाद श्रीमती प्रमिला उपाध्याय नाम की शिष्या गुरूजी से मिलने आईं और उनके सामने 15 चादर की एक गठरी रखकर कहा कि गुरूजी ऊपर की तीन चादर आपके लिये और शेष 12 चादर आश्रम के लिये लाई हूं। गुरूजी ने वातावरण को अत्यंत सरस बनाते हुए राजू काण्णव से कहा कि राजू कैसी रही। सिद्ध योगी के मुखारबिन्द से जो बात निकलती है उसे स्वयं भगवान पूरी करते हैं जैसा कि पूज्य वर ने ऊपर इंगित किया है।

पूज्य गुरूजी अब शीघ्र ही शरीर छोड़ेंगे, यह फिर भी कोई भी समझ नहीं पाया। माह फरवरी के अन्तिम सप्ताह में श्री डी. एस. राय भी आश्रम में आये हुए थे और बिना किसी संदर्भ के गुरूजी ने एक बात कही थी–''कि सबके बाल बढ़े हैं और कोई भी शिष्य बाल न कटवाये'' यह भी इशारा किया था। समय करीब आ रहा था और एक दिन गुरूजी ने शांतिलाल जी लूनिया को कहा कि ''प्रत्येक को अपने आध्यात्मिक कल्याण के लिये सजग रहना चाहिये व निष्काम कर्म का उपार्जन ही लक्ष्य बनाना चाहिये। यही भावी भव की स्थिति का निर्माण करता है।''

दिनांक 05–03–1998 को पूज्य गुरूजी ने शांतिलाल जी लूनिया से कहा कि कल भिक्षु भोजन करा दें तो कैसा रहेगा। लूनिया जी ने कहा यह अति उत्तम रहेगा और उसकी व्यवस्था कल करा दी जायेगी। उन्होंने कहा कि गुरूजी आप तो कुछ भी अन्न ग्रहण नहीं कर रहे हैं–क्या इस भिक्षु भोजन व्यवस्था के आयोजन पर आप भोजन करेंगे। कृपा निधान ने लूनिया जी का यह निवेदन स्वीकार कर लिया और कहा कि मेरा टिफिन भी भेज देना, आप कहते हैं तो मैं भी कुछ ले लूंगा। फोन द्वारा लूनिया जी को सूचना मिली कि गुरूजी ने आहार ले लिया है और भिक्षु भोजन आरंभ करा दें।

गुरूजी के आदेशानुसार दिनांक 6–3–1998 दिन शुक्रवार को भिक्षु भोजन कराया गया जो जैन दर्शन में प्रचलित जीवित सुकृत्य महोत्सव प्रथा का एक भाग है। एक बात स्मरणीय रहेगी कि पूज्य गुरूजी ने भिक्षुजन भोजन करते हुए कहां तक बैठेंगे, पहले ही बता दिया था। भिक्षु भोज के दिन गुरूजी के बताये अनुसार ढंग से स्वमेव भोजन हेतु बैठे तब दादा अशोक धर्माधिकारी, श्री संतोष शुक्ला और स्वयं लूनियाजी सब

आश्चर्य चकित थे कि यह असंभव सी लगने वाली व्यवस्था गुरूजी के कथनानुसार व्यवस्थित हो गई। भिक्षु पंक्ति का अंतिम छोर जैन मंदिर के निकट तक बैठा। वह बात गुरूजी ने एक दिन पूर्व कही थी पर शिष्यगण यह सब समझ नहीं पाये थे।

गुरूजी समय समय पर आध्यात्मिक शंकाओं का समाधान किया करते थे, जिसे लिपिबद्ध भी किया गया है। इन्हीं दिनों में पूज्यवर ने बताया था कि इसे शीघ्र कैसेट में संकलन कर लें—**''आलस्य छोड़ें, मैं इस कार्य को क्यों कह रहा हूं, इसका कारण है, समय का उपयोग करें।''** गुरूजी इस कार्य को शीघ्र सम्पन्न कराने को क्यों आतुर हैं यह फिर भी समझ नहीं आया पर उनकी कृपा से इन गूढ़ आध्यात्मिक शंकाओं का समाधान अवश्य पूरा हो गया, जिसे पिछले अध्याय में ''गूढ़ रहस्यों का समाधान'' में दिया गया है, जो जिनवाणी, गीता, बाइबिल, कुरान आदि सभी धर्म ग्रन्थों का सार है। पूज्यवर ने आशीष देते हुए कहा था कि मेरे द्वारा दिये गये सारे समाधान मेरे स्वयं के अनुभव पर आधारित हैं जो प्रत्येक साधक के आत्मकल्याण हेतु सहायक होंगे।

गुरूजी के स्वास्थ्य संबंधी समाचार लगातार सभी परिवारजन विशेषकर श्री जैन लेते रहे। अंत में श्री दिलीप मराठे गुरूजी को देखकर जब भोपाल आये और उन्होंने कहा कि तुरंत मुंगेली जाना चाहिये और उसी दिन श्री जैन, श्री राय व श्री चंद्रभूषण शर्मा मुंगेली रवाना हो गए। रास्ते में गोंदिया से श्री राजेन्द्र जैन भी साथ हो गए एवं 12—03—1998 को दोपहर पहुंच गए।

1993 में भिलाई में जो ऑपरेशन गुरूजी का हुआ था उसके बाद गुरूजी ने स्पष्ट कह दिया था कि उनके शरीर की और किसी भी तरह

की चीर फाड़ न की जावे। पेट के ट्यूमर का आकार भी बढ़ रहा था जो 1996 में 3 से 4 सेंटीमीटर था तथा अन्य छोटे छोटे ट्यूमर भी विकसित हो गये थे। अनेकों व्याधियों को अपने में समेटे गुरूजी को ऊपर से तो कोई विशेष कष्ट नहीं था और यदि रहा भी हो तो ना उन्होंने प्रकट किया ओर शायद उन कष्टों को विधाता ने उन्हें महसूस ही न होने दिया हो। यह सब हम सभी शिष्यों के लिये अनबूझी पहेली ही रहेगी। गुरूजी को अपने शरीर से कभी कोई लगाव या मोह नहीं रहा और न उन्होंने इसकी कभी परवाह की थी। पूज्यवर के जीवनकाल के अनेकों दुखद प्रसंग हुए। कष्टों को सहज रूप में सहने की अपनी विराट क्षमता का उन्होंने कभी जिक्र नहीं किया और अपने ध्येय से कभी विचलित नहीं हुए। लगातार निराहार रहते हुए भी हर शिष्य को आशीष देने का कार्य अंत समय तक किया और कष्ट के कारण कोई कराह उनके श्री मुख से कभी नहीं निकली।

डॉ. श्रीमती के. के. पंधेर कुछ समय से गुरूजी के पास ही मुंगेली में थीं। उन्होंने बताया कि 24 घण्टों में गुरूजी मुश्किल से 15—20 एम. एल. पतला शीरा, 20—30 एम.एल. बिना दूध की चाय और लगभग इतना ही दाल का पानी या सूप तथा 2—4 नरम किया फल लेते थे। उनका भोजन ब्रह्मज्ञान ही था। 3—4 दिन तो मात्र पानी के अलावा कुछ भी नहीं लिया।

दोनों पैरों में सूजन थी, घुटनों में दर्द बना रहता था, पिण्डली व जांघ पर त्वचा व हड्डियों के बीच मांस नाम मात्र का था। पेट का गोला बढ़कर मूत्र नलिकाओं एवं अंतड़ियों पर दबाव डालने लगा था। दोनों हाथ सूजे हुए थे, कलाई तक एकदम ठण्डे थे। नाखून बार बार नीले पड़

रहे थे। ब्लड प्रेशर धीरे धीरे कम होता जा रहा था। ड्रिप लगाने से गुरूजी ने मना कर रखा था। दवायें इन्ट्रामस्कुलर इंजेक्शन के रूप में चल रहीं थीं। चेस्ट पेन होने पर गुरूजी छाती पर हाथ फेरते थे ओर उन्हें सारबीट्रेट की गोली दे देते थे। डेरीफायलिन से उन्हें शरीर में खुजली निरंतर बनी हुई थी।

दवाईयां लगभग बन्द सी हो गईं हैं, शरीर में खुजली काफी बढ़ गई है, बेचैन रहते हैं, पर अप्रकट रूप से, स्पोन्डेलाइसिस से गर्दन की तकलीफ बढ़ गई है। खाने नास्ते के लिए बैठ नहीं पाते। गिरने का डर बना रहता था। सिर के पीछे भी दर्द बना रहता था तथा लेटने से आराम मिलता था।

कभी–कभी पलंग पर, शांत एक करवट पर हाथ पैर मोड़े हुए एक बालक की सहजता, सरलता एवं आकर्षण आभा लिये प्रतीत होते थे। तमाम तरह के कष्टों के बीच परिवार के लोगों को बराबर समय समय पर आशीष देते रहते थे। शरीर पर तमाम कष्टों के बीच परहित में लगे हुए थे।

आश्रम में सभी शिष्यों को गुरूजी के स्वास्थ्य को लेकर विशेष चिन्ता थी। सामने होली की पूर्णिमा थी जो अक्सर गुरूजी के लिये भारी पड़ती है यह भी हम सभी को ज्ञात था। अनेकों शिष्य विशेष रूप से शहडोल परिवार कई माह से गुरूजी की देखभाल के लिये आश्रम में आते जाते रहे थे। 13 मार्च को शिष्यगण गुरूजी की लगातार पूरे शरीर की मालिश हल्के हाथ से करते रहे क्योंकि गुरूजी के अंगों में जलन महसूस हो रही थी। रक्त का प्रवाह बना रहे इस कारण भी यह उपक्रम दिन रात चलता रहा।

13–14 मार्च की रात्रि को गुरूजी के पास पलंग के चारों ओर से डॉ. पंधेर, राय साहब, जीवन कुमार जैन, राजेन्द्र कुमार जैन, चन्द्रभूषण शर्मा, जय प्रकाश शुक्ला, ओ.पी. शर्मा, श्रीमती प्राची शर्मा, श्री रामशरण, श्री सुधीर देशमुख, श्रीमती सीमा देशमुख, श्री अशोक धर्माधिकारी, श्री सनत त्रिपाठी एवं श्री संदीप दास, अशोक भैया एवं भाभी जी परिवार सहित यहां मौजूद थे।

शिष्यों को विदित होगा कि प्रत्येक पूर्णिमा अमावस्या गुरूजी के स्वास्थ्य के लिये अच्छी नहीं होती थी। पूर्णिमा पर मुंगेली में विद्यमान सभी शिष्यों में उनके स्वास्थ्य को लेकर विशेष चिन्ता या अन्देशा था। इस वर्ष होली पर पूर्णिमा दो दिन की पड़ रही थी और दिनांक 14–03–1998 को प्रातः 5:30 बजे तक पूर्णिमा थी।

दिनांक 13–03–1998 की शाम से गुरूजी ने यद्यपि बोलना बंद कर दिया था पर उन्हें शारीरिक कष्ट तो था ही। कुछ दिनों पूर्व पेट व पीठ में बहुत अधिक जलन के कारण उपस्थित शिष्यों को नारियल के तेल से मालिश करना पड़ा था।

दिनांक 13–03–1998 को पूज्य गुरूजी की दाढ़ी शिष्यों द्वारा बनाई गई। दिन भर उन्होंने कुछ आहार ग्रहण नहीं किया। उसी तिथि को रात्रि को ऐसा लगने लगा कि गुरूजी को पुनः शरीर में जलन के कारण कष्ट हो सकता है। उल्लेखनीय है कि जनवरी माह से लगातार 4 शिष्य रात में जागकर गुरूजी की सेवा करते थे और उपस्थित अन्य शिष्य एक दूसरे से रात में पाली बदल लिया करते थे।

दिनांक 13 तारीख की रात्रि को लगभग 11:30 बजे जलन के कारण कष्ट होने की संभावना पर डॉ. श्रीमती पन्धेर को उठाकर उनसे

आवश्यक इंजेक्शन लगवाया गया। रात में लगभग सभी मौजूद शिष्य गुरूजी के तलवे, हथेली आदि अंगों पर हल्के हल्के हाथ से मालिश कर रहे थे और सहला रहे थे। इंजेक्शन के प्रभाव से शाम से चल रही श्वास श्रमपूर्वक तथा तेजी से चल रही थी, उसकी रफ्तार कुछ कम हुई। लगभग 2 बजे रात्रि में सभी शिष्य आश्रम में यहां वहां लेट गये और विश्राम करने लगे।

सुबह 5 बजकर 15 मिनिट पर गुरूजी को देखने पर पाया कि उनकी श्वांस बहुत मन्द चल रही है। चिन्तित होकर श्री राय ने आश्रम में मौजूद सभी शिष्यों को पल भर में जगा दिया। अशोक भैया, भाभी, ओ. पी. शर्मा एवं प्राची, डॉ. पन्धेर, श्री राम शरण, श्री जीवन कुमार, श्रीमती सीमा देशमुख, श्री अशोक धर्माधिकारी, श्री राजेन्द्र जैन आदि सभी गुरूजी के पलंग के चारों ओर इकट्ठे हो गये। यह निश्चित है कि पूज्य गुरूजी ने ही अपने शरीर को छोड़ते समय सबको जगा दिया।

प्रातः 5 बजकर 25 मिनिट पर गुरूजी की आंखें पूरी खुली थीं ओर वे ऊपर की ओर निहार रहे थे। श्री राय साहब ने गुरूजी की आंखों को बन्द करने का प्रयास किया क्योंकि उन्हें लगा कि शायद गुरूजी को कष्ट हो रहा होगा। पलकें बंद नहीं हुईं। थोड़े ही समय पश्चात गुरूजी ने चारों ओर देखा और फिर स्वयं पलकें बन्द कर लीं। लगभग यह समय 5.29.30 सुबह का था। गुरूजी के मुख से अत्यंत क्षीण स्वरों में ''ॐ'' शब्द का उच्चारण हुआ और ऐसा स्पष्ट आभास हुआ कि गुरूजी ने स्वेच्छा से अपना शरीर त्याग दिया था। अशोक भैया ने प्रथा के अनुरूप तुलसीदल गुरूजी के मुंह में रखा और गंगाजल भी डाला।

इस महाप्रयाण के कुछ दिन पहले गिरते हुए स्वास्थ्य के कारण गुरूजी की नाड़ी के स्पंदन मिलना बंद हो गये थे। कई घंटों तक ऐसा रहने पर गुरूजी ने डॉक्टरों से कहा था कि नाड़ी नहीं मिल रही है तो क्या हुआ–जब तक मैं बोल रहा हूं–शरीर में प्राण हैं। किन्तु आज ऐसा नहीं था क्योंकि गुरूजी ने तो 2 दिन पहले से ही बोलना बन्द कर दिया था। शिष्यों ने फिर भी डॉ. अग्रवाल को बुलवाया जिन्होंने गुरूजी की महासमाधि की अवस्था से सबको अवगत कराया। सभी उपस्थित शिष्य इस शाश्वत सच्चाई से अवगत होकर अन्तःकरण में व्याप्त अवसाद से मौन होकर गुरूजी के पार्थिव शरीर को नम नेत्रों से बेबस निहारते रह गये।

लगभग 30 घण्टे तक गुरूजी का पार्थिव शरीर सम्मानपूर्वक रखा गया और तमाम स्थानों से शिष्यों के पहुंचने का इंतजार किया गया। सुबह समाचार देने जब निकले तो पता चला कि टेलीफोन की लाईनें खराब हैं। हम सभी निराश थे कि कैसे सूचना दी जावे। बहुत अनुनय विनय करके टेलीफोन मालिक से कहा गया कि एक बार हमें फोन करने का अवसर दें। यह भी एक चमत्कार था कि फोन से एक जगह बात हो गई, उसी जगह से सभी स्थानों पर समाचार पहुंच गया था।

रामशरण और सुधीर देशमुख ने भी फोन करने का प्रयास किया था और उनके दो बार प्रयास करने पर गुरूजी के महानिर्वाण की सूचना दी गई, किन्तु टेलीफोन मालिक इस बात से आश्चर्य में थे कि टेलीफोन लाइन उन्हें खराब ही मिल रही थी।

गुरूजी की दिव्यता का आभास किसी प्रमाण का मोहताज नहीं है फिर भी टेलीफोन के प्रसंग उनकी विराट दिव्यता का ही प्रतीक और

उनके अस्तित्व के प्रमाण हैं। सभी शिष्य आ रहे थे। बर्फ की तीन सिल्लियां मंगाकर रखी गईं थीं पर केवल एक सिल्ली पर गुरूजी को रखा गया जिसकी बर्फ 30 घंटों में लगभग आधा इंच भी नहीं पिघली जबकि सिल्ली लगभग 18 इंच मोटी थी। पूरे समय आश्रम की मुंडेर पर बन्दरों की फौज का पहरा था जो अत्यंत उदास और गमगीन भाव में बैठे इस परमपिता परमेश्वर को निहार रहे थे।

आज बन्दरों की सहज शरारत और चपलता एवं उछलकूद न होकर मात्र उदासी थी और लगता था मन में अपनी पीड़ा का बोझ लिये चुपचाप पूरे समय बैठे हुए अपने आराध्य की पार्थिव देह की सुरक्षा और अपनी हार्दिक संवेदना मूक भाषा में व्यक्त कर रहे थे। वे महाप्रयाण यात्रा प्रारंभ होने तक वहां बने रहे। ये बंदर निश्छल व शांत बैठकर पार्थिव शरीर का दर्शन कर रहे थे। हम जिन्हें वानर समझ रहे थे, उनका वानरों का आचरण नहीं था। पता नहीं, कौन सी दिव्यात्मायें अपनी श्रद्धांजलि देने उपस्थित हुईं थीं। पूज्य गुरूजी को हनुमान जी ने अनेक बार दर्शन दिये हैं–हो सकता है हनुमान जी की फौज ही अपनी भांवांजलि देने आयी हो, गुरूजी ही जानें।

गुरूजी का पार्थिव शरीर उठने के आधा घण्टे में बर्फ की सिल्लियां जिस पर उनका दिव्य शरीर रखा गया था, पिघलकर पानी बन गईं थीं। सभी जगह से शिष्यों के आगमन के बाद सभी ने स्नान किया और उसके बाद ही गुरूजी के पार्थिव शरीर के अंतिम संस्कार के लिये शिवपुर आश्रम के लिये प्रस्थान किया। शिवपुर धाम प्रस्थान के पहले सभी शिष्यों ने मिलकर अंतिम संस्कार की तैयारी की, स्नान कराया, सुगंधित द्रव्य लगाया तथा पूरे शरीर पर चंदन का लेप किया एवं नये वस्त्र पहनाये

गये। ॐ श्री सतगुरवे नमः ॐ श्री वासुदेवाय नमः (सद्गुरू के नाम) का उच्चारण करते हुए प्रस्थान किया। लगभग 500 व्यक्ति इस यात्रा में शामिल हुए।

समस्त शिष्यगण जो इस बीच बिलासपुर, नागपुर, भोपाल, ग्वालियर, वर्धा, रायपुर आदि स्थानों से बड़ी संख्या में आ चुके थे। एक स्वर में ॐ श्री सतगुरूवे नमः, ॐ श्री वासुदेवाय नमः का पाठ निरन्तर कर रहे थे।

पूज्य गुरूजी के दिव्य शरीर को अशोक भैया ने अग्नि नारायण के स्वाधीन किया। सैकड़ों लोगों की भीड़ में भी घोर सन्नाटा, उदासी और अकेलापन वहां छाया हुआ था। छत्तीसगढ़ का मौसम जल्दी गर्म होने से गर्म हवा की लपटें भी चल रहीं थीं। कोई किसी से कुछ नहीं बोल पा रहा था। सब गुरूजी के सान्निध्य में बिताये हुए वर्षों के साथ को और उनके दिव्य प्रेम और आशीष को मन ही मन याद कर उनसे अपनी अपनी प्रार्थनायें कर रहे थे।

यहां एक बात परिवारजन को बताना आवश्यक है। पूज्य गुरूजी ने जो धोती पहनी थी, उस पर ताजे खून का चिन्ह अंत्येष्टि के पूर्व दिखाई पड़ने से परिवारजनों में पुनः दुविधा उत्पन्न हुई कि पूज्य गुरूजी कहीं समाधि में ही तो नहीं हैं। यह बात अशोक भैया को बताने पर एवं उनके द्वारा पुष्टि करने पर ही गुरूजी का हिन्दू सनातन पद्धति से अंतिम संस्कार किया गया।

साधारणतः अंतिम संस्कार के बाद स्नान की प्रथा है। किन्तु इस परम पावन देह का संस्कार हम सभी ने पवित्र स्नान करके ले जाना श्रेयस्कर माना था और गुरूजी की आज्ञानुसार अंतिम क्रिया के समय किसी ने भी मुण्डन नहीं करवाया था। दाह संस्कार तक गुरूजी की पावन

देह कोमल बनी रही और किसी भी तरह का परिवर्तन उसमें नहीं आया था। उनका शरीर दिव्य प्रकाश से दैदीप्यमान हो रहा था, उनके मुखमण्डल पर चिर शांति और प्रसन्नता के भाव थे।

सभी उपस्थित शिष्य विचलित और अपने पर नियंत्रण न कर सके और अश्रु धारा बहाते हुए उनकी पावन देह को पंचतत्व में विलीन करने की प्रक्रिया की थी। विषादपूर्ण अन्तःकरण लिये शिष्य शिवपुर आश्रम से बाहर आ रहे थे और लग रहा था कि हम अनाथ हो गये हैं। रह रहकर हर शिष्य मन ही मन गुरूजी के आशीष वचन, उनका स्नेह, उनकी ममता और वात्सल्य पूर्ण भौतिक अस्तित्व को खो चुका था जिसे शब्दों के आडम्बर में नहीं बांधा जा सकता। उनके चरणों में हम सभी का वन्दन स्वीकार हो।

पूज्य गुरूजी के व्यक्तित्व की आरती के माध्यम से श्री श्रीधर घुसे नागपुर वालों ने हमारे सद्गुरू की दिव्यता और ब्रह्मानंद स्वरूप का जो स्मरण कराया है, उन्हीं ने 14–3–1998 को गुरूजी के शरीर त्यागने पर अपनी भावनाओं को शब्दों के माध्यम से हम तक पहुंचाया था जो इस प्रकार है :–

वासूदेव चल दिया कि सूर्य अस्त हो गया?
कर्म, भक्ति, ज्ञान, योग सकल आज मिट गया।
प्राणी मात्र का दया निधान आज लुप्त हो गया।
साधना निमग्न मनुज विकल व्यथित रह गया।।
जन्म से ही दिव्य थे, विशुद्ध सत्व युक्त थे।।
गृहस्थ हो विरक्त थे, न कर्म से विलिप्त थे।
धर्म पंथ जाति आदि भेद से विमुक्त थे।
अज्ञ, बद्ध जीवकी हि मुक्ति में नियुक्त थे।

समष्टिरूप व्यष्टि थे, शिवस्वरूप जीव थे।
ससीम हो असीम थे, सदेह हो विदेह थे।
मूर्तिमंत ईश्वरत्वकेहि दिव्य धाम थे।
स्मरणमात्रसे हि होत भक्त पूर्णकाम थे।।
कृपा, प्रसाद आदि शब्द अर्थहीन हो गये।
पुत्रतुल्य शिष्य आज मातृहीन बन गये।
कोइ दे सके न सान्त्वना किसे अभी यहाँ।
अथांग शोक–सिन्धु में निमग्न हैं सभी जहाँ।।
होत अस्त सूर्य का न, सूर्य–तेज का कभी।
वही असंख्य दीप–रूप ले विराजता तभी।
गुरूस्वरूप वासुदेव का न अस्त हो गया।
एक बिम्ब आज अमित बिम्ब रूप बन गया।
ब्रह्मलीन वासुदेव! पूर्ण तू स्वयं जहां।
दे तुम्हें अपूर्ण वस्तु कौन कैसी फिर वहाँ?
भक्तिभाव एकमेव जो सदाहि पूर्ण है।
शब्द रूप ले वही समर्पणीय पुष्प है।।
सद्गुरूस्वरूप बन सदैव ध्यान में रहो।
शक्ति रूप ले तथैव शिष्यदेह में रहो।
अखण्ड साधना प्रदीप मार्गदर्शनार्थ हो।
हम स्वयं बने प्रकाश, कामना न अन्य हो।।

इन उद्गारों ने हृदय की गहराईयों को स्थाई रूप से छू लिया है और लगता है कि शायद शब्द भी उनकी विराटता के आगे कम ही रहेंगे।

आज पूज्य गुरूजी सशरीर हमारे बीच नहीं हैं परन्तु आज भी सत्य के इस महान कृपा सिन्धु ने 500 वर्षों तक अपने दिव्य शरीर से हमें संरक्षण दे रखा है और प्रकाश की राह पर चलने का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। उनके द्वारा अनगिनत अवसरों पर आशीष वचनों के द्वारा तथा जीवन के उच्च लक्ष्य की प्राप्ति का जो मार्ग दिखाया है वह अनेकों शिष्यों ने विभिन्न तरीकों से अपने पास सहेजकर रखा है। यथा कैसेट, डायरी, वीडियो फिल्म आदि। साथ ही दिव्याम्बु निमज्जन, कैवल्य एवं उद्बोधन के प्रकाशनों में भी आज उनके दिव्य संदेश हमारे पास सुरक्षित हैं, जिन पर चलकर हम अपने लक्ष्य को पा सकते हैं।

अपने पूरे जीवनकाल में जो कुछ उनकी वाणी से निकला वह सत्य का ही प्रकटीकरण रहा है। इस लम्बे अर्से में जो कुछ उन्होंने हमें दिया उसे संक्षेप में लिपिबद्ध नहीं किया जा सकता, क्योंकि अरिहंत, जो पंच परमेष्ठी की श्रेणी में आते हैं, उन वीतरागी की किस बात को छोड़ा जावे या कैसे संक्षेप रूप दिया जावे यह अत्यंत दुष्कर है। फिर भी हम यहां कुछ आदेशों को विशेष रूप से लिपिबद्ध करने का प्रयास कर रहे हैं ताकि एक ही स्थान पर अधिकाधिक सूत्र पाठकों के लिए प्रस्तुत किये जा सकें।

अंतर्मुख होना– पूज्य गुरूजी के प्रत्येक प्रवचन का पठन–पाठन, मनन और धारण करना चाहिये क्योंकि उनके मुख कमल से निकला प्रत्येक शब्द गूढ़ सिद्धांत एवं मार्गदर्शन है। पूज्य गुरूजी ने अपने दिव्य संदेशों में बार–बार अन्तर्मुख होने की प्रेरणा दी है ताकि जीवन में प्रकाश आ जावे। पूज्यवर ने बताया कि परमात्मा को जानने में प्रमुखता से निम्न बाधायें हैं :–

1. निद्रा का त्याग – अल्पाहार करने से संभव होगा।
2. चंचल मन को – अन्तर्मुखी बनावें।
3. मन को हवाई किला–बनाने से रोकना।
4. कल्पित आनन्द एवं भविष्य की कामना –त्याग कर वर्तमान में जीना।

अन्तर्मुख होने से आत्म साक्षात्कार सुलभ होता है और सभी चाह मिट जाती है और मन निर्विकार हो जाता है।

लोभ हो तो ईश्वर दर्शन का हो।

मोह हो तो ईश्वर का हो।

अहंकार हो तो–ईश्वर या गुरू देव का भक्त हूं, दास हूं, सन्तान हूं।

सम्पूर्ण मन दिये बिना ईश्वर दर्शन नहीं होता। सांसारिकता का ध्यान करने से ईश्वरत्व से दूर होना पड़ता है। जो सदा प्रसन्न रहता हो, संयमी हो, सत्यचित्त, दृढ़ निश्चयी एवं मन बुद्धि को मुझे अर्पण कर दिया हो–ऐसा भक्त मुझे प्रिय है।

जुलाई 1984 में गुरू पर्व के अवसर पर मुंगेली में पूज्य गुरूजी ने हमें सुझाया था कि हम अपने चरित्र में, अपने व्यवहार में जितना लघु हो सकते हैं उतना अच्छा है। अनुकूलता में प्रसन्न होना और प्रतिकूलता में आग बबूला नहीं होना चाहिये। हमें दूसरों के गुण ग्रहण करना चाहिये और दोष त्याग देना चाहिये। हमें जितना अनुभव है उतना ही बोलना चाहिये, उससे अधिक नहीं। अपने घर में आरोप करना छोड़ देना चहिये, इससे हमें शांति मिलेगी। इस जगत में हम ऋणानुबंध यानि ऋण चुकाने आये हैं। यह हमें खुशी खुशी सबका ऋण चुकाना चाहिये और मुक्ति मिलने से खुश होना चाहिये।

आत्मक्रीड़ गुरूजी अपने शिष्य परिवार को अपने अन्तस की गहराईयों से आशीष देते थे ''आप सबको सहृदय, मनपूर्वक, बुद्धिपूर्वक और जीवन में जो कुछ पुण्य से कमाया है, उससे आपको आशीर्वाद देता हूं कि आप सब का कल्याण हो, सबका भला हो, सब आनन्दमय जीवन व्यतीत करें।

सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग भवेत्।

जब हम आयें, जब जब हम लोग मिले कश्चित कोई भी दुःख से आपको हम दुःखी न देखें, ऐसा हमारा आशीर्वाद है। ओम् शांतिः शांतिः शांतिः।'' शब्द विहीन शिष्य परिवार इस महान योगी के चरणों में नतमस्तक होकर गौरवान्वित हो गया है।

नवम्बर 1985 में मुंगेली में गुरूजी ने कहा मैं खोज में हूं सत्य की। इसी शरीर में वह सब प्राप्त होता है। मुझे सब दिखता है। सुनहरे प्रकाश में सब कुछ अभी भी दिख रहा है और यह विज्ञान सिद्ध है। मैंने अपना cerebrum देखा है। लाखों की विशाल मात्रा में neurons हैं जिसे सहस्त्र दल कमल कहते हैं। एक एक कोष देखा है। श्रीनगर में सुनहरे प्रकाश में यह सब देखा और कोई चीज स्प्रिंग जैसी देखी, जिसे डॉ0 शिन्दे ने उन्हें बताया कि वह क्रोमोसोम हैं। इसमें जीन्स हैं। अनुवांशिक गुणों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में ले जाने वाली कोशिकायें, संरचनायें इस शरीर के मस्तिष्क में मौजूद हैं, जिन्हें सुनहरे प्रकाश में अभ्यास की चरम स्थिति पर पहुंचने पर देखा जा सकता है।

अभ्यास करने पर सारे अवयवों पर प्रभाव पड़ता है और हमें सूझबूझ मिलती है। हमारी सोई हुई शक्ति (कुंडलिनी) जाग जाती है अर्थात् ज्ञान की भूखी, अज्ञान के मल से दबी हुई जब वो खड़ी होती है तो अन्धेरा,

अज्ञान सब चाट जाती है और रास्ता बनाकर ऊपर चली जाती है। ज्योतिर्मय पिंड में पहुंच जाती है अपने असली रूप में आ जाती है। ये शरीर ज्योतिर्मय पिंड है, इसमें आकर के शक्ती सर्व व्याप्त हो जाती है।

मानव शरीर जैसा कोई शरीर नहीं है और मानव का जन्म इसी कारण बार बार पृथ्वी पर अपने को जानने के लिये होता है। हम अपने को भूल गये हैं, इसीलिये जब कुण्डलिनी जागृत होती हैं तो अभी तक वासनाओं से दबी दुःखी और चोट खाई हुई होने के कारण सारे मल और वासनाओं को चट कर जाती है। ज्ञान की भूखी उसके द्वारा सारे अज्ञान को दूर करके, स्वयं का ज्ञान प्राप्त होता है, जिसका उपयोग स्वयं पवित्र होकर समाज का दुःख दूर करने के काम आता है। इसीलिये पूरी दृढ़ता से पूज्यवर ने कहा है कि ज्ञान विज्ञान सहित जो जानता है वही आचार्य हो सकता है। वही दीक्षा देने में समर्थ होता है, अन्यथा नहीं। बाकी ये सब कनफूंकियां हैं।

1990 के पूर्व 'कैवल्य' का प्रकाशन हुआ। उसमें पूज्य गुरूजी ने कहा कि देह ही देवालय है। मन्दिर–मस्जिद, गिरिजाघर, गुरूद्वारा केवल देवताओं के ही स्मारक हैं। देह रूपी देवालय में आत्मा ही देव है। आत्मा जो दिखती नहीं, वही निरंजन है। समाज में दुष्टों का संग पहले होता है। सुसंगति तो सन्तों के पास ही प्राप्त हो सकती है। बिना सद्गुरू के हम अपने आपको (आत्मा को) नहीं देख पाते। हम उस परमात्मा को देवताओं में, संतों के प्रवचनों–कीर्तनों में ढूंढते हैं, लेकिन वह केवल कर्तव्य बोध है। यह पुस्तकों और ग्रंथों से ज्ञात नहीं होता है। यह गूढ़ तत्व ढूंढने से नहीं मिलता है। अतः गुरूजी से स्वयं को खोजने की दुर्लभ विधि जो हमें मिलती है वह अन्यत्र हमें नहीं खोजना पड़ेगा। दयानिधि की कृपा से जो,

हमें करूणा सागर ने दी है—अभ्यास के माध्यम से साधक दिव्य सागर में स्नान करता है। यह योग्य सत्पुरूष के मार्गदर्शन से अभ्यास द्वारा ही सम्भव है।

शब्द और किताब जहां समाप्त होते हैं, वहां से आध्यात्म प्रारम्भ होता है। जिस वात्सल्य भाव से करूणा सागर ने हमें यह बहुमूल्य पथ सुलभ कराया है उनके चरणों में हम सभी की चरण वन्दना। गुरूजी के ही शब्दों में हम सभी सौभाग्यशाली और महान हैं और हम उनके अनुरूप बन सकें यह उन्हीं के आशीष से सम्भव होगा।

7 जुलाई 1990 को इन्दौर में गुरू पूर्णिमा पर्व मनाया गया था, जिसमें पूज्यवर ने अपने उद्‌बोधन में आध्यात्म के गूढ़ रहस्यों को तथा सत्‌गुरू क्यों जन्म लेते हैं उसका संक्षिप्त, सटीक व सरल भाषा में इस तरह समझाया था—

धर्म क्या है? प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है।

धारणात्‌ धर्म इत्युच्यते, धर्म शब्द की व्युत्पत्ति धारण से है, यानि धर्म धारणा है, धारणा से कार्य करने के दो विचार उत्पन्न होते हैं :—

1. उपकार एवं 2. अपकार

उपकार में अपना एवं समाज का हित निहित है और अपकार में अपना एवं समाज का अनहित है। पहला कार्य— विचार प्रशंसनीय है एवं दूसरा निंदनीय है। इस धारणा को धर्म का नाम दिया गया है, जैसे मंदिर में जाना, पूजा प्रार्थना इत्यादि। धारणा शब्द सटोरिया भी उपयोग में लाते हैं जैसे बाजार की धारणा, सट्‌टे में भी धारणा शब्द है। केवल धारणा फल नहीं देता, हमें सक्रिय होना पड़ता है, यानि कार्य करना पड़ता है।

उपरोक्त विचारों से कर्म के भी दो प्रकार होते हैं :—

1. इष्ट एवं 2. अनिष्ट

इष्ट कर्म के लिए सरकार का भी अनुरोध होता है और अनिष्ट कार्य के लिये सरकार का विरोध होना निश्चित है। ये विषय धर्म का है। धर्म यानि धारणा—विचार, तद्‌नुसार कर्म की प्रधानता आती है।

कर्म भी दो प्रकार के होते हैं—1. सकाम कर्म, 2. निष्काम कर्म

सकाम कर्म वह है जिसमें फल की अपेक्षा है जैसे पूजा, पाठ, मंदिर, तीर्थ, दर्शन, यात्रा, यज्ञ योगादि सम्मिलित हैं। फल की अपेक्षा रखकर किया गया कर्म ही सकाम कर्म है, जिससे बंधनों से कभी छुटकारा नहीं मिल सकता। निष्काम कर्म इसके विपरीत दोष रहित एवं मुक्तिदायक होता है। नेहाभिक्रमणाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते। स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्‌।। (श्री भगवतगीता 2/40)

भक्तियोग वाले कहते हैं कि हमें तुम्हारे कर्म एवं ज्ञानयोग की आवश्यकता नहीं है परन्तु इन तीनों—ज्ञान, कर्म एवं भक्ति बिना कोई कार्य सिद्ध नहीं हुए।

ज्ञानयोग से कार्य की रचना का विचार रूप लेता है कर्मयोग से कार्य संपादन का अनुमोदन होता है एवं भक्तियोग से कार्य रचना के लिए तैयारी होती है।

ज्ञानयोग बुद्धि प्रधान है, कर्मयोग क्रिया प्रधान है एवं भक्ति योग भावना प्रधान है।

प्रकृति की क्रिया का नाम धर्म है, कार्यों में पांच प्रकार के कारणों का विचार किया जाता है– 1. वैयक्तिक, 2. कौटुम्बिक, 3. सामाजिक, 4. राजनैतिक एवं 5. धार्मिक, जिससे मनुष्य अपने एवं सामाजिक हित के लिए सक्रिय होता है।

''सत् रजस, तमस संभवः प्रकृति''

सत् यानि लाभदायक विचार होता है। रजस से ACTIVITY यानि MOVEMENT या सक्रियता निहित है। तमस से विनाशकारी क्रिया सूचित है।

इस तरह मनुष्य जीवन भर उक्त तीन प्रकार के कर्म करके आयु से विदा लेता है, यही सकाम कर्म का फल है, अंत समय में उसे पश्चाताप होता है। यही बंधन है एवं जन्म का कारण है। निष्काम कर्म–सत् रजस् तमस् साम्यावस्थाः प्रकृति'' सत्पुरूष, (सद्गुरू) के सानिध्य में आकर या सद्गुरू द्वारा मार्गदर्शन प्राप्त कर आत्मानुसंधान (आत्म साक्षात्कार) के लिए जो कर्म किया जाता है, वही निष्काम कर्म कहा जाता है।

जिस निष्काम कर्म के धर्म रूप प्रभाव से यह त्रिगुणमयी (सत्, रजस, तमस) बुद्धि सतत (निरंतर) अभ्यास द्वारा जब साम्यावस्था को प्राप्त होती है (यानि गुणलीनता होती है) तब बुद्धि की सारी वृत्तियां क्षीण हो जाती है और मणीवत अपने आप प्रकाशित हो जाती है। ऐसी बुद्धि जब विशुद्ध हो जाती है तब निष्काम कर्म के प्रभाव से आत्मा स्वच्छ जल में जैसे चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब अपने आप प्रगट होता है उसी तरह शुद्ध बुद्धि में आत्मा अपने आप स्वयं ज्योति के रूप में प्रकट करती है। एक बार भी जरा भी प्रकाश आ जाये तब मानव (साधक) जन्म मरण के भय से

छुटकारा पा लेता है।

आत्मानुसंधान का यह अभिक्रम (क्रिया) है उसका कभी नाश नहीं होता–और उल्टा उसका फल दोष भी नहीं होता है।

निकल जा अक्ल से आगे, ऐ नूर,

चिराग ए रहगुजर है, मंजिल नहीं।

हर सहारा बेअमल के वास्ते बेकार है।

आंख ही खोले, न कोई, तो उजाला क्या करे।

गुणलीनता के पश्चात आती है आत्मस्थिति–यही है आत्म साक्षात्कार।

हमारी आदत है–कुछ बना नहीं तो दूसरे को दोष देना। बना तो मैंने किया, न बना तो दूसरे को दोष। हम अपनी कभी सोचते नहीं।

कृष्ण जैसे दैवीयशक्ति जन्मती नहीं–प्रकट होतीं हैं, बार बार मनुष्य जाति को सही मार्ग बताने के लिये। इसी तरह सद्गुरू भी मानव को सही व योग्य मार्ग बताते हैं। सद्गुरू बिना मुक्ति नहीं।

गुरू पर्व 23 जुलाई 1990 को रायपुर में मनाया गया था जहां हमारे सद्गुरू ने हमें बड़ी सरल ओर संक्षिप्त भाषा में हमें इस जीवन के **अंतिम लक्ष्य** को पाने के लिये कहा था कि –

आपको केवल अपने चित्त को, अपने मन को, एक देश में बांधना है और जैसा, दीक्षा में बताया गया, वो ध्यान में लाना है। वो धारणा है–मन को लगा देना है। पकड़ा देना है। बस केवल पकड़कर रखना है दोनों भोहों के बीच ललाट में, दूसरी

कोई बात नहीं। फिर बुद्धि से अन्दर देखिये कि मन पकड़कर रखता है, या नहीं और तटस्थ हो जावो। ये आदेश हैं–आदेश माने इसका पालन हो। है कि नहीं? होता है कि नहीं? ये नहीं चाहिये–बस wait and see होने दो, जो होना है। ये भव है। ये कुरू नहीं है। भव माने अपने आप होना है, ये happening है। कुरू माने करना। यहां करना केवल इतना है कि जो रास्ता बताया गया है–ऐसा–ऐसा बैठना, ऐसा ऐसा ध्यान में लाना है और बस चुप हो जाओ। जैसा बताया है वैसा खाली बैठना है चुपचाप। अपने आप होने दो, जो होना है। आगे कहा कि हमारी आत्मा तम, रज, सत सबसे परे है व उसका आदित्य का सा वर्ण है। तो आदेश है कि ये लक्ष्य में लाना है। ये गोला ध्यान में बना रहे। ये अभ्यास करके प्राप्त कर लेना है। निरन्तर अभ्यास होना चाहिये और आप विषयातीत, इन्द्रियातीत होकर निर्मल, निर्विषय हो जायेंगे। आपका कल्याण होगा। आप मल रहित हो जायेंगे।

जीवन का लक्ष्य पाने के लिये हमें दयानिधि ने कितनी सरलता से यह रहस्य उपलब्ध कराया है, जिसका कई जन्म लेकर भी और अनेकों तरह की साधना, व्रत, पूजा, तीर्थों, धामों, मन्दिरों में जाने के बाद भी, मिलना दुष्कर होता है।

परम पूज्य गुरूजी ने एक बहुत बड़ा सत्य जो हम सभी जानते हैं और अनुभव करते हैं उसको बड़ी दृढ़ता से कहा है कि ''आत्मोत्थान के लिये जो प्रक्रिया चाहिये वो गुरूकृपा से आपको मिली है और उसे पाने के बाद जिस तरह सभी कार्य आप इस संसार में करते हैं उसी प्रकार अपने लिये भी कुछ करिये। आप सिर्फ औरों के लिये कार्य करते हैं। सब लोग आपसे कार्य लेते हैं–समाज वाले, राष्ट्र वाले, धर्म वाले, घर वाले। सब कहते हैं कि हमारा करो, करो और अन्त में कह देते हैं कि मेरे लिये क्या किया? कोई ये नहीं कहता कि तुम्हारा कुछ काम हो तो हम सहायता करें। तात्पर्य यह है कि हमें अपनी सहायता स्वयं करनी चाहिये।

दीक्षा से, अभ्यास से अकार, उकार, मकार जिसको ओम कहते हैं, जो ध्वनि का नाम है–इन तीनों पर संयम हो जाने से फिर अनुस्वार बन जाता है और सीटी जैसे बजती है तब वह तूर्यावस्था में बिन्दु बनता है। इसलिये जो (Goal) लक्ष्य बताया आपको आज्ञा चक्र उस स्थान पर पहुंचकर इन तीनों पर बिना जाने, बिना समझे, अनजाने में संयम करके तीनों का लंघन कर जाने पर आप अपने आप में महान हो जायेंगे।

आध्यात्म के गुढ़ रहस्यों का प्रकटी करण परम पूज्य की महान उदारता है और करूणा का प्रमाण है। उन्हीं के शब्दों में ''मैं शिष्य नहीं बनाता–जिसको चेला कहते हैं। अनुयायी नहीं बनाते, हम अपने जैसा उसको तैयार करते हैं। सब बने हुए हैं तो बनाना क्या होता है। हम अपने जैसा उनको तैयार करते हैं।'' साधना की क्षीणता को तीव्रता में बदलकर आगे बढ़ाना जिससे अष्टसिद्धि, नौ निधि ये सब उसको प्राप्त होता है और आगे बढ़ने का मार्ग गुरू कृपा से मिलता जाता है।

23 जुलाई 1991 को वर्धा में गुरू पर्व पर कहा था कि आत्मशक्ति ही दिव्य शक्ति है। मनुष्य परावलम्बी प्राणी नहीं है। वह स्वयं अपना चरित्र और भाग्य बना सकता है। Man is not a helpless creature, man can make his character and destiny. Therefore he is responsible for his own acts, आत्मज्ञान का सदुपयोग करके हम माता पिता के ऋण से, पुण्य–पाप, स्वर्ग–नरक से तथा जन्म–मरण के फेरे से मुक्ति पा सकते हैं और मात्र इसीलिये मानव जन्म प्राप्त होता है।

सिद्धावस्था एक दिन में नहीं मिलती–जब तक एक भी संस्कार बाकी है–जन्म लेना पड़ता है भोगने के लिये। बुद्धि जब शुद्ध होकर प्रकृति में लीन हो जाती है, प्रकृति जब शुद्ध होकर पुरूष में लीन हो जाती है, तब उसकी शक्ति अलौकिक हो जाती है। आत्मा ज्योतिर्मय हो जाती है फिर जन्म नहीं होता। बाहर की प्रगति सब insignificant है। अपने आपको पढ़ो जब तक प्रकाश न मिले। उसकी खोज करो जिसके लिये मानव शरीर मिला है।

1993 में दशहरा पर्व पर रायपुर में अपने प्रवचन में आचरण में लाने योग्य षट–सम्पत्ति को बड़ी सरल भाषा में समझाते हुए कहा था कि–

1. शम–माने शांति। कभी गरम नहीं होना, कोई कितना भी बोले, गाली दे, अपमान करे पर अपनी शांति को धक्का नहीं आने देना चाहिये।
2. दम–इन्द्रिय निग्रह। अपनी जीभ अपना मन, अपनी बुद्धि ये सब अपने काबू में होना चाहिये। एक जून खाना मिले तो भी मांगने नहीं जाना।
3. उपरति–ना कोई अपना–ना कोई पराया। कुछ दिन के लिये हम इस बाजार में आये हैं यहां उऋण होने के लिये आये हैं।

4. तितीक्षा– सहनशक्ति, कैसी भी आपत्ति विपत्ति संकट आ जाये–धैर्य नहीं छोड़ना, यदि यह नहीं आयेगी तो सहनशक्ति बढ़ेगी कैसे।
5. समाधान– अपनी जीविका के लिये जो कुछ करते हैं, उसी में संतोष करना। संतोष से बढ़कर कोई उत्तम सुख नहीं है। जहां संतोष है, वहां सब प्रकार की ऋद्धि–सिद्धि पानी भरती हैं।
6. श्रद्धा यानि सत को कभी नहीं छोड़ना चाहिये। सत् जिसमें है वो, सत पुरूष है आप सभी उस सत की पूजा करते हैं। इस महान सत्य के पुजारी ने कहा कि मां बाप ने इस शरीर का नाम वासुदेव रखा। लेकिन इस नाम में भी बड़ा रहस्य है। ''जगत् अस्मिन वासः चासौ देव वासुदेवः''–सारा जगत जिस सत्ता के अन्तर्गत है वो वासुदेव है। उस सत् को ही वासुदेव कहा गया है।

वासनाद् वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम्।
सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोऽस्तु ते।।

गुरूदेव ने अंत में अपना **विलक्षण आशीष** देते हुए कहा था कि अच्छा, आनन्द हो, मंगल हो, कल्याण हो, सबका भण्डार भरपूर हो, जीवन सफल हो, षट सम्पत्ति युक्त हो, तुम्हें आत्म बल मिले, बाहुबल मिले, राज बल मिले, धन बल मिले, सब प्रकार का बल प्राप्त हो। दसों दिशा अनुकूल रहें, आनन्द मंगल हो, कल्याण हो। पुरूष हो, स्त्री हों, बालक हों, बालिकायें हों, मेरी आशीष सबके लिये समान हैं।

सर्वेऽपि सुखिनः संतु सर्वे संतु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत्।।

आनन्द हो आनन्द हो आनन्द हो

ओऽऽम तमसो मा ज्योतिर्गमय
असतो मा सद्गमय , मृत्योर्मा अमृतम् गमय

ओऽऽम्

1994 में रायपुर गुरू पूजा के समय गुरूजी ने हमारे सुख दुख का कारण अहंकार बताया था। नरक से बचने के लिये अपने आपको जानना जरूरी है और इसी कारण अभ्यास करने का लक्ष्य बनाना होगा। शांति बाह्य जगत में नहीं है। श्रद्धा विश्वास को अपने आप में जागृत करके, सद्गुरू कृपा से ही, आंतरिक प्रवेश हो सकता है और तभी सच्ची शांति प्राप्त होकर जन्म मरण के बंधन से मुक्ति हो सकती है। मानव जन्म कोई साधारण जन्म नहीं है। सब कुछ हमारी इच्छा शक्ति पर निर्भर है कि हम तमाम आरोपों–प्रत्यारोपों से बचकर सद्गुरू के बताये मार्ग पर चलकर अभ्यास द्वारा अपना जीवन सफल कर लें। इस मार्ग दर्शन के लिये सत्पुरूष आवश्यक है।

सद्गुरू नाम लेने से कैसी भी विषम स्थिति हो, सब दूर हो जाती है। नाम लेने मात्र से शिष्य की घुटन दूर हो जाती है, विघ्न दूर हो जाते हैं। गुरूजी ने मानव शरीर और सद्गुरू के साथ को स्वर्णसंधि कहा है जिससे तमोगुण को रजोगुण में करके, रजोगुण को सतो गुण में ला करके और तीनों पर संयम करके महाकारण में आते हैं, जिसका नाम तूर्यावस्था है। इस स्थिति में सब प्रकार का बोध होता है। वहां भी संकट, विपत्ति आती है जो सद्गुरू को याद करने से सब दूर हो जाती है।

गुरू पूजा 1995 वर्धा में पूज्य गुरूजी ने कहा था कि सत्पुरूष/सद्गुरू का सान्निध्य अगर नहीं है तो अपने आपको जानना बहुत मुश्किल है और ईश्वर को जानना तो बहुत ही कठिन है। सत और असत की सही जानकारी अनिवार्य है।

दूसरी बात कोई कुछ भी बोले, जैसा भी बोले, जवाब देना नहीं। क्यों? क्या? कैसे? ये कोर्ट का काम है, अपना काम नहीं है। अपना काम है सहन करना, सहिष्णुता। उल्टा उसका हित शरीर मन और वाणी से पहुंचाये। आपको पता नहीं, क्यों बोल रहा है–शायद परीक्षा हो।

हमारे अनेक जन्म भोगने के लिये हुए हैं, ये भी हमारा हो जाये, वो भी हमारा हो जाये, जिसको लोभ मोह कहते हैं, ये नरक के द्वार हैं यानि दुख पाने के द्वार हैं। आत्मानन्द पाने के लिये सहजावस्था में रहिये। जो आपको आपके गुरूजी ने दिया है, पाया है, उसमें साक्षी भाव से मन को लगा दीजिये। मन को काबू करने का यही एकमात्र उपाय है। इसी कारण सद्गुरू के बिना ईश्वर प्राप्ति असम्भव कही गई है।

कोई कितना ही बोले, गाली दे, अपमान करे, कुछ भी करे, कभी गरम नहीं होना। अपनी जो शांति है, उसमें धक्का नहीं आने देना। हम कुछ दिन के लिये इस बाजार में आये हैं। उऋण होने के लिये आये हैं। ऋण बढ़ाने के लिये नहीं। हमारी भावना होनी चाहिये कि न कोई अपना है न कोई पराया है, न कोई ऊँच है, न कोई नीच है, न कोई छोटा है और न कोई बड़ा है। जहां संतोष है, वहां सब प्रकार की ऋद्धि–सिद्धि पानी भरती हैं, जो कुछ मिलता है बस उतना ही अपना है, उसी में मगन रहना है। आंख उठाकर दूसरे का धन नहीं देखना है।

सद्गुरू के पास बैठकर या उनके आदेशानुसार अभ्यास करने से हम प्रकाशमार्ग पर पहुंच जायेंगे। गुरू के बताये अनुसार साधना से हमने भीतर की यानि आत्मा की ओर जाकर ज्योति दर्शन पा लिये, तो यह धन

कभी घटेगा नहीं। निरंतर बढ़ते हुए आपका कल्याण करेगा। अल्प से अल्प भी अगर आपको इसका दर्शन होता रहे तो जन्म मरण के भय से आपको मुक्त कर देगा।

गुरूजी ने कहा है–''दिया अवश्य जलाना चाहिये, भले ही और आगे न बढ़े, समाधि में न जाये, पर इतना तो करना ही चाहिये। संकल्प हो गया है अब अपने घर जाओ, देवधर में दिया जलाओ। अपना जो शरीर है यह देवधर है, ये देवालय है। ये देव इसी के अन्दर है और देव ही तो बोल रहा है, आदेश हो रहा है। अभ्यास के द्वारा दिया जलायें जिसकी कोई उपमा नहीं है।

शरीर को स्वर्णमय कहा गया क्योंकि इसके अन्दर सुषुम्ना है अन्यथा यह शरीर तो कचरा घर है जो किसी काम का नहीं है। हमारे अंधकार को मिटाकर जो हमें प्रकाश में ला दे, ज्ञान करा दे, बोध करा दे, आत्म बोध करा दे, उसको सत्गुरू कहते हैं। एक सत् के सिवाय और कुछ नहीं है। ये भी सार है। आत्मा ही सार है। तत् सत् उसी का नाम ''ॐ'' है।

अभ्यास के माध्यम से आप दिव्य सागर में स्नान करेंगे और यह सतगुरू के मार्गदर्शन से ही सम्भव होता है। ऐसा करने से आप ज्योति दर्शन करेंगे। ऐसी स्वयं को खोजने की विधि आपको दी जा रही है, जो अन्यत्र खोजने से नहीं मिलेगी। आप सब बड़े पुण्यात्मा हैं। अच्छे मार्ग में आईये, हम आपके पास खोजते खोजते इसलिये आये हैं।

गुरूपूजा 1996 शहडोल– परमपूज्य गुरूजी ने अपने शिष्य परिवार को अनेकों तरह से सम्बोधन करके पथ प्रदर्शन किया है। जिस तरह मुठ्ठी में वायु को बांधना कठिन है, ऐसे ही मन, बिना कृपा के, बिना सत्पुरूष के, वश में नहीं आता। यह मन लाखों प्रकार के कार्य करता है। आप जिसे मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारे में ढूंढने जा रहे हैं, वह आप में है। न वो मस्जिद में है, न देवालय में है।

आत्मशक्ति को, कुण्डलिनी शक्ति को जानने के लिये जो उपाय हैं, वो आपको मालूम होना चाहिये। ये मालूम होनेपर दूसरा कुछ जानना शेष नहीं रह जाता। सत्पुरूष मिलने पर यह सब तभी मिलता है जब उसके बताये रास्ते पर आप चलकर उस divine energy को पा लेते हैं।

सत्पुरुष आपकी तीसरी आंख खोलने में सक्षम है और इसके लिये जो कार्य आप करते हैं वही निष्काम कर्म है। यही आत्म साक्षात्कार के लिये आप करते हैं। अब कोई दूसरा कार्य करने की आवश्यकता नहीं है। फिर न कोई देवी, न देवता और न ही कोई महाशक्ति चाहिये। अभ्यास करके आप इस परमोत्कर्ष को अपने में ही पा लेंगे। आपको मात्र अपना अहंकार तज कर काम, क्रोध, मोह को तजकर सतगुरू, के बताये गये रास्ते पर अभ्यास करने से जीवन लक्ष्य मिल जायेगा।

गुरूपर्व 1997 भोपाल में–अपने अंतिम प्रवचन में गुरूजी ने कहा कि ईश्वर तक पहुंचने का मार्ग ही धर्म है। अखण्ड गति पा लेना ही ज्ञाता धर्म है। इसे पाने के लिये चंचल मन पर नियंत्रण आवश्यक है। जैसे वायु अर्थात् पवन को मुठ्ठी में बांधना कठिन है, उसी तरह यह चंचल मन

बिना गुरू कृपा के नियंत्रण में नहीं आता। सत्पुरूष मिलने पर आपको सब कुछ मिल जाता है। जिसे खोजने हम देवालय जाते हैं, वह शक्ति कहीं और नहीं आप में, अपने में ही है, किन्तु आंखें होते हुए भी बिना सतपुरूष के, उस महान आत्मशक्ति को, कुण्डलिनी शक्ति को, जो परब्रह्म स्वरूपिणी है, उसे जगाने के लिये उन आंखों को खोलना सम्भव नहीं होता। गुरूजी ने बताया कि दूसरों के हित में ही अपना हित है अतः दूसरों को हित पहुंचाना चाहिये। क्या छोड़ देने से अन्य कुछ छोड़ना शेष न रहे, यही त्याग है।

गुरूजी ने सत्यवादी होने की बड़ी सरल व्याख्या करते हुए बताया कि अनुभव के बिना एक शब्द भी न बोलें अर्थात् वही सत्य है जिसकी आपने अनुभूति की है। स्व का अनुभव ही परमसत्य है। इस महान अविस्मरणीय पर्व पर आगे बताया कि आत्मसाक्षात्कार के लिये किये गये कर्म ही निष्काम कर्म हैं और इसके बाद अन्य कोई कर्म करने की आवश्यकता नहीं है। आत्मसाक्षात्कार वह दिव्य शक्ति है जो दीप शिखा को मणिवत करके बुद्धि कांच की तरह कर देती है। साधक को साधना में लक्ष्य प्राप्ति हेतु यह भी बताया कि औरों के दोषों को देखने की बजाय स्वयं के दोषों का ही प्रक्षालन करना श्रेयस्कर होगा। आपको अपने से दूर रखने में सबसे बड़ा आवरण आपका अपना अहंकार है जिसे तजे बिना अन्तर्जगत की यात्रा सम्भव नहीं होगी।

अपना आशीष देते हुए गुरूजी ने कहा—

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्ध श्रवाः

स्वस्ति नः पूषा विश्वेदाः।

स्वस्ति न स्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः

स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।

ये सब आपकी रक्षा करें—

ॐ द्यौ शान्तिः अन्तरिक्षं शान्तिः

पृथ्वी शान्तिः आपः शान्तिः

औषधय शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः

विश्वेदेवाः शान्तिः शान्तिः ब्रह्म शान्तिः

सर्वम् शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः

सामा शान्तिः रेधिः

मंगलं भगवान विष्णुर्मगलं गरूड़ध्वजः
मंगलं च पुण्डरीकाक्ष मंगलायतनो हरिः।।

साधकों के साधना पथ पर आने वाले हर मानवीय दुविधा को पूज्य गुरूजी ने निकट से देखा, समझा और विचलित हुए बिना उन कमजोरियों को दूर करने की राह पर साधक को संतुलन बनाये रखने की शिक्षा दी। इसे आत्मसात करने पर हम उन ऊंचाईयों तक पहुंचने की राह आसान कर सकते हैं, जिनके लिए गुरूजी ने हृदय की गहराईयों से अपने ''परिवार'' को अपने अनमोल आशीष से अनुग्रहीत किया। इस संदर्भ में निम्न महत्वपूर्ण और आत्मसात करने योग्य आदेशों को गुरू दक्षिणा के रूप में अपनाना आवश्यक है:–

1. किसी भी कार्य में रूकावट या विलम्ब या हानि होने पर क्रोध आता है। रूकावटें या विलम्ब जिसने किया वह आपका साहूकार है और आपका जन्म ऋण चुकाने के लिये हुआ है तो इसे हंसकर चुकायें, उस पर गुस्सा करके नहीं। यह समझ लेना चाहिये कि मनुष्य जन्म ऋण चुकाने के लिये ही हुआ है।
2. आत्मा रूपी सूर्य जब प्रकट होता है तो उसके प्रभाव से नाना जन्मों में वासना के द्वारा किये गये कर्मों, जिन्हें हम भोगते आ रहे हैं उनका अंधकार मिट जाता है। अपने संकल्प मात्र से सब कार्य होते रहते हैं और सुख दुख की श्रृंखला से छुटकारा हो जाता है।
3. सतपुरूष के सान्निध्य में रहकर या उनके आदेशों का पालन कर 5–10 मिनिट का नियमित ध्यान आपको शांति की राह पर अग्रसर कर देता है।

4. भोग और आयु का निकट का संबंध है। दान पुण्य करने से भोग नहीं जाते। दान पुण्य भी भोग है। यह ऋण चुकाने का ही उपक्रम है। आप इन ऋणों को सहज चुकाये, चाहें खीज़ कर, चाहे हँसकर। आयु, देह और ऋण की अवधि समाप्त होने पर जीवन यात्रा भी समाप्त हो जाती है।
5. जन्म का कारण मात्र ऋण चुकाने के लिये नहीं अपितु आत्मदेव को प्रसन्न करने के लिये भी उस देव को, जो अपने में स्थित है, अपने में स्थिर है, प्रातः उठकर उसका स्मरण करना चाहिये। अपने आपको जानना ही आत्मदेव तक पहुंचना है जिसका मार्ग अभ्यास से शुरू होता है।
6. इस आत्मदेव से बढ़कर कोई देव नहीं हैं। बाकी जो देव हैं, सब स्मारक हैं। कारक ये है जो हमारे भीतर है और सूर्य की तरह प्रकाशित है। अनंत सूर्यों का सूर्य ही तुम्हारा बल है, आधार है और वही सत्ता है और वही सत् है।
7. अपने कर्तव्य को हंसकर करना ही व्यवहार है। ऋण चुकाने का यही सही तरीका है और वेदांत वह पहलू है कि हमें अपने को नहीं भूलना है–अपने को जानना है और आत्मा–रूपी सूर्य का दर्शन करना है। ऐसा करने से शांति मिलेगी, यह पूज्यवर का आशीष है।
8. सद्गुरू को सम्पूर्ण समर्पण कर देने से सुख दुख, आना जाना, सबसे आप मुक्त हो जायेंगे। समर्पण के बाद जो कुछ है सब 'तेरा' है। वहां 'मेरा' कुछ भी बचता नहीं है और इस 'तेरा' में बड़ा रहस्य है–''मैं तो खाली हूं, तू जाने, तेरा कारोबार जाने, मैं नहीं जानता।''

9. गुरूजी की बताई पद्धति से अभ्यास में बैठने पर जितने भोग है, कब आते हैं, कब चले जाते हैं, पता नहीं चलता। इसलिये प्रतिनिधि होकर आत्म साक्षात्कार के लिये लग जाना चाहिये।

10. अनेक जन्मों के पुण्य उदय से यह सत्संग आपको मिला है, जिसका लाभ उठा लें।

11. हमको कम मिला, उसको ज्यादा–ये छोड़कर अपने अपने भोगों और अपनी–अपनी करनी में रहना समर्पण है।

12. दुष्ट से दूरी और संत से सामीप्य, यह व्यवहार कुशलता सद्गुरू कृपा से आपको मिल जाती है।

13. मन वचन कर्म से किसी को आघात न हो, इस बात को ध्यान में रखकर जो कर्म किया जाता है वह कर्म मुक्ति प्रदान करता है।

14. आत्म ज्ञान हो जाने से सांसारिक कार्य और उनसे संबंधित चिन्तायें दूर हो जाती हैं।

15. सद्गुरू के ऊपर सब कुछ छोड़कर अपने अहं (कर्ताभाव) को भूलकर, चिन्ता मुक्त हो, भयभीत होने की अपेक्षा निर्भय बन जावें।

16. नारी या पुरूष सभी में एक ही आत्मा है–एक ही ज्योति है ऐसा देखना ही सम्यक् है, तभी आप समदर्शी कहलायेंगे।

17. साधक के मार्ग में द्वेष, घृणा, शोक, भय, लज्जा, निन्दा, स्तुति और अज्ञान बाधक है। इनसे दूर रहना चाहिये।

18. सद्गुरू कभी धन को लेता नहीं, वह केवल मन को लेता है। यह सब सद्गुरू का है, यही विलक्षण भाव हमें मुक्त कर देता है।

19. शाश्वत ज्ञान को प्राप्त करने के बाद कोई अन्य ज्ञान प्राप्त करना शेष न रह जाये, यही वेद है।

20. सद्गुरू का ध्यान करिये ताकि सद्शक्ति का आप में विकास हो, सत्य की प्राप्ति हो।

21. जो सुना गया, देखा गया, किया गया, वही सत्य है। उसे पाने की दिशा की ओर ही तुम्हारे कदम बढ़े–सबका कल्याण हो–मंगल हो–शुभ हो।

22. संत लोगों का, निर्वाण के बाद 500 वर्ष तक, दिव्यरूप में अस्तित्व रहता है।

23. संत चलते–फिरते तीर्थ हैं, संतों का आश्रय ही तीर्थ स्थान है।

24. मन चंचल है और बुद्धि पर भी काबू न हो तो मन के वश होकर बुद्धि आपको विषयों में लगा देगी। गुरू कृपा से और उनके बताये मार्ग पर चलने से मन और बुद्धि आत्मा की ओर उन्मुख होती है। बुद्धि ज्यों ज्यों सात्विक होती जायेगी, वह आत्मा की ओर उन्मुख होती जायेगी। इस अवस्था में मन बुद्धि के पीछे चलने को विवश हो जाता है। आत्मा के सम्पर्क में आने से मन की मलिनता दूर होकर वह भी आत्मा में रमने लगता है। निर्मल मन में दर्पण की भांति शुद्ध स्वरूप का दर्शन होने लगेगा और बुद्धि आत्मबुद्धि होकर तीक्ष्ण होती जायेगी और आप सर्वज्ञ होते जायेंगे।

परमपूज्य गुरूजी अपने आशीष में हमेशा कहते थे—''सम्बन्ध बना रहे'' इसका अवश्य गूढ़ अर्थ था। गुरू शिष्य का नाता सदैव जाग्रत रहे, इसके लिये गुरूजी शिष्यों को पत्र लिखने की प्रेरणा देते थे और हर पत्र का उत्तर भी पूज्य गुरूवर ने हमेशा अपने शिष्यों को मंगल कामनाओं और आशीष देते हुए, दिया है।

दुर्ग स्थित अपना निवास, समाज व भावी शिष्यों के कल्याण के लिये पूज्य गुरूदेव ने छोड़ दिया था और गुरूजी विभिन्न स्थानों का परिचितों या शिष्यों के आमंत्रण पर भ्रमण करते थे। उस समय, गुरूजी कहाँ हैं? यह शिष्यगण एकदूसरे से पूछकर ही पता कर सकते थे। यह बात वर्ष सन 1972 से 1980 की है। गुरूजी कहाँ हैं, यह पता लगाना अपने आपसे कठिन कार्य था। 1990 के बाद गुरूजी के किसी स्थान पर प्रवास की अवधि भी थोड़ी बढने लगी और तब से अन्य शिष्यों के साथ पत्रों का सिलसिला प्रारंभ हुआ जो सन् 1997 तक चलता रहा।

आंखों में तकलीफ होने के कारण और हाथों में अर्थराइटिस की वजह से 1980 के बाद से गुरूजी के पत्र अन्य व्यक्तियों के द्वारा गुरूजी के कहे अनुसार, लिखे जाते थे और गुरूजी अन्त में अपने हस्ताक्षर स्वयं करते थे। हमें उपलब्ध पत्रों में सबसे पुराना पत्र रीवा में डॉ. शिन्दे के रहते हुए पूज्य गुरूजी ने श्रीमती शीला पांडे को वर्धा के पते पर भेजा था।

सम्भवतः तेल्हारा में दवा खाना चलाते समय या दुर्ग में संगीत विद्यालय का संचालन करते समय गुरूजी ने अपने नाम की अंग्रेजी में सील बनाई थी (W.R. Tiwari) और कुछ पत्रों में लेटर हेड के रूप में इस सील का उपयोग भी किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि मराठी में प्राप्त

होनेवाले पत्रों का उत्तर गुरूजी मराठी में और हिन्दी के पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया करते थे।

जिसे पत्र लिखा जाना था, उसकी स्थिति के अनुसार, उसे सम्बोधित करते थे। पुरूषों को चि. प्रिय (चिरंजीव) लिखकर आगे नाम लिखा जाता था। विवाहित महिलाओं के लिये प्रिय चि. सौ. (सौभाग्यवती) एवं अविवाहित लड़कियों के लिये प्रिय चि. सौ. कां. (सौभाग्य कांक्षिणी) लिखते थे। सम्बोधन के बाद अनिवार्य रूप से अत्र कुशलं च तत्रास्तु तथा स्नेहिल आशीष और पत्र में अंत में शुभम् भवतु के बाद तुम्हारा पूज्य गुरूजी वासुदेव नाम से हस्ताक्षर करते थे।

कभी परिस्थिति आवश्यक हो या ऐसा लगता हो कि पत्र विलम्ब से पहुंचेगा तब निर्देश देने के लिये गुरूजी तार भी भिजवाया करते थे। मुख्यतः पत्रों में प्रवास कार्यक्रम या किसी स्थान पर पहुंचने और गुरूजी के स्वास्थ्य का जिक्र होता था। किसी कार्य से संबंधित निर्देश का उल्लेख भी पत्रों में मिलता है। जब गुरूजी के लिये कार खरीदी जा रही थी तब वह इस माह में खरीदी जाये इसका विशेष उल्लेख भी श्री जे. के. जैन को लिखे पत्रों में मिलता है। इसी प्रकार कहीं जाने का कार्यक्रम हो तो उसकी रूपरेखा समय रहते बनाकर कहां पहुंचना है, कितने दिन रहना है, आदि तिथिवार पत्र में लिखवाते थे जिससे परिवारजन को उनका कार्यक्रम समय रहते ज्ञात हो जावे।

जैसा कि एक अलग अध्याय में उल्लेख किया गया है, गुरूजी ने जब से कार से यात्रा करना प्रारंभ किया, अपनी कार श्री जे. के. जैन से ही चलवाना पसंद करते थे इसीलिये बड़ी संख्या में श्री जे. के. जैन को पत्र लिखे गये थे।

यदि कोई परिवानजन बीमार हो तो दवाईयों का उल्लेख भी पत्रों में मिलता है। परिवारजनों के बच्चों की आगामी शिक्षा तथा कैरियर को लेकर भी गुरूजी, मांगे जाने पर अपनी सलाह अवश्य देते थे। जब जब परिवारजनों ने अपने व्यवसाय को लेकर समस्या बताई तो गुरूजी ने इस संबंध में दिशा निर्देश तुरंत दिये। पत्रों में, पत्र पाने वालों के परिवार के प्रत्येक सदस्य को नाम से याद करना और आशीष देना कभी नहीं भूलते थे। लगभग प्रत्येक पत्र में **''इत्यलम्''** का भी प्रयोग किया गया है।

वर्ष 90 के आसपास दूरभाष उपयोग काफी सुलभ हो जाने से गुरूजी दूरभाष पर भी शिष्यों से चर्चा करने लगे थे। गुरूजी के पत्रों में जीवन जीने के लिये अमूल्य सलाह होती थी। उदाहरणार्थः–**''जीवन में संघर्ष चलता ही है। अपने पथ पर डटे रहो, सब ठीक होगा। आपत्ति काल में ही सब की पहचान होती है। और जो विषय है आप इसे जमा करते जाईये, उधर से ध्यान हटाकर अपने काम में लक्ष्य दीजियेगा, जो कुछ होता है अच्छे के लिये होता है।''** गुरूजी का शरीर अब भले ही विद्यमान न हो पर उनके लिखे पत्र हर शिष्य के पास अमोल धरोहर के रूप में सुरक्षित हैं।

इस संदर्भ में पूज्य गुरूजी को उनके सशरीर रहते हुए 01–06–1997 को श्री श्रीधर घुसे नागपुर वालों ने पत्र लिखा था, जिसका उत्तर 17–06–1997 को गुरूजी ने दिया था, जिसे सरल भाषा और संक्षेप में यहां प्रकाशित करना उपयोगी होगा। पूज्यवर के द्वारा लिखित अंतिम पत्र एक धरोहर के रूप में बहुमूल्य स्मृति सदैव के लिये सुरक्षित रहेगी।

आरती के रचियता द्वारा लिखा पत्र

नागपुर, दिनांक 01–06–1997

पूज्य श्री गुरूजी के चरणों में अनेकानेक सादर प्रणाम्

आज्ञाचक्र को भेदनकर कुंडलिनी जब तक सहस्त्रार में नहीं पहुंचती तब तक जीव जीवन्मुक्ति का अनुभव प्राप्त नहीं कर सकता। यह आपका गन्तव्य निश्चय ही सत्य है, क्योंकि आप तो जन्म से ही सिद्ध योगी हैं और जीवन्मुक्त के रूप में ही इस संसार में अवतीर्ण हुए हैं। आपके लिये जीवन्मुक्ति साध्य नहीं, सिद्ध है। इस क्षेत्र में आप 'पर्वतशिखर' के स्थान पर हैं और मैं अभी अभी उस पर्वत के आरोहण को आरंभ करने वाला 'निम्न स्थानीय' हूँ। मेरे शब्दज्ञान से प्रसन्न होकर आप मुझे जो ''गौरव'' प्रदान करते हैं वह मुझमें प्रतिविभक्ति आपकी अपनी महानता है। हां सद्गुरू की कृपा तथा आपके अमोघ आशीर्वाद से उस 'शिखर' की दिशा में मेरा मार्ग भ्रमण यथोचित गति से निरंतर चल रहा है, इतना निश्चित है। क्रम मुक्ति या विदेह मुक्ति के बदले–इसी जन्म में, जीवनमुक्ति आनन्द लेने के लिये जीव व्याकुल है। वही व्याकुलता आज्ञा चक्र के भेदन में सहायक सिद्ध होगी, ऐसा मुझे विश्वास है। शेष सद्गुरू के हाथों में तथा आपकी इच्छा पर निर्भर है।

–श्रीधर घुसे

गुरूजी का अंतिम पत्र

मुंगेली 17–06–197 रात्रि 8:25 बजे

बुद्धि जब विशुद्ध हो जाती है, उसको शिव कहा है, तब आत्मा स्वयं ज्योति होकर विशुद्ध स्फटिक मणिवत् प्रकट हो जाती है। यही आत्म साक्षात्कार है। बुद्धि आत्मयोग से सूक्ष्मता को प्राप्त होती है। बुद्धि की सूक्ष्मता की सीमा साक्षात्कार है। आत्मा स्वयं शक्ति है–महाशक्ति है। आज्ञा चक्र का बीज ओम् है। आज्ञा चक्र में आने के बाद वहां बुद्धि रहती है। ब्रह्मरंध्र में आने के बाद बुद्धि लीन हो जाती है। भूत, भविष्य आदि आदि का स्वयं बोध होता है।

आज्ञा चक्र में आने के पहले अभ्यास के द्वारा अपनी स्वयं की मृत्यु की अनुभूति होती है कि अब मरे। ऐसा अनुभव होनेपर कुण्डलिनी शक्ति विशुद्ध चक्र को भेदन कर आज्ञा चक्र में स्थायी होती है। इसी को आत्म स्थिति कहा जाता है। गुरूजी ने छः बार स्वयं की मृत्यु का अनुभव किया है। अचेत होकर घंटों दिनों, जिनकी गिनती नहीं है पड़ा रहता है। सामान्य अवस्था में शरीर 4–6 घंटे में अकड़ जाता है और 24 घंटों के बाद शरीर सड़ने लगता है। लेकिन इस अवस्था में शरीर सड़ेगा नहीं, वो बालक की भांति पड़ा रहेगा, या सोता रहेगा। आज्ञा चक्र से ब्रह्मरंध्र में पहुंचने पर इस अवस्था को अहम् ब्रह्मास्मिं कहा है। इस अवस्था के बाद सदा पर्यटन में रहकर या एक स्थान पर रहकर प्रचार और प्रसार करना, यही उसका मार्ग है। मेरा कार्य तुष्टि का है और ये नव तुष्टियां होती हैं जो आपको विदित हैं क्योंकि आप विद्वान हैं।

प्रज्ञावान स्थिति में आकर के नव तुष्टियों के द्वारा अपना कल्याण कर जगत के कल्याण के लिये सदा प्रयत्नशील रहता है–ये मेरी जीवनी का सार है। हमारा आशीष है कि दिन प्रतिदिन उत्तरोत्तर आपकी गति अब जन्मजन्मांतर के लिये आपका जीवन उर्ध्वगति, शनैः शनैः पहाड़ के शिखर पर आप पहुंच जायेंगे।

बुद्धि जब विशुद्ध स्फटिक मणिवत् हो जाती है तब वह कल्याणमयी हो जाती है। अपना भी कल्याण और समाज का भी कल्याण होता है। ये मैं नहीं जानता–कैसे होता है। परिवारजनों का कल्याण नाम लेने मात्र से संकट आपत्ति विपत्ति से सुरक्षित हो जाते हैं और उन्नति के पथ पर अग्रसर होते रहते हैं।

गुरूजी ने अपने आपको मात्र एक अज्ञ बालक कहते हुए अपनी महानता और विराटता का रूप हमारे सामने रखा है। साधु की संगत घड़ी आधी घड़ी भी होने से अपराध दूर होकर प्रगति पथ पर अग्रसर होने का रास्ता दिखाया है।

धन्य धन्य धन्य पूज्य गुरूजी

श्री डी.एस. राय (भोपाल) ने पूज्य गुरूजी के देह त्याग के पश्चात 1998 में जो उद्‌बोधन पत्रिका का प्रकाशन हुआ था उसमें ''अपनी बात'' में लिखा था कि आज पूज्य गुरूजी हमारे बीच नहीं रहे परन्तु उनके प्रेम, आशीष और मार्गदर्शन की अनुभूति उनके न रहने पर भी होती रहेगी और हम सभी का यह कर्तव्य है कि दृढ़तापूर्वक उनके बताये मार्ग पर चलें और अपने जीवन को धन्य करें।

गुरूजी के बहुत पुराने शिष्य रहे हैं और उन्होंने अपने अनेकों सम्बोधनों में गुरूजी की महिमा का उल्लेख किया है। उन्होंने अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए कहा कि इतने समर्थ सदगुरू के शिष्य होकर भी परिवारजन एकजुट होकर आगे बढ़ने के बजाये बिखरते से क्यों प्रतीत होते हैं? हमारे अनुभव और उपलब्धियों के आधार पर हम अपने गुरूजी द्वारा दिये गये मार्ग का प्रचार एवं प्रसार क्यों नहीं करते ताकि अधिक से अधिक लोग हमारे आश्रम और सदगुरूदेव के बारे में जानें और उनकी शाश्वत उपस्थिति तथा कृपा से लाभ उठायें। वह उल्लास और उमंग कहां चला गया जिसके साथ पूज्य गुरूदेव के भौतिक शरीर में रहते हुए हम वर्धा, नागपुर, बालाघाट, भोपाल, इन्दौर, ग्वालियर, रीवा आदि स्थानों पर गुरू पर्व के लिये सपरिवार बड़ी संख्या में जाते थे और पूरे साल के लिये पुनः खुशियां और आशीर्वाद प्राप्त कर वापिस लौटते थे। 500 वर्षों तक गुरूजी मार्गदर्शन के लिये सूक्ष्म रूप में आज भी आपकी राह देखते हैं क्योंकि उन्हें अपने शिष्य परिवार से अगाध स्नेह रहा है।

अंत में पूज्य गुरूजी का निर्देश भी याद रखें कि ''आत्मबोध की साधना करने वाले कभी भीख नहीं मांगते, देवी देवताओं से भीख मांगने वाले कभी आत्मबोध के साधक नहीं हो सकते।''

रायपुर परिवार के शिष्यों ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा था कि गुरूजी कोई भविष्य वक्ता नहीं थे, किन्तु किसी के भी भविष्य को संवारने की शक्ति और पूर्ण क्षमता रखते थे। किसी भी साधक पर भीषण संकट आने से उनके स्मरण मात्र से वो संकट टल जाता था। आसन–प्राणायाम, तंत्र–मंत्र भजन, पूजन करने कराने वाले धार्मिक आध्यात्मिक प्रवचनकार अनेकों मिलते हैं परन्तु व्यक्ति में उसके अन्दर की दिव्य सत्ता का बोध करा देने वाला सत्पुरूष या सद्‌गुरू कोई विरला जैसे हमारे पूज्य गुरूदेव ही रहे हैं। उन्होंने हम सभी को आत्मबोध और आत्म कल्याण के मार्ग पर लगाया।

श्री शांतिलाल जी लूनिया (मुंगेली) ने गुरू परिवार योगाश्रम मुंगेली ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए उन्हें निर्मल, दिव्य और महान आत्म साक्षात्कारी आत्मा के रूप में अपनी भावांजलि अर्पित की थी। श्री लूनिया जी ने हम शिष्यों को याद दिलाते हुए आगे कहा कि पूज्य गुरूजी साधना काल में छः बार मृत्यु केन्द्र का अनुभव किये हैं और सन् 1983 में अमरावती में गुरूजी को अनुभव हुआ कि सकल ब्रह्माण्ड दिव्य ज्योति से परिपूर्ण हो गया और इसमें पूज्य गुरूजी अपने आपको अकेला पाते हैं और सुवर्ण कांतिमय ज्योति से ओत–प्रोत पूरा ब्रह्माण्ड हो गया। आध्यात्मिक योग में साधक की यह चरम स्थिति है–गुरूवर की इस स्थिति को हम सभी शिष्यों का बारम्बार प्रणाम।

आज भौतिक शरीर सहित देवत्व की पराकाष्ठा पर पहुंची देह हमारे बीच नहीं है। पर उनके द्वारा दीक्षित गुरू परिवार बहुत भाग्यशाली हैं क्योंकि एक गृहस्थ योगी के द्वारा शिष्यता हमने पाई है। कई जन्मों के पुण्यफल एक साथ उदय होने पर ही ऐसे गृहस्थ सद्‌गुरू की प्राप्ति होती है। हजारों वर्षों के पुण्य उदय होने पर ऐसा निःस्वार्थी चैतन्य सद्‌गुरू जिसने शिष्य के दरवाजे पर जाकर सजगता और चैतन्यता प्रदान की हो—किसी सौभाग्यशाली को ही प्राप्त हो सकते हैं। गृहस्थ योगी से सिद्धाश्रम प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त हो ऐसे विराट देवत्व के धनी द्वारा दीक्षित यह गुरू परिवार धन्य है और शिष्यत्व प्रदान करने वाले परम पूज्य गुरूजी के चरण कमलों में हम सभी का बारम्बार वन्दन स्वीकार हो।

श्रीमती सुलभा माकोड़े (भोपाल) पूज्य गुरूजी की बहुत पुरानी शिष्या हैं और उन्होंने अपने भाव व्यक्त करते हुए कहा कि गुरूजी के आशीष से भौतिक उपलब्धियां हो जाना मामूली बात है परन्तु मुख्य बात यह है कि हमारा आत्म परिष्कार होते होते हमारी जीवन के प्रति समझ बढ़ती है, हमारे न जानते हुए भी हमारा दृष्टिकोण बदल जाता है। हम चिन्तन मनन की ओर उन्मुख होते हुए लक्ष्य प्राप्ति की ओर बढ़ जाते हैं।

गुरू मंत्र से बुद्धि शुद्ध होकर मन की मलिनता और कटुता कम करके हृदय की विशालता बढ़ती है। विकारों का लोप होकर आत्मविकास होता चला जाता है। विपत्ति में विवेक और आत्मविश्वास बना रहता है। सत्‌गुरू ऐसा ज्ञान देते हैं जो सीधे अंतःकरण में ही रच बस जाता है। गुरू ही अज्ञान का नाश करने वाला ब्रह्म है। हमारा जन्म ही सर्वोच्च लक्ष्य को पाने के लिये हुआ है। अतः हमें स्वाध्याय और ध्यान तथा चिन्तन उस सद्‌गुरू का करना चाहिये जिसका अवतरण ही मानव जाति के उद्धार के लिये हुआ था।

श्री नरेन्द्र सिंह बिलासपुर का करीब दस वर्षों तक हमारे गुरूजी से घनिष्ठ सान्निध्य रहा और गुरूजी से उन्हें मार्गदर्शन भी मिला। गायत्री परिवार के पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को पूज्य गुरूजी ने अवतारी देवात्मा मनुष्य रूप में बताया था तथा उनके द्वारा आप दीक्षित हैं, अतः अन्य से दीक्षा लेना निरर्थक है।

पूज्यवर ने उन्हें समझाया कि आपको कोई समस्या आवे तो मार्गदर्शन करने में उन्हें कोई संकोच नहीं होगा। आप आते रहें। इन्होंने अपनी भावनायें व्यक्त करते हुए कहा कि **''उनका न होते हुए भी उनका बना रहा''।**

पूज्य गुरूदेव वासुदेव रामेश्वर तिवारी मानव रूप में, विष्णु के प्रतिनिधि त्रेता के राम के रूप तथा द्वापर के राधेश्याम कृष्ण के रूप में मिले जुले त्रिआयामी, त्रिरूपधारी ब्रह्मा, विष्णु और महेश की युक्ति के एक जीवित मुजस्सिमा थे। उन्होंने माना कि पूज्य वासुदेव रामेश्वर तिवारी जी कलियुग के अवतारी पुरूष, विष्णु के दसवें अवतारों के एक चमकते हुए नग हैं, सिक्का हैं जिसका एक पहलू युग निर्माण तथा दूसरा पहलू विश्व कल्याण हेतु लोगों को उपासना में संलग्न करने को अवतरित हुआ था, जिसको हम उनके रहते शायद पहचान नहीं सके और हमें शायद यह मलाल रहे कि **''देवदूत आए और हम पहचान नहीं सके''।**

नूर मुहम्मद रायपुर—1999 में गुरूजी का फोटो फिनिश करने योगेश शर्मा ने दिया था जिस पर काम करते समय मेरा हाथ फोटो के सीने से लगा हुआ था। मुझे उस फोटो में सांसों की हरकत का एहसास हुआ। दुबारा हाथ लगाने से सांसों की हरकत को फिर से महसूस किया। फिर भी समझ नहीं पाया। तीसरी बार फिर हाथ रखने पर सांसों की

हरकत को पहले की तरह साफ साफ महसूस कर रहा था। ध्यान में मैंने देखा गुरूजी यहां पर मौजूद हैं। गुरूजी के कार्यक्रम में सुबह ध्यान में सामूहिक सभी बैठे थे, नूर भी जाकर बैठ गये और उन्हें महसूस हुआ गुरूजी उनके सिर पर हाथ रखकर आशीष दे रहे हैं। उन्हें दर्शन दिया–आंख खोलने पर गायब–बन्द करने पर फिर वहां खड़े देखा। अक्सर गुरूजी के दर्शन हो रहे हैं।

श्री बसंत हिरण्य औरंगाबाद–तत्व, तप और ज्ञान से परे जो होते हैं, वह सद्गुरू हैं, इसलिये सद्गुरू को कोई उपमा लागू नहीं होती जो सबसे परे हैं, वही जानने योग्य हैं ओर वह सद्गुरू हैं।

श्री गुरू प्रसाद पाण्डे जी (शहडोल) दिसम्बर 1974 में दीक्षित होने के बाद से गुरूजी से बहुत प्रगाढ़ और लम्बे अर्से का साथ रहा है। उन्हें गुरूजी ने बहुत सी अंतरंग उपलब्धियों की चर्चा करते हुए बताया। गुरु प्रसाद जी के शब्दों में **''गुरूजी बताते थे कि मेरे पास कितनी सिद्धियां, शक्तियां आईं कि मांग लो, जो मांगना है, मुझे कुछ नहीं चाहिये, कहकर वापिस कर देता था''।**

गुरूजी कहते थे कि मेरे पास धन, सम्पत्ति, प्रभुता आदि कुछ नहीं है। मुझे लौकिक व पारलौकिक रूप से बहुत मिला किन्तु मैंने सब वापिस कर दिया। मैं किसी को कहां से दूं? मुझे शुद्ध आत्मतत्व प्राप्त हुआ है। जिसको लेना है आकर ले जाए, अपना आत्म कल्याण कर ले। फिर ऐसी सन्धि नहीं मिलती है। ''नहि ऐसे जन्म बारम्बार''।

गुरूजी कहते थे कि तुम लोग (शिष्य) बड़े भाग्यशाली हो, बिना प्रयास के, बिना कष्ट उठाए पा गये हो। इतना ही पाने के लिय लोगों को कठिन तपस्या करनी पड़ती है।

संसार में जितने भी तीर्थ स्थल हैं वे सभी किसी संत का जन्म स्थान हैं या साधना स्थल या समाधि स्थल। मुंगेली में शिवपुरधाम गुरूजी के शिष्यों का तीर्थ स्थल है। शिवपुर मुंगेली में गुरूजी का समाधि स्थल संसार के सभी तीर्थ स्थलों से पवित्र व शक्तिदायक है। गुरू परिवार के समस्त शिष्यों का यह कर्तव्य है कि इस पवित्र स्थल को संसार के पवित्र स्थलों की भांति सुसज्जित कर गरिमापूर्ण और भव्य बनाये रखें।

श्री पाण्डे जी ने बताया कि पूज्य गुरूजी ने मुझे साधना रत होने को कहा। किन्तु पारिवारिक जिम्मेदारियों के कारण नौकरी से त्याग पत्र न देना, मेरी बहुत बड़ी भूल थी। गुरू कृपा, आत्म विश्वास और साधना के प्रति लगाव से ही गुरूजी के तात्विक रूप को पहचाना जा सकता है और उसी से लक्ष्य प्राप्ति सम्भव होती है। गुरूजी के आदेशों का पालन करते हुए निर्दिष्ट मार्ग पर चलना ही हमारा कर्तव्य है।

पूज्य गुरूजी को सुनहला प्रकाश पुंज दिखाई पड़ता था जिसमें उन्हें भूत, भविष्य और वर्तमान सभी कुछ दिखाई पड़ता था। सही अर्थों में हमारे गुरूजी ''अहम् ब्रह्मस्मि'' कहने के अधिकारी रहे हैं। गुरूजी के जीवनकाल में ऐसे लोग मिले हैं जिन्हें दिव्य फकीरों के दर्शन की लालसा रही है और उन्हें आकाशवाणी से सुनने मिला कि यह कार्य ''श्री रामेश्वर वासुदेव तिवारी जी'' ही पूरा करने में सक्षम हैं और ऐसा हुआ भी। गुरूजी अपने भक्त को उसके इष्ट से मिलाने में पूर्ण रूप से सक्षम थे। दर्शन मात्र से कृतार्थ कर देने वाले आत्मस्थ योगी के चरणों में हमारा कोटि कोटि नमन्।

डॉ. श्रीमती के. के. पंधेर (रायपुर) ने अपने उद्गार 1996 में व्यक्त करते हुए कहा था कि हिन्दुओं के मन्दिर, मुसलमानों की मस्जिद,

ईसाईयों के चर्च एवं सिक्खों के गुरूद्वारो का सम्मान करते हुए तथा इन स्मारकों के औचित्य को मानते हुए हमारे सतगुरू हर व्यक्ति को परिचित कराते हैं उस देवालय से, जो प्रत्येक व्यक्ति के सर्वाधिक समीप हैं और जिसमें स्थित ''सत्स्वरूप'', हर प्रकार की साम्प्रदायिकता, जातिवाद, अलगाव वाद से अछूत है तथा एकता व अखण्डता के सुदृढ़ आधार देकर विश्व शांति की स्थापना का एकमात्र सूत्र है।

शिष्य परिवार को स्वयं निर्णय लेना है कि जीवन पर्यन्त केवल भौतिकता में लिप्त रहकर अपनी लाश ढोते रहना है या कि अपने सांसारिक प्रपंचों का निर्वाह करने के साथ साथ आत्मिक उन्नति करके ईश्वरत्व प्राप्त करने में सफल होना है। यहां यह लिखना प्रासांगिक होगा कि डॉ. पंधेर ने एक बार गुरूजी से गुरूनानक देव के दर्शन कराने की प्रार्थना की थी और गुरूजी पलंग पर बैठे थे। मैडम पंधेर आंख बन्द करके बैठ गईं और कुछ समय बाद जब आंख खोली तो गुरूजी नानकदेव के रूप में दिखाई दिये।

जनाब मज़हर खान (तेल्हारा) ने 1995 में गुरू पर्व पर बड़ी दृढ़ता से कहा था कि जिसने अपने आपको जाना, अपने नफस को पहचाना, अपनी जात को पहचाना, उसने खुदा को पहचाना, उसने अपने रब को पहचाना। जिसने अपने आपको नहीं पहचाना वो अपने खुदा को क्या पहचानेगा। अपने पैदा करने वाले को क्या पहचानेगा? अल्लाह ने अपना नूर हमारे अन्दर रखा है, अपना हुक्म हमारे अंदर फूंका है। गुरूजी उसी नूर को देखने के लिये मार्गदर्शन कर रहे हैं। 1955 से मैं इस हस्ती को बड़े करीब से जानता हूँ। खुदगर्ज और स्वार्थी इन्सान अपने तौर पर कुछ बनकर दुनिया से चले गये लेकिन एक वह इन्सान जिसका मकसद सारी

दुनिया के इन्सानों को उस ''रब'' तक पहुंचा दे और उसकी पहचान करा दे। वो मार्ग वो रास्ता उनको दिखा दे, उस रास्ते पर उनको डाल दे जो उधर से बिछुड़े बंदे हैं उनको मिला दें, इतना अजीम काम किया जा रहा है गुरूजी द्वारा इतना अजीम काम कर रहे हैं गुरूजी। ये सारे इन्सानों से नहीं होता।

ऐसे इन्सान हजारों, लाखों नहीं करोड़ों में एकाध होते हैं, जो अपने जीवन के उद्देश्य को सामने रखे और हजारों लाखों इन्सानों को अपने मौला से मिला दें। अपने मालिक तक पहुंचा दे। ऐसा अपने आपको देखने का रास्ता, अपने मौला तक पहुचंने का रास्ता उसका कुर्ब हासिल करने का रास्ता तसव्वुफ कहलाता है, जिसे योग कहते हैं और योग एवं ध्यान का रास्ता बताकर खुदा से मिला देने वाले इस इन्सान को सतगुरू के रूप में जाना जाता है।

मज़हर साहब ने कहा वो मेरे अंदर है यहां तक तो मैं भी अपने योग में चलकर समझा, लेकिन मैं उसके अंदर हूं इस बात को समझने के लिये मैं गुरूजी के पास आया। मैं दुआ करता हूं कि ऐसी बुजुर्ग हस्तियां बार बार दुनिया में आयें पर–

''हजारों साल नरगिस अपनी बेनूरी पे रोती है,
बड़ी मुश्किल से होता है, चमन में दीदावर पैदा।''

डॉ. श्रीमती सईदा शिन्दे (ग्वालियर/भोपाल) जिन्हें सच्चे संत महात्मा को पाने की एक लम्बे समय से तड़फन थी, जिसका आभास पूज्य गुरूजी को बालौद में एक महिला की मुखाकृति श्री राय साहब के यहां निवास करते समय हुआ था, उन्हें 1978 में अपना मन चाहा सच्चा संत रायपुर में मिल गया। श्रीमती सईदा शिन्दे और डॉक्टर शिन्दे को पूज्य

गुरूजी ने दीक्षित करने के बाद सदैव ''हमारे डॉक्टर साहब'' के नाम से सम्बोधित किया तथा लम्बे अर्से तक इस दम्पत्ति के साथ रीवा, रायपुर, ग्वालियर, भोपाल में गुरूजी का निवास रहा है। डॉक्टर श्रीमती शिन्दे ने गुरूजी की विराटता का उल्लेख करते समय 1992 में ग्वालियर में कहा कि मेरी यही दुआ है कि गुरूजी मेरे नजदीक इतना आयें कि जो मैं देखूं वो उनकी आंख से देखूं, जो मैं सुनुं, वो मैं अपने गुरूजी के कान से सुनुं, जो मैं सोचूं, वो मैं अपने गुरूजी के दिमाग से सोचूं, जो मैं करूं वो मैं गुरूजी के हाथ से करूं और जहां मेरे कदम चलें, वहां मैं गुरूजी के कदम से चलूं। एक बार मैंने गुरूजी से पूछा था कि गुरूजी क्या सीखना चाहिये। गुरूजी बोले देखो वह चीज जाननी चाहिये, जिसको जानने के बाद कुछ जानना बाकी न रहे।

स्ववर्गीय श्री वी. वी. तकवाले वर्धा ने गुरूपर्व 1995 में अपना अटूट विश्वास व्यक्त करते हुए कहा था कि धारणा दृढ़ होनी चाहिए कि मुझे ये जानना है कि मैं कौन हूं? क्या हूं? उसके लिये साधना करनी है। हम अपनी धारणा दृढ़ रखें और गुरूजी ने जो बताया है उसके बारे में कभी भी तर्क न करें। हमें धैर्यपूर्वक कुछ भी तर्क किये वगैरह, जैसा कुछ बतलाया गया है, वैसी साधना करते रहना है, इससे धीरे धीरे प्रगति होती है। यह प्रगति करना हमारा उद्देश्य रहे तो गन्तव्य तक पहुंचने का मन्तव्य हमारा निश्चित रूप से पूर्ण होगा। ये गुरूजी का आशीष है।

श्री राजेन्द्र कुमार जैन गोंदिया– विलक्षण प्रतिभा और आध्यात्म के गूढ़ रहस्यों का सरलीकरण तथा साधक की आध्यात्मिक उलझन को सुलझाने का ज्ञान परमपूज्य गुरूजी की कृपा और स्नेह से प्राप्त हुआ है। वे सद्गुरू की प्रेरणा से जिज्ञासुओं को दीक्षा देने की अनुमति प्राप्त शिष्य

हैं जो परम पूज्य गुरूजी की दिव्य लीलाओं को उनके द्वारा 500 वर्षों तक हमारे बीच रहकर सूझबूझ देकर दिव्य मार्गदर्शन का आश्वासन पूरा करा रहे हैं। उन्होंने अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए कहा कि परम पूज्य गुरूजी का व्यक्तित्व कदाचित उस वातायान की तरह है, जिसमें से भारत की पुष्कल सांस्कृतिक परम्परा अपने सम्पूर्ण सम्मोहन और आश्वासन के साथ बाहर झांक रही है। संत का चरित्र अपने आप में समाप्त नहीं होता, वह तो उस अखण्ड दीप की तरह होता है जिससे समस्त देशकाल आलोकित हो उठते हैं। जनजीवन को दिशा मिल जाती है।

श्रीमद् भागवत गीता में जिस आदर्श–पुरूष की कल्पना की गई है उसे पूज्य गुरूजी ने अपने स्वयं के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व से मनसा वाचा कर्मणा साकार किया। योगाभ्यास में समाधि की अनुभूति करने वाले अनेक साधक इस परिवार में है। परम पूज्य गुरूजी की हमेशा यह सद्इच्छा रही है कि इस आत्मकल्याण की विद्या के द्वार सभी मुमुक्षुओं के लिये खुले रहे तथा उन्हें योग्य मार्गदर्शन मिले।

लोग कहते हैं गुरू बनाना है? किसे बनायें? ''सच्चा गुरू'' कोई मिलता नहीं, सब अधूरे हैं। मैं कहता हूं पूरे गुरू को मत ढूंढो, तुम स्वयं पूरे–पूरे शिष्य बन जाओ, गुरू स्वयं पूरा मिल जायेगा। गुरू पहले मिटाता है फिर बनाता है। वह पहले अहम् को ढहाता है और फिर प्रभु–प्रसाद को बनाता है। भक्त और शिष्य में बड़ा फर्क है। जो गुरू को याद करे वह भक्त है और जिसे गुरू याद करे वह शिष्य है। शिष्य होना जीवन की एक बड़ी घटना है। गुरू और शिष्य के संबंध में कहा है कि शिष्य गुरू के 'तन' का ख्याल रखे और गुरू शिष्य के 'मन' का ख्याल रखे।

हमारा सद्गुरू चरणों में एकनिष्ट होना प्रथम एवं आवश्यक कार्य है। सद्गुरू चरणों में असीम अनुराग एवं दृढ़ भक्ति से ही हमें असीम शक्ति मिलती रहे, यही हम गुरू परिवार के हर शिष्य का लक्ष्य हो। परमपूज्य गुरूजी की सभी साधकों के लिये यही सद्इच्छा रही है कि हमारा वर्तमान सुधरे, हम अपने को जानें ओर एक दूसरे के सहयोगी बनकर समाज हित, देशहित एवं स्वहित करें। हे सद्गुरू! आपकी सद्इच्छा से होने वाली सफलता का अभिमान हमारे हृदय में कभी भी उत्पन्न न हो। हम आपकी दिव्य कृपा शक्ति के प्रभाव को कभी न भूलें।

हमारा यह चैतन्य गुरू तीर्थ, समाधि–स्थल शिवपुर परमधाम समस्त भावी साधकों एवं भक्तों को अपनी चैतन्यमयी उपस्थिति से मार्गदर्शन करता हुआ लाभान्वित करेगा और एक महानतम उपासना केन्द्र का रूप लेकर भावी पीढ़ी के मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेगा।

श्रीमती मणी जैन (भोपाल) : परम पूज्य गुरूजी के चरण कमलों के सानिध्य में आने के बाद जीवन में जो सुख शांति निर्भयता आई है उसे शब्दों में व्यक्त करना मानो मेरे लिये गूंगे को गुड़ का स्वाद बताना हो। जो सुख आनंद का अनुभव वह पा रहा है उसे कह नहीं सकता। उन्होंने मुझे अपने माता पिता, गुरू, भगवान सभी रूपों के सुख का अनुभव कराया है। हर पल, हर क्षण हम उनकी कमी का अहसास करते हैं। काश! हम उनकी कुछ सेवा और कर पाते। उनकी कुछ सेवा न करने के बाद भी उनकी करूणा, दया, कृपा, अनुगृह की जो सहस्त्रधारा हमारे परिवार को आनंद में भिगो रही है, उनके हम रोम–रोम से आभारी हैं जिन्होंने हमें आध्यात्मिक जगत में पहुंचा कर हम पर बड़ा उपकार किया वरना हम तो इस नश्वर संसार के वैभव में ही खोकर अपने अमूल्य जीवन को नष्ट कर देते। ऐसे अनमोल अपने सतगुरू को पाकर हम अपने को गौरवान्वित व

भाग्यशाली मानते हैं। जीवन में कुछ सत्कर्म किये होंगे जो उन्होंने हमें अपनाकर हमारे जीवन की नई दिशा प्रदान की। हम उनके चिरऋणी हैं व रहेंगे सदा। उनके युगल चरणों में कोटि कोटि नमन करते हुए यही प्रार्थना करते हैं कि वे अपने युगल चरणों में मेरा स्थान बनाये रखें हर पल उनका सानिध्य व प्रेम बना रहे।

श्री आर.एम. छलोत्रे (भोपाल) पूज्य गुरूजी को शब्दों के आडम्बर में नहीं बांधा जा सकता अपितु पूज्यवर की मात्र अनुभूति की जा सकती है, क्योंकि यह महान योगी परम सुख देने वाले ब्रह्मानंद स्वरूप हैं।

ब्रह्मानंदम् परम सुखदं, केवलम् ज्ञानमूर्तिम्।
द्वंदातीतं, गगनसदृशम् तत्व मस्यादि लक्ष्यम्।।

गुरू के न होने से मानसिक शांति का अभाव रहता था। गुरूजी के पास रहकर भी गुरूजी से दूर रहना मात्र प्रारब्ध ही था जिसे कोसना उचित नहीं होगा। बिलासपुर कार्यकाल में श्री डॉ. एन. एस. देशपांडे से परिचय हुआ, जिनके माध्यम से पूज्य गुरू तक हम पहुंचे और 22–11–92 को दीक्षित हो सके। पूज्य गुरूजी का सामीप्य पाना पूर्व जन्मों का ही संबंध रहा होगा, ऐसा लगता है। गुरूजी ब्रह्मवेत्ता, साक्षात्कारी वेद विद्, अद्वितीय प्रतिभा के धनी, कई भाषाओं संस्कृत, हिन्दी, मराठी, इंग्लिश व उर्दू भाषा का उत्कृष्ट ज्ञान तथा व्याकरणाचार्य रहे हैं।

अहंकार रहित, विनम्र, व्यवहार कुशल, ऐश्वर्य लिप्सा रहित, अनुशासित, मर्यादित गुणों के धनी गुरूजी ने सदैव सभी को उचित सम्मान और सुविधा जन्य व्यवहार दिया। वातावरण को विनोदपूर्ण और सरस बनाने का गुण भी गुरूजी में रहा है जिसे आज भी याद करता हूं। एक बार उनके दर्शनों को पहुंचा तो गुरूजी ने नर्मदा के छलिये छलने आ गये हैं,

कहकर अपनी विनोद प्रियता का आभास कराया था। मेरे पुत्र संजय को मार्च 1996 में जीवन दान उनकी कृपा से मिला था। दैनिक जीवन में भी सद्गुरू का संरक्षण स्मरण मात्र से मिलता है और उनकी कृपा से दुःसाध्य कार्य साध्य होते हैं। उन महान तपस्वी के श्री चरणों में सदैव आश्रय मिलता रहे, यही विनम्र विनती है।

श्री हिदायत अली कमलाकर जी (बिलासपुर) पूज्य गुरूजी से बिलासपुर में 1980–81 में सम्पर्क में आये और उन्होंने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि ''दिखावट और बनावटीपन'' से कोसों दूर गुरूजी एक ऐसी दिव्य ज्योति हैं, जिसका आकलन मनुष्य मात्र की बुद्धि से परे है।

अदृश्य ज्योति ने समस्त प्राणियों में से केवल मानव पर, वह भी किसी मानव विशेष पर, अपना विशेष उपकार किया है। यही उपकार पूज्य गुरूजी के हिस्से में आया है। वे किसी जाति विशेष के नहीं, किसी संस्कार विशेष के नहीं, वे किसी परिवार विशेष के नहीं अपितु ऐसे अपूर्व व्यक्ति हैं जिनमें उस दिव्य ज्योति के उत्तराधिकारी होने के सारे गुण विद्यमान हैं। इनकी दया से जीवन में सभी को सुख और शांति प्राप्त हो रही है। बिलासपुर में एक मज़ार पर मुझे गुरूजी के दर्शन हमेशा होते हैं।

पूज्य सद्गुरू करूणा और दया के महासागर आज हमारे बीच नहीं हैं उनकी दिव्य छवि का हम मात्र अहसास कर सकते हैं और उनके शिष्य परिवार में एक भी ऐसा शिष्य नहीं होगा जिसे इस महासागर के प्यार और वात्सल्य की करूणा का स्पर्श ना हुआ हो। प्यासा कुयें के पास जाकर तृप्ति पाता है, पर एक ऐसी दिव्य आत्मा आज सशरीर हमारे पास नहीं है, जो स्वयं चलकर प्यासे की प्यास बुझाने जाता था और इसलिये इस

विलक्षण गुरू परिवार को गुरूजी के ही शब्दों में सौभाग्यशाली बोलना मात्र एक सत्य का प्रकटीकरण है जो आध्यात्म की प्रसारित होने वाली ज्योति, प्रेम और दया का सुपात्र बना हो।

डॉक्टर सुश्री चन्दा रीवा :— प्राणपण से समर्पित भगवान वासुदेव की शिष्य अपने आप में एक विलक्षण अनुभूतियों का खजाना जिनके पास है उनसे सम्पर्क करने पर पता चला कि चन्दा जी ने सर्वप्रथम गुरूजी को डॉक्टर रघुनाथ पाण्डे के घर से डॉक्टर शिन्दे के यहां जाते हुए 1982 में रीवा में देखा था। सन् 1987 में पूज्य गुरूवर की जीवनी ''दिव्याम्बु निमज्जन'' प्राप्त होने पर और उसे पढ़ते ही दिव्य अनुभव होना शुरू हो गये और जहां कहीं गुरू पर्व मनाया जाता था उस स्थानपर अवश्य पहुंचती थी। 26 अप्रैल दिन गुरूवार सन् 1993 में पूज्य गुरूजी रीवा में डॉ. शिन्दे के पास विराजमान थे ओर वहां दीक्षा पाने हेतु चन्दा जी के निवेदन पर गुरूजी ने कहा कि इसको दीक्षा की जरूरत कहां है, यह तो बहुत पहले से हमसे जुड़ी है। डॉक्टर चन्दा के दिव्य अनुभव जो दीक्षा के पूर्व मात्र गुरूजी की जीवनी के पढ़ने से प्रारंभ हो गये थे, अरिहंत की मूर्ति पूज्य गुरूवर की भला कैसे जानकारी में न हो।

डॉ. चन्दा ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि भगवान वासुदेव सद्गुरू की दिव्य छवि आनन्द ही आनन्द से घिरी हुई दृष्टिगोचर होती है। पूज्य गुरूजी की इस दिव्य अनुभूति से दिव्य ज्ञान की प्राप्ति होती है जो जीवन का सार है और यही आत्म साक्षात्कार तथा समाधि की अवस्था सरलता एवं सहजता से प्राप्त करा देती है। यह अक्षरशः सत्य है। सत्य का अहसास स्वयं को उस मार्ग पर ले जाने पर हो जाता है।

साधक के आंतरिक हृदय से निकली हर प्रार्थना भगवान वासुदेव के अन्तर्मन को तत्क्षण छू लेती है और उन्हें द्रवित कर साधक को उनकी दिव्य शक्ति का अहसास कराकर शीतलता प्रदान करती है। शब्दों से परे है सद्गुरू भगवान वासुदेव की विराटता, जिन्होंने सद्गुरू मंत्र रूपी पतवार पकड़ाकर भवसागर से पार होने का मार्ग बतलाया, जो मानव को पाप से पुण्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, और अन्त में सद्गुरू चरण कमलों से सतत प्रवाहित होनेवाली पावन अमरगंगा की ओर ले जाता है, जो कि मानव का अंतिम पड़ाव है, जिसे परमधाम या परमानन्द कह सकते हैं, जो कि अत्यंत शीतल शांत एवं परम सुखदायिनी है।

श्री गोविन्द चिचपाले (भोपाल)–आपने गुरूजी से दीक्षित होने के बाद गुरू महिमा और गुरूजी के सामीप्य को अनेकों अवसरों पर तथा अपने भावों को भजनों के माध्यम से व्यक्त किया है। उन्होंने गागर में सागर समाया है, यह इन पंक्तियों से बोध कराया है :–

पाकर सद्गुरू हमने, सब परिवार कहते।
मिल गया खजाना हमको यह गीत गाते।।
वृत्ति को निवृत्त करके गले से लगाया हमको।
दीक्षित कर जोड़ा अपने करीब सबको।।
सगुण रूप पाया जिसने सबको ऋण चुकाना है।
ऋण चुकाते चुकाते शेष उऋण हो जाता है।।
अनुभूतियां होती सबको गुरूजी की याद करते।
परम तत्व को पाना श्री गुरूजी की याद करते।।

अपने उद्गारों को श्री चिचपाले जी ने गुरूजी के सशरीर रहते और उनके महाप्रयाण के बाद भी भजनों और गीतों के माध्यम से अपने श्रद्धा सुमन गुरूजी के चरणों में अर्पित किये हैं।

श्री भास्कर देशपांडे (नागपुर) :– गुरूजी के बहुत पुराने शिष्यों में रहे हैं, जिनकी दीक्षा वर्धा में 1976 में हुई थी। पूज्य गुरूजी का परिचय आपको अपने चाचा श्री एन.एस. देशपांडे बिलासपुर के माध्यम से हुआ था। जब पूज्य गुरूजी अपने मित्र श्री वामन पत्की (अकोला) के यहां वर्धा में विराजमान थे तब भास्कर जी को दीक्षित करके अपने परिवार में सम्मिलित कर लिया था। गुरूजी से अल्प समय में ही आत्मिक संबंधों में प्रगाढ़ता आ गई और उन्हें लेकर 1978 माह फरवरी मार्च में पूज्य गुरूवर को दिल्ली होते हुए अपनी बहिन के घर देहरादून लेकर पहुंचे थे।

देहरादून में उस समय बहुत अधिक ठंड थी और भारी भरकम रजाई में गुरूजी को सुलाया गया और पास के ही कक्ष में भास्कर जी विश्राम करने गये। सुबह करीब 6–6.30 बजे भास्कर जी की बहन ने गुरूजी को चाय पिलाने का आग्रह किया तभी भास्कर जी ने जाकर देखा गुरूजी आराम से सोये हुए हैं। उन्होंने 1–2 बार गुरूजी को आवाज दी परन्तु कोई जवाब नहीं आया। प्रायः गुरूजी के सभी शिष्य यह बात अच्छी तरह जानते हैं कि गुरूजी किसी भी समय चाहे वह दिन हो या रात का कोई भी पहर–एक आवाज देने भर से अक्सर ''जी'' अथवा आवाज देनेवाले का नाम लेकर प्रत्युत्तर देते थे। आज ऐसा नहीं हुआ। अतः भास्कर वापिस आकर पूज्यवर के स्वतः उठने की प्रतीक्षा करने लगे।

कुछ समय पश्चात गुरूजी स्वयं आकर बोले भास्कर चाय नहीं पिलाओगे। भास्कर जी ने पूरी बात बताकर पूछा कि गुरूजी आप यहां थे ही नहीं। आप कहीं गये थे, कृपया बतायें। गुरूजी ने बड़े विनोद पूर्ण लफजों में कहा कि तुम मेरी बहुत चौकसी करते हो और आगे बताया यह स्थान हिमालय की वादियों वाला है और वे उन्हीं वादियों में सैर करने गये थे और शायद अपने वालों से मिलकर आये थे।

इसी संदर्भ में भास्कर जी ने हमें बताया कि पूज्य गुरूजी सर्वशक्तिमान और अपने शिष्यों को ऊंचाई तक पहुंचाने में सक्षम योगी की भूमिका निभाते रहे हैं। श्री भास्कर की पत्नी को असाध्य बीमारी ने घेरा व 24 जनवरी 1997 को अस्पताल में भर्ती किया गया था। भास्कर जी ने बताया कि अत्याधिक चिन्ता में घिरने पर पूज्य गुरूजी से प्रार्थना की और रात करीब 12 बजे उन्होंने एक स्पष्ट आवाज सुनी–

''भास्कर, चिंता मत करना, नंदा ठीक हो जायेगी''।

डॉक्टरों ने उनको तीसरी स्टेज का कैंसर घोषित किया था। उस समय नंदा ने अपनी बहिन को पहले कहा गुरूजी को बता देना और बेहोशी की ही हालत में फिर तीन बार बताया कि **गुरूजी तो मेरे पलंग के पास हैं और कह रहे हैं ''नंदा, चिन्ता मत करना सब ठीक हो जायेगा''।** जब दोबारा रिपोर्ट आई तो पता चला कि कैंसर जैसे रोग के कोई लक्षण भी विद्यमान नहीं थे।

गुरूजी का स्नेहिल आशीष अपने शिष्य परिवार को प्रकाश की राह तक ले जाने के लिये अद्वितीय और शब्दों से परे है जिसका अनुभव प्रत्यक्ष में प्रायः सभी शिष्यों ने किसी न किसी रूप में किया है।

डॉ. श्रीमती प्रतिभा गुर्जर (भोपाल) ने अपनी भावनाओं को दार्शनिक और आध्यात्मिक शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है। शिवपुरधाम की अलौकिक छटा देखकर जो अनुभूति हुई वह पूर्ण आत्मीयता और पूज्य गुरूवर का वरदहस्त अभय दानदेता हुआ सा महसूस हुआ। समाधि स्थल का दर्शन अपने आप में उन्हें दिव्य दर्शन सा लगा जिसे उन्होंने शत् शत् प्रणाम किया। पूरे परिसर में सुचिता की गंध गहरी खामोशी में बिखरी हुई

प्रतीत हुई। हरे भरे पेड़ और सन्नाटे में समाधि अलौकिक शक्ति का आभास कराती हुई दे रही थी, सबको अपना आशीष। ''कल्याण हो मंगल हो'', का दिव्य संदेश पूरे परिसर में समाया हुआ था। अपनी भांवांजलि में आपने अपनी इस शांति यात्रा का समापन करते हुए कहा–

आशीर्वाद आश्वस्ति देते हाथ
आजीवन हर हाल रहेंगे साथ
वियावान में दिखलायेंगे राह
गिरते हुए को लेंगे थाम।
अभावों से भरी
कांटों से उलझी
ये जिन्दगी
होगी पार लेकर नाम।

श्री राकेश उपाध्याय रायपुर सौनौरी (रीवा) : गुरूजी मानव मूर्ति में देव प्रतिमा और साक्षात् भगवान स्वरूप थे। जेठ की तपती गर्मी और लू के प्रभाव से शरीर में ताप और आंखों में दर्द की पीड़ा लिये गुरूजी से रीवा में सन 1986–87 में दीक्षा की याचना से पहुंचा था। गुरूजी के चरणों के स्पर्श से सोचने लगा कि क्या किसी मानव का मखमल से भी कोमल चरण हो सकता है। गुरूजी ने मुझे थपथपाया और मेरे चेहरे पर उनका स्पर्श होते ही उन्होंने कहा कि तुम्हें तो तेज बुखार है। डॉ. शिन्दे साहब से एक ग्लास जूस मंगवाकर उस करूणानिधान ने मुझे पिलाया और आराम करने का आदेश दिया।

पूज्य गुरूजी के चरणों के पास बैठकर सुख और शांति का जो अहसास हुआ उसे शब्दों में नहीं कहा जा सकता। हमारा परिचय पाकर पूज्य गुरूजी ने हमें पड़ोसी (गुरूजी के पुश्तैनी ग्राम के पास का रहने वाला था) जैसे आत्मिक शब्द से पुकार कर अपने आशीर्वचनों से गुरू दीक्षा दी।

मेरे माता पिता जी गुरूजी के शिष्य हैं। सन् 1987 में मेरे छोटे भाई अनिल उपाध्याय को एक बड़ा फोड़ा (अल्सर) आंत में हुआ था, जिसका विकराल रूप जीवन–मरण का प्रश्न बन गया था और डॉक्टरों ने बम्बई इलाज के लिये ले जाने की सलाह दी थी। डॉक्टर टी.एस. त्रिपाठी रीवां ने ऑपरेशन से उसके बचाव का रास्ता बताया तथा गम्भीर हालत में अस्पताल में ऑपरेशन का निर्णय हुआ।

ऑपरेशन 23 जुलाई 1987 को होना था जिसके कारण मेरे मां पिताजी बिलासपुर गुरू पर्व में शामिल होने से वंचित रहे।

अन्य शिष्यों ने पूज्य गुरूजी को यह सब बताया तो गुरूजी कुछ पल के लिये ध्यान एकाग्र कर शिष्य परिवार से बोले कि **उस बालक का ऑपरेशन नहीं होगा, ऐसा बता देना।**

ऑपरेशन थियेटर में पूरी प्रक्रिया ऑपरेशन की पूर्ण हो चुकी थी और एकाएक **डॉ. त्रिपाठी जी कुछ सोचते हुए सहसा ऑपरेशन करने से रूक गये** और बोले अब ऑपरेशन नहीं होगा। एक और विधि को अपनाकर देखता हूं और एक विशेष प्रकार के इन्जेक्शन के माध्यम से उस अल्सर को ठीक कर उस बालक को जीवनदान दे दिया। पूज्य गुरूजी का आशीर्वाद साक्षात् भगवान का ही है और उस दिव्य आत्मा के श्री चरणों में सदा सभी परिवार का सर झुका रहे यही, प्रार्थना है।

पूज्य गुरूजी का आत्मज्ञान, उनका कर्मज्ञान, उनका योग, उनकी साधना, उनकी तपस्या, उनका योग दर्शन और उनका योग मार्ग हमेशा हमेशा से अपने शिष्य परिवार के लिये सूर्य की तरह प्रकाशवान एवं चन्द्रमा की तरह सुशोभित किरण की तरह है। इस शक्ति को कोटि कोटि नमन।

डॉ. हनीफा तालिब (लंदन) : दिनांक 11–8–1990 दिन शुक्रवार को गुरूजी ने दीक्षा दी थी और तभी से उनका आत्मविश्वास बढ़ा और आत्म शक्ति का अहसास हो रहा है। उन्हें लगा कि Life is full of Treasures. थोड़े समय बाद गुरूजी ने ध्यान में बैठने को मना कर दिया और यह उन्हें प्रश्न वाचक बनकर रह गया। एक दिन ध्यान में निश्चय करके बैठ गई कि जब तक यह रहस्य प्रकट नहीं होता वे उठेंगी ही नहीं। एकाएक गुरूजी के दर्शन हुए और सूर्य से भी तेज रोशनी हुई और गुरूजी से बातचीत भी हुई जो उन्हें याद नहीं। पर इतना अवश्य याद है कि गुरूजी ने आदेश दिया था कि तुम्हें Post Graduation करना है और उसके बाद अभ्यास करना है।

नमाज पढ़ते समय भी ठंड लगती थी और पसीना आता था और गुरूजी का आदेश पाकर नमाज पढ़ना भी बन्द कर दिया था। उनके मार्गदर्शन का अनुसरण कर आनन्द मंगल से जीवन यापन करते हुए हर पल महसूस कर रही हूं कि अल्लाह नूर है। आज वे इंग्लैण्ड में है और उनके ही शब्दों में पूज्य गुरूवर प्रतिपल उनके साथ रहते हैं और उस नूर का अहसास वे करते हुए अन्य लोगों को भी उसके समीप ले जा रही हैं। गुरूजी दीक्षा के समय कहा था–मैं हमेशा साथ हूं हनीफा, तुम दुनिया के किसी भी कोने में रहो। और सच में मुझे सदैव अहसास होता है कि गुरूजी मेरे साथ हैं।

10—12 मई 2013 को जे. के. जैन ने इस सम्पूर्ण रूप से समर्पित विदुषी महिला शिष्य से दूरभाष पर सम्पर्क किया था। पूज्य गुरूजी का सामीप्य और दर्शन एवं कुछ विशेष उल्लेखनीय अनुभव गुरू परिवार के बीच संवारकर रखने का आग्रह किया था। 16—05—2013 को लंदन से आधुनिक तंत्र प्रणाली से एक पत्र के रूप में जो संदेश भेजा था उसका मूल रूप से यहां प्रस्तुत करना गुरू परिवार के लिये सार्थक और प्रेरणादायक सिद्ध होगा—

ॐ श्री गुरूजी के चरणों में सादर प्रणाम,

अब आप लोग सोच रहे होंगे कि गुरूजी के चरणों में, जो तो अब इस दुनिया में नहीं रहे। तो मैं आप लोगों को बता दूं कि 'नाम' है तो नामी का होना आवश्यक है। यह गुरूजी के ही वचन हैं।

1998 मार्च में महासमाधी के बाद मुझे लगा सभी कुछ समाप्त हो गया है। पर गुरूजी ने मुझसे दीक्षा के समय कहा था कि हम सदा आपके साथ हैं। तो अब कहां हैं? काफी समय लगभग 3 माह तक यही स्थिति रही, फिर श्री गुरूजी ने असीम कृपा की ओर अपने साक्षात् दर्शन दिये, वार्तालाप किये, मैंने उन्हें हाथ से छूकर भी देखा, जागृत अवस्था में। फिर वे ज्योति में परिवर्तित होकर मुझ ही में समा गये।

उस दिन के बाद से आज तक कभी भी मेंने अपने आपको अकेला नहीं पाया। हर समय वे रहते हैं साथ मेरे।

यहां एक बात आप सभी को बता दूं कि उन्होंने कहा है कि हम 500 वर्षों तक शरीर में रहकर मार्गदर्शन करते रहेंगे।

अब प्रश्न यह उठता है कि सभी को दर्शन क्यों नहीं होते? तो इसका उत्तर है—ब्रह्मचर्य का पूरा पालन, सत्यवादिता एवं पूर्ण रूपेण शरणागत् जो भी होगा उसे उनके दर्शन अवश्य होंगे।

सदा ही श्री गुरूजी के चरणों में उनकी हनीफा।

श्री डी. एल. शर्मा (इंदौर) :— 2 जनवरी 1984 को पूज्यवर ने दीक्षा देकर अपना बनाया और हम धर्म का वास्तविक स्वरूप समझ सके। आत्म विश्वास में वृद्धि हुई है और सत्य के पथ पर बाधायें पार करने की हिम्मत आ गई है। सद्गुरूदेव की सेवा में सर्वाधिक आनन्द अनुभव होता है। उनके दर्शन—ध्यान एवं प्रवचन सुनने में भी आनन्द आता है।

डॉ. प्रभात आचार्य (रायपुर) :— पूज्य गुरूजी से सन् 1990 में दीक्षित हुए थे। पहले डॉ. पंधेर मैडम के यहां गुरूजी रूकते थे और बाद में गुरू कृपा नर्सिंग होम में गुरूजी का निवास होने लगा था। आत्म साक्षात्कारी सत् पुरूष जिसने निर्बीज की स्थिति (साक्षात् ईश्वरत्व) प्राप्त कर ली हो उन पूज्य गुरूजी की दिन चर्या और कार्यक्रम बहुत नजदीक से देखने का दुर्लभ अवसर मिला जिसके कारण बड़े स्नेह से इन्हें जासूस की संज्ञा गुरूजी ने दी थी। कोई भी नवांगतुक हो या पुराना शिष्य जैसे ही गुरूजी के पास आता था, उसका हेतु उन्हें मालूम हो जाता था और वे कुछ न कुछ ऐसा सटीक कहते थे जिससे आने वाला अचंभित हुए बिना नहीं रहता था। ऐसा संयोग नहीं अपितु सदैव होता था जिससे लगता है कि गुरूजी मानसिक धरातल पर उस व्यक्ति के साथ एकाकार हो जाते थे।

जब जब शिष्यों के प्राणों पर संकट पड़े हैं और उन्होंने गुरूजी को याद किया है, गुरूजी तत्क्षण वहां पर मौजूद हुए अथवा किसी दूसरे प्रकार से संकट टल गया। ऐसी अविश्वसनीय और आश्चर्यजनक अत्याधिक घटनायें हैं जो प्रायः पूरे गुरू परिवार के अनुभव में आई हैं। गुरूजी जब भी किसी को डांटते थे तो उसके पीछे साधक की भलाई रहती थी। साधक का अहम कम करना ताकि उसकी आध्यात्मिक मार्ग में गहरी पैठ हो, प्रगति हो और हम सचेत हों।

आपसी चर्चा के दौरान अधिकाधिक रूप से श्री गुरूजी के रहस्मय व्यक्तित्व और प्रभाव की बातें सामने आई। डॉ. आचार्य ने गहरी सोच में डूबकर कहा कि उन्हें जो अनुभव हुए हैं, उनका मोटे तौर पर 5000 से गुणा करने पर भी गुरूजी की व्यापकता का अनुमान कठिन होगा। पूज्य गुरूजी की चर्चा के आदान प्रदान का लाभ और उद्देश्य यही है कि स्मरण रहे कि हम आध्यात्मिक मार्ग में एक समर्थ और शक्तिशाली सद्गुरू की छत्रछाया में पल्लवित हो रहे हैं। यह आत्म विश्वास साधना के मार्ग में एक प्रेरक शक्ति है जो धीरे धीरे आंतरिक विकास की ओर ले जाती है।

योगेन्द्र तिवारी जेलर (कोलारस) :– ने अपने भावों को व्यक्त करते हुए बताया कि जन्म जन्मांतर के पुण्यों का संकलन होने पर ही ऐसे सदगुरू की शरण प्राप्त होती है, जो यश और माया से दूर शिष्यों की आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। उन करूणानिधान सदगुरू देव की कृपा पाकर तथ्यों और परिस्थितियों की विवेचना में सकारात्मक विकास के साथ भौतिक उन्नति भी पाई है। ऐसे ब्रह्मानन्द स्वरूप पूज्य गुरूवर की महिमा का बखान सामर्थ्य के बाहर है। पूज्य गुरूजी के स्मरण

मात्र से दुरूह कार्य भी उस समय सहज हो जाते हैं जब हमारा कर्ताभाव रूपी अहंकार अपने हाथ ऊपर कर देता है। पूज्य गुरूजी के रूप में हमें अनंत पिताओं एवं शत कोटि माताओं के सदृश वात्सल्य स्नेह और प्रेम प्राप्त है और उनकी इस कृपा से उऋण नहीं हो सकते।

पूज्य गुरूजी के स्वरूप की तात्विक विवेचना करते हुए बड़ी दृढ़ता से कहा कि गुरूजी अपने शिष्यों की सांसों की सांस में तात्विक रूप से विद्यमान है। पांचों तत्व पूज्य गुरूजी से उत्पन्न होकर गुरूजी में ही लय हो रहे हैं। ईडा, पिंगला, एवं सुषुम्ना सहित दसों महत्वपूर्ण नाड़ियों में एवं पांचों प्राणों में गुरूजी सूक्ष्म रूप से विद्यमान हैं, कुण्डलिनी, महाप्रोक्ता, शब्द ब्रह्मस्वरूपिणी पूज्य गुरूजी की शक्ति है एवं उन्हीं के नियंत्रण में है।

पूज्य गुरूजी को सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता क्योंकि गीता जिन मार्गों की विवेचना करती है वह पूज्य गुरूजी में सन्निहित है, वेद और उपनिषद जिसका चिंतन करते हैं वह पूज्य गुरूजी का ही स्वरूप है। श्रीमद्भागवत के रस प्रवाह में पूज्य गुरूजी की मिठास है, राम और कृष्ण की चरितावली में गुरूजी का ही प्रवाह है, वेदांत जिस ब्रह्म को प्रतिपादित करते हैं, वह परम पूज्य गुरूजी ही है। पातंजलि जिस कैवल्य का लक्ष्य प्रदानकरते हैं वह परमपूज्य गुरु जी में लीन होना ही है। पूज्य गुरूजी के प्रति अविचल भक्ति निरंतरता प्राप्त करती रहे, ऐसी कामना उनके चरणों में हम करते हैं। पूज्य गुरूजी को पाने की तीव्र भावना, श्रद्धा और विश्वास ही हमें उन तक पहुंचाने में सहायक होगी।

शहडोल गुरू परिवार :– जन्म सिद्ध योगी हमारे गुरूदेव मृत्यु लोक के नियमों का पालन करने सद्गुरू की खोज में जब निकले, तब उन्हें कोई योगी नहीं मिला। अतः गुरूजी स्वमेव हैं। साधना के समय ऐसे

योगी जो मुक्तावस्था में वायुमण्डल में भ्रमण कर रहे हैं, आकर गुरूजी को मार्गदर्शन करते थे। सत्मार्ग पर चलने से सहायता करने वाले स्वयं ढूंढते हुए आ जाते हैं। गोदावरी तट पर साधना निमग्न गुरूजी को ऐसी दिव्य शक्तियों ने अयोध्या जाने का मार्गदर्शन किया था जहां श्री रामप्रपन्नाचार्य जी ने पूज्य गुरूजी को रामानुज पंथ संबंधी सुरक्षित रहस्य बताये थे, जिसके फलस्वरूप गुरूजी को आध्यात्म के रहस्यमय शब्द सुनाई देने लगे और पवित्र ग्रंथों के मंत्र और उद्धरण मानस पटल पर उभरने लगे।

ऐसे ही दिव्य संत पेश इमाम ने गायत्री मंदिर में रखे श्रीमद्भागवत के छटे स्कन्द के श्लोकों के अभ्यास से अपने शरीर, मन तथा बुद्धि की रक्षा हेतु नारायण कवच का मार्ग प्रशस्त किया था। मुस्लिम दिव्यात्मा हिन्दु को हिन्दु के धर्मग्रंथ की ओर निर्दिष्ट कर रही है।

आत्म तत्व में लीन पूज्य गुरूजी ने कभी किसी से कुछ नहीं मांगा। जीवन मुक्त दिव्य आत्मायें अपनी इच्छानुसार वायुमण्डल में भ्रमण करती रहती है और साधकों को मार्गदर्शन करती है। ख्वाजा मुईनउद्दीन चिस्ती, संत एकनाथ महाराज, संत रामदास, संत तुकाराम, पाण्डुरंग विट्ठल भगवान का 'तेल्हारा' में आकर साथ स्नान और भोजन ग्रहण करना, मां भगवती का साक्षात् दर्शन, दुर्गा मां का सात फुट लम्बा आकार और पूज्य गुरूजी को बिना याचना के, भोजन के अभाव से कभी पीड़ित नहीं रहने का आश्वासन और उन्हें **"अपने में से एक है"** कहना, हमारे परम पूज्य गुरूजी को, एक अवतार के रूप में सर्व शक्तियों से सम्पन्न जो अपने अनुसार प्रकृति को भी परिवर्तित कर सकते हैं ऐसा सतपुरूष सिद्ध करते हैं, जिनकी कृपा दृष्टि से मानव महामानव बन जाता है।

आत्मज्ञान प्रदर्शन के लिये नहीं है, आत्म उद्धार के लिये है। जिस व्यक्ति ने अपना उद्धार नहीं किया, वह दूसरों का उद्धार कैसे कर सकता है। इसीलिये गुरूजी कहा करते थे कि मैं शिष्य नहीं बनाता, अपने जैसा बनाता हूं और लोगों का आत्म कल्याण करता हूं। गुरूजी की शक्ति कृपा सब पर समान रूप से होती है। गुरूजी जो कहते थे उसका अनुभव भी करा देते थे। गुरूजी सच्चा अहिंसक उसे मानते थे जिसके पास जाने से हिंसक प्राणी की भी हिंसा करने की प्रवृत्ति समाप्त हो जाये जैसे भगवान महावीर के पास जाने से होता था।

डॉ. विद्याकांत त्रिपाठी, व्याकरणाचार्य पी.एच.डी. (पेन्ड्रा रोड)– परमयोगी श्री सद्गुरू भगवान के चरणारविंद में दण्डवत् प्रणाम करते हुए बताया कि उनकी दीक्षा अगस्त माह में मुंगेली आश्रम में हुई थी। दीक्षा काल में पूज्य गुरूजी के आध्यात्मिक विवेचन सुनते हुए तीक्ष्ण प्रकाश के आने से शरीर की सुध बुध शांत हो गई और काफी समय गुरूजी के समक्ष ही दीक्षा के दौरान सो गये। आश्रम से विदा लेने के समय पूज्य गुरूजी ने आशीष देते हुए कहा कि विद्याकांत तुम्हारा जन्म सफल हो गया और आज से तुम्हें अन्न, वस्त्र, पैसा, पद, प्रतिष्ठा की कोई कमी नहीं होगी। यह भी आशीष दिया कि दिव्याम्बु निमज्जन का संस्कृत में अनुवाद करने से उन्हें पी.एचडी की डिग्री मिल जायेगी जिससे तुम्हें ब्रह्म विद्या के काम में लगने से सामान्य विद्यालय से अपर महाविद्यालय/विश्व विद्यालय में अध्यापन का अवसर मिल जायेगा, जिसे निष्ठापूर्वक करना है और मैं सदैव तुम्हारे साथ हूं।

दुर्गा मंदिर पेन्ड्रा की प्राण प्रतिष्ठा व शतचण्डी यज्ञ कराने का सौभाग्य पूज्य गुरूजी की कृपा और आशीष से मिला। अनेकों वृद्ध पंडितों

और बाहर से आये विद्वानों के मध्य इस बालक आचार्य को यज्ञाचार्य का सम्मान मिला। मौके पर गुरूजी भी पधार कर आशीष दे बोले ''तुम्हें सामर्थ्य प्राप्त हो'' और यज्ञान्त तक, जिन मंत्रों को कभी पूर्व में पढ़ा या याद नहीं किया था, उन वेद मंत्रों के साथ यह प्राण प्रतिष्ठा का कार्य निर्विघ्न सम्पन्न होना मात्र गुरूजी की कृपा का प्रतिफल था, जो हमें गुरूदेव के द्वारा दीक्षा के तुरंत बाद मिला था।

गुरूजी की जीवनी दिव्याम्बु निमज्जन का संस्कृत भाषा में अनुवाद एक कठिन कार्य था और अनेकों बार निराशा भी हुई। थोड़ा सा लिखने पर कठिनाई महसूस होती थी और मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हो रोने लगा। गुरूजी का स्मरण किया तो थोड़ी देर में लेखनी फिर चालू हुई और ऐसा लगा मेरे हाथ के ऊपर कोई दूसरा हाथ भी है। शंका में घिरकर उलट पलट कर देखा परंतु शंका समाधान नहीं हो सका। ज्यों ही लिखना शुरू किया, फिर पूज्य गुरूजी की छाया अंतिम लेखन तक अपने हाथ के ऊपर बनी रही और जैसा गुरूजी ने कहा था कि मेरा स्मरण कर लिखते जाओ, मैं सदा साथ हूं और उनकी कृपा से यह अनुवाद कार्य 1995–96 में पूरा हो गया।

जब कभी अपनी पी.एचडी के शोध कार्य को पहले करने का विचार आया, उसमें अड़चनें आती रहीं और अनुवाद का कार्य पूरा होते ही शोध कार्य भी हो गया और पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त हो गई। आज महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर प्राध्यापक एवं व्याकरण विभागाध्यक्ष पर पहुंचना मात्र गुरूजी की अहर्निश कृपा का अनुभव कराती है। पूज्यवर सर्वज्ञ है जिनसे कुछ भी छिपा नहीं है। मुझ जैसे के उद्धारक के श्रीचरणों में हमारी सदैव भक्ति दृढ़ हो यही विनम्र प्रार्थना है। 1989 में कालूपुर ग्राम में गृह निर्माण के मध्य भरी बरसात में खपड़ा का पक जाना,

ऐसी घटना थी जिसने समस्त ग्रामवासियों को पूज्य गुरूजी के चरणों में दृढ़ भक्ति उत्पन्न की और असम्भव को सम्भव बनाने की उनकी शक्ति का अहसास भी सभी ने किया था।

1990 में गर्भस्थ अवस्था में मेरी पत्नी के असहनीय दर्द में गुरूजी को याद किया कि यह कैसे स्वस्थ हो। बंद दरवाजों के बाद भी घर आकर कानों में रूई डाल देना और निरोग हो जाने का आशीष दे जाना (जिसे मेरी पत्नी ने खुली आंखों से देखा) न केवल उनके अन्तर्यामी और दयालु एवं करूणासागर सद्गुरू होने का अपितु हर समय हमें दिये उस आश्वासन कि ''मैं सदा तुम्हारे साथ हूं'', का एक प्रमाण है। इस कृपा के प्रसाददाता को शत शत वन्दन और नमन स्वीकार हो, यही मेरी विनम्र प्रार्थना है।

स्वर्गीय डॉ. व्ही. ए. शिन्दे (ग्वालियर/भोपाल) :– पूज्य गुरूजी के अत्याधिक निकटतम शिष्यों में रहे हैं जिन्हें गुरूजी ने सदैव ''हमारे डॉक्टर साहब'' के नाम से सम्बोधित किया है। अपने 36 वर्ष की सेवाकाल में रीवा की डीन अवधि को श्रेष्ठतम सेवाकाल बताया क्योंकि पूज्य गुरूजी अधिकांश समय उनके पास रहते थे। उनके शब्दों में "Respected Guruji taught and instructed how to surrender and follow "Sahaja-Awastha" and that the divine will is only for good purpose. He further stressed I am convinced God, is simple, kind and listens to you, but, there should be an adept like our respected Guruji to guide and unfold the divine path. डॉक्टर साहब ने बताया कि गुरूजी को शरीर विज्ञानपर इतना अधिक अनुभव था कि उनके अनुभवों को सुनकर लगता था कि गुरूजी कम से कम एम.बी. बी.एस. अवश्य किये हैं। गुरूजी को अपना शरीर एक्स–रे चित्र जैसा

दिखाई पड़ता था। गुरूजी को मस्तिष्क की ऐसी ग्रंथियां एवं तंत्रिकाएं दिखाई पड़ती थीं जिन पर अभी खोज भी नहीं हुई है।

स्वर्गीय श्री मनोहर तेजवानी (रायपुर) :– 12–03–1987 को दीक्षित श्री तेजवानी जी ने पूज्य गुरूजी का निकटतम सान्निध्य पाया, जो उनके द्वारा की गई सेवा का प्रतिफल ही कहा जायेगा। जिस प्रकार जमीन में बीज बोकर पानी से सींचा जाता है और वह अंकुरित होता है, उसी प्रकार पूज्य गुरूजी द्वारा हम लोगों में बोया गया बीज उनकी चर्चा रूपी पानी से सींचा जाकर अंकुरित किया जा सकता है, ऐसा मैं अनुभव करता हूं। चलते फिरते, उठते बैठते, सोते जागते, खाते पीते गुरूजी के आशीष को फलित होते पाता हूं और जिस आनन्द की अनुभूति होती है वह अवर्णनीय और स्थायी ही रहेगा।

डॉ. अरविन्द शर्मा की पत्नी श्रीमती मंजुला शर्मा (बिलासपुर) :– 1985 में दीक्षा हुई उस समय गुरूजी ने उनसे पूछा कि आप किस देवता की आराधना करते हो या किसमें विश्वास है? श्रीमती शर्मा ने शिव भगवान का उल्लेख किया तभी गुरूजी ने उनसे कहा कि मेरी ओर ध्यान से देखो और ऐसा करनेपर उन्होंने पाया कि जटा–जूट चन्द्रमा से युक्त भगवान शिव की प्रतिमा गुरूजी के रूप में विद्यमान है।

डॉ. शर्मा ने एक बार मन ही मन गुरूजी को घर आने का निमंत्रण दिया था। तदनुसार गुरूजी रायपुर में उनके निवास पर रात्रि में गये थे और 2–3 बार अरविन्द को आवाज दी थी। पर माताजी ने कहा वह तो बिलासपुर में हैं। गुरूजी वापिस लौट गये और कहा कि अरविन्द को बता देना मैं आया था। मन की बात गुरूजी सुन लेते थे। यह तो अनेकों शिष्यों के साथ अनेकों बार हुआ है।

श्रीमती शर्मा प्रसव हेतु अस्पताल में भर्ती थीं और उनका स्वास्थ्य बहुत खराब और चिन्ताजनक स्थिति में था। डॉक्टर शर्मा काफी परेशानी में गुरूजी को याद करते रहे। उस समय पूज्य गुरूजी जैसा स्वरूप उस अस्पताल में कमरे के बाहर रात में भी और जब तक प्रसव नहीं हो गया, सुबह भी, चहल कदमी करते रहे। यह बात डॉ. शर्मा ने भी 2–4 बार ध्यान से देखी थी कि कोई सज्जन बाहर से खिड़की के जरिये झांकते थे। ऑपरेशन से होने वाला शिशु बिना किसी परेशानी के हो गया, तभी गुरूजी वापिस आये।

डॉ. शर्मा जब मुंगेली गये तब गुरूजी की तस्वीर देखकर उन्हें इस बात का अहसास हुआ कि रात में और सुबह अस्पताल में टहलने वाले ये तो गुरूजी ही थे, अन्य और कोई नहीं। कृतज्ञता ज्ञापन की क्षमता भी डॉ. शर्मा के पास नहीं थी। पूज्य गुरूजी से उन्हें संकट से निकालने पर मात्र यही आशीष मांगा कि पूज्यवर के चरणों में प्रीति रहे और उनके आशीष से वास्तविक लक्ष्य की प्राप्ति हो।

अश्विनी कुमार तिवारी (बिलासपुर) :– केन्द्रीय रेशम बोर्ड में सहायक निर्देशक के पद पर बिलासपुर में 1990 से थे। 1993 में कोसा कृमि पालन कार्य जंगल में कराया जा रहा था। पतझड़ और पत्तियों की कमी के कारण कीट पालन का कार्य मुश्किल होता जा रहा था। मन ही मन अपनी समस्या गुरूजी से कहीं, पर बताने का साहस नहीं हुआ। गुरूजी से बिना कहे बिलासपुर लौटकर कार्य क्षेत्र में जाकर कर्मचारियों से जानकरी ली कि कितना कोसा उत्पादन होगा, जिसका जवाब उन्हें 10000 तक हो जाने का कहा गया। कटाई होने पर 20000 कोसा फल कट गया और जंगल में पर्याप्त कोसा और कीट दिखाई पड़ रहा था तथा और 20000 कोसा फल निकल आयेगा, ऐसा लगने लगा था।

कार्य समाप्त होने पर पूरा 70000 कोसा फल का उत्पादन उस जंगल में हुआ, जहां 10000 की उम्मीद थी। यह सब मन ही मन गुरूजी को समस्या बताने का सुखद परिणाम था। मुंगेली जाने पर गुरूजी से जैसे ही साक्षात्कार हुआ तो गुरूजी ने पूछा आपके जंगल की फसल कैसी रही और साथ ही तिवारी जी को उनकी मेहनत पर आशीष भी दिया।

स्वर्गीय डॉक्टर ओमबाला शिन्दे (ग्वालियर) :– सन् 1981–82 में ध्यानावस्था में मुझे श्री दत्त भगवान सशरीर दिखे। देखा कि मेरे पति (बुआ साहब) आंखें बंद किये उनकी पूजा कर रहे हैं, तभी मैंने उनसे कहा ''आप आंख खोलकर भगवान के दर्शन क्यों नहीं करते, साक्षात् भगवान आपके सामने हैं।''

वास्तव में मेरे पति कोल्हापुर में थे। जैसे ही मेरी आंख खुली मैंने ट्रंक कॉल किया तब पता चला कि मेरे पति दत्त भगवान के ही दर्शन करने मंदिर गये हैं। इस घटना के दस वर्ष बाद लगभग 1990–91 में गुरूजी ने मुझसे कहा कि–

''उन दिनों जब तुम सोयीं थीं, कोई दिखे होंगे।''

मैं असमंजस में पड़ गई कि किसे शीश नवाऊं, दत्त भगवान को या गुरूजी को, जिन्होंने भगवान के दर्शन कराये।

एक बार ओस्टियो–आर्थराइटस के कारण दाहिने कंधे में अत्याधिक कष्ट होता था। हर तरह का इलाज बेअसर होने पर गुरूजी को पत्र द्वारा लिखकर अपनी तकलीफ बताई। दूसरे ही दिन इस महीनों पुराने दर्द से मुक्ति पाकर मैं हैरान थी। बाद में गुरूजी ने डॉक्टर शिन्दे द्वारा पत्र लिखवाया कि दर्द तो तुम्हारा कुछ दिन पूर्व ही कम हो गया होगा। अन्तर्यामी पूज्य भगवान गुरूजी को मेरा बारम्बार प्रणाम, नम्न शत् शत् वन्दन।

शिवचन्द्र झा (दुर्ग) :– दीक्षित होने के पूर्व पूज्य गुरूजी के पास मन में प्रश्न लेकर जाते थे पर पूछने की जरूरत नहीं पड़ती थी क्योंकि प्रसंगवश जो गुरूजी बतलाते थे वही मेरे प्रश्नों के उत्तर होते थे। एक बार गुरूजी ने मेरी पीठ को तीन बार ठोंक कर आशीर्वाद दिया और बतलाया कि आप माता के भक्त हैं और मां आपकी इच्छा जल्द ही पूरी करेंगी।

इसके पूर्व मुझे यह ज्ञान नहीं था कि मैं मां का भक्त हूं। किन्तु धन्य हैं गुरूजी उन्होंने अपने शिष्य को पहचाना तथा उसकी शक्ति का भान भी उसे कराया। योगी के वचन की सिद्धि होती है। उसके बाद ही मेरी दीक्षा 22 जुलाई 87 को हुई। उसके बाद ध्यानावस्था में सिंहवाहिनी दुर्गा, कृष्ण जी, शंकर भगवान का दर्शन हुआ। आकाश में हनुमान जी का भी दर्शन हुआ। सतत् नयन बन्द करके ही स्वर्णिम संसार का दर्शन होने लगता है।

पूज्य गुरूजी ने बताया कि आप संज्ञात समाधि में रहते हैं जो एक अच्छी स्थिति है, परन्तु सावधानी बरता करें। आपको जो पाना था वह आप पा चुके हैं, बाकी जो प्रारब्ध है, वह भोगना पड़ेगा। पूज्य गुरूजी की कृपा से सभी चक्रों और सहस्त्रार का प्रत्यक्ष दर्शन हो चुका है। उन्हीं की कृपा से ध्यानावस्था में अमृत रस का निरन्तर गले में श्राव होता रहता है और उन्हीं के चरणों में प्रार्थना है कि हमें सदैव अपनी शरण में रखें।

स्वर्गीय श्री वी.एस. भटजीवाले (इन्दौर) :– की गुरूजी द्वारा दीक्षा सन् 1982–83 में हुई थी। उनके छोटे बेटे राजीव के विवाह के लिये गुरूजी को भटजीवाले वर्धा से लेकर आये थे और 23–02–1987 को शादी होना थी। शादी की चहल–पहल और शोर शराबे से दूर रखने को

उन्होंने गुरूजी को अपनी बेटी अलकाजी के यहां भिजवा दिया था। पूज्य गुरूजी को पूर्वाभास हो चुका था कि यमराज श्री भटजीवाले के प्राण ले जाने की तैयारी में हैं। अतः अलका के घर जाने के पूर्व दोनों पति–पत्नी को, जिन्हें गुरूजी ''भाऊ और ताई'' कहते थे, बैठाकर कुछ मन्त्रोच्चारण करके एक शाल भाऊ को ओढ़ा दी जो उनके लिये ''रक्षा कवच'' था।

रात में तीन बजे सीने में दर्द और बैचेनी बढ़ी और सुबह 23–02–87 को डॉक्टरों के परीक्षण से पता चला कि उन्हें ''हार्ट अटैक'' आ चुका था और तुरंत अस्पताल ले जाया गया। डॉक्टर अपनी लाचारी बता चुके थे ओर स्पष्ट तौर पर कह चुके थे कि ये कुछ समय के मेहमान हैं और इन्हें बचा पाना हमारी शक्ति के बाहर है। बड़ी दृढ़ता से गुरूजी ने कहा था कि डॉक्टरों से कहें कि वे अपना इलाज जारी रखें और दूसरी ओर सभी शिष्य, जो शादी में आये थे, उन्हें बुलाकर अपना अपना पुण्य दान करने को कहा। तीसरी ओर यमराज भी उन्हें ले जाने को अडिग था। पूज्य गुरूजी को श्री भटजीवाले की स्थिति चिंतित कर रही थी। गुरूजी ने वर–वधू को आशीष देकर अस्पताल पहुंचकर कमरे से सभी को बाहर करके, दरवाजा बन्द कर लिये। क्या किया उस अवतारी महामानव ने यह कोई नहीं जानता परन्तु यमराज खाली हाथ लौट गये और श्री भटजीवाले स्वस्थ होने लगे।

डॉक्टर भी आश्चर्य चकित हो वह सब देख रहे थे जो विज्ञान की सीमा के बाहर व अनहोनी जैसा था। ताई ने जब अपना आभार व्यक्त किया, तब गुरूजी ने कहा ''ताई यह मेरी परीक्षा थी'' और उनका गला भर आया और आंखों से आंसू बह निकले। श्री भटजीवाले ने जीवन को बचाने के लिये गुरूजी से प्रार्थना की कि मेरा मन निरन्तर आपके

मंगलमय गुणों का ही स्मरण और गान करता रहे और यह शरीर आपकी सेवा में लगा रहे। कृपया आप मुझे अपने चरणों का आश्रय दें।

श्री एन.एस. पाण्डेय (दुर्ग) ने 1992 के उद्‌बोधन में लिखा है कि ध्यान का मूल गुरू की मूर्ति हैं। पूजा का मूल गुरू के चरण हैं, मंत्रों का मूल गुरू का वाक्य है और मोक्ष का मूल गुरू की कृपा है। दीक्षा गुरू केवल एक ही होता है, जो मोक्ष की ओर ले जाता है। गुरू का जीवन एक जीवन्त धर्मोपदेश है। गुरू–भक्ति की नींव गुरू के प्रति पूर्ण श्रद्धा पर आधारित है। ईश्वर कृपा गुरू का रूप धारण करती है। हमें सदैव गुरू की मूर्ति का ध्यान, गुरू के पवित्र नाम का जप तथा उनके आदेशों का पालन समर्पित भाव से करना चाहिये।

शरद मंदसौर वाले (ग्वालियर) :– ने गुरू पूजा से वापिस जाते समय पूरी स्पीड में ट्रेन चलने पर पकड़ने की चेष्टा की और उनका पैर फिसल गया तथा प्लेटफार्म और डिब्बे के बीच गिरने वाले थे, तभी गुरूजी को याद किया और आश्चर्य चकित हो गये कि किसने उन्हें डिब्बे के अंदर बैठा दिया। कुछ भी समझ में नहीं आया। ट्रेन काफी स्पीड में थी। गुरूजी की कृपा और आशीर्वाद से संकट टल गया और उन्हें ऐसा लग रहा था कि किसी ने उन्हें उठाकर ट्रेन में बैठा दिया था। पूज्य गुरूजी के चरणों में सदैव बंधा रहूं बार–बार यही बात मन में दोहरा रहा था।

डॉ. अरविन्द चौहान (भोपाल) :– ग्वालियर में 25–26 वर्ष के मरीज का इलाज कर रहा था, जिसकी किडनी फैल हो गई थी, पेशाब बनना कम हो गया था और उसे डायलिसिस पर रखना तय हुआ। मरीज के पिताजी मेरे पास आकर बोले मैं बहुत गरीब हूं, शिवजी की पूजा के बिना मैं अन्न जल भी नहीं लेता और मेरा बेटा मौत से जूझ रहा है। घर के जेवर बेचकर इलाज के लिये आया हूं और भगवान से प्रार्थना करने

लगा कि हे भगवान मेरे बेटे को बचाकर मुझे ले ले।

उसकी दशा देखकर मैं द्रवित हो गया और अपने क्लीनिक में लगी गुरूजी की फोटो की तरफ इशारा करके कहा कि ''तुम तो इनके चरणों में प्रणाम करके जो कुछ कहना है इनसे कह दो, गुरूजी रक्षा करेंगे''। वह प्रणाम करके चला गया। मरीज के मामा ने अस्पताल में निद्रा अवस्था में देखा कि आधी रात कोई वृद्ध पुरूष मरीज के सिर पर हाथ रखकर बोले–चिन्ता मत करो, तुम ठीक हो जाओगे और अदृश्य हो गये। गुरूजी की कृपा से 2 दिन में मरीज ठीक होकर चला गया। मरीज और मरीज के पिताजी गुरूजी को नहीं जानते।

गुरूजी के शिष्य डॉ. चौहान का अटूट विश्वास और गुरूजी के प्रति अपनी श्रद्धा और आस्था के प्रतीक से उत्पन्न उनका मरीज के पिताजी को सुझाव देना और मरीज का ठीक हो जाना गुरूजी द्वारा अपने शिष्य की उस भक्ति आस्था और विश्वास की रक्षा का प्रतिफल था। धन्य है मानव रूप में यह अवतारी महान आत्मा जिनके हम शिष्य बनने का गौरव पा सके।

डॉ. धारकर साहब (ग्वालियर) :– (न्यूरोलॉजिस्ट) अमेरिका से इन्दौर में एक विवाह में सम्मिलित होने आये थे। गुरूजी से उनकी चर्चा मस्तिष्क संबंधी माइक्रोस्कोपिक रचना, उसके निर्माण एवं कार्य के बारे में हुई। तब डॉ. धारकर ने कहा आपने जो जानकारी दी है, यह विज्ञान जगत आज तक इससे अनभिज्ञ हैं। उसी समय डॉ. धारकर ने अपनी कार रोककर गुरूजी के चरणों में नतमस्तक होकर दीक्षित होने की प्रार्थना की तथा गुरूजी ने कार में ही बैठे बैठे सड़क पर वाहन रोककर डॉ. धारकर जी को दीक्षा देकर कृतार्थ किया था। (सन् 1986–87)।

पूज्य गुरूजी में दिव्य ज्ञान की पराकाष्ठा थी। मस्तिष्क की रचना की बारीकियों का विश्लेषण वहीं दिव्य पुरूष कर सकता है जो सर्व शक्तिमान और स्वानुभव किया हुआ हो। कार में बैठे बैठे दीक्षा देकर शिष्यत्व प्रदान करना अपने आपमें एक विरली घटना का उल्लेख अवश्य प्रेरणादायक होगा।

श्री चन्द्रसेन रोमन (ग्वालियर) :– 23 जुलाई 1997 को दीक्षित हुए थे। 19–03–2001 में दिल्ली नोएडा में पिताजी की तबियत एकाएक खराब हुई, दिल का दौरा पड़ा था। चूंकि अटैक गम्भीर था और डॉक्टरों ने सलाह दी कि आप जिसको बुलाना हो बुला लें, पिताजी का बचना कठिन है। सभी को फोन पर सूचना देने के बाद अस्पताल के बरामदे में बैठ सतत रो रहा था। तभी गुरूजी की फोटो के समक्ष प्रार्थना की कि पिताजी को बचा लीजिये और गुरूजी के ध्यान में सो गया।

रात में अचानक गुरूजी के दर्शन हुए और कहा रोते क्यों हो, मैं हूं न तुम्हारे साथ, तुम्हारे पिताजी को कुछ नहीं होगा। मैं उन्हें साथ लेकर ग्वालियर चलूंगा। इतना कहकर गुरूजी अर्न्तध्यान हो गये। मेरी नींद खुली, रात के 4 बजे थे। 20 मार्च को सभी रिश्तेदार ग्वालियर से आ गये।

तभी डॉक्टर आये और कहा चमत्कार हो गया। मेरी जिन्दगी का प्रथम केस है जिसमें मरीज की तबियत इतनी अधिक एकाएक खराब हो और एकदम से सब नार्मल हो जाये। उनका हीमोग्लोबिन सामान्य होने लगा, पेशाब भी बनने लगी। गुरूजी की एकाएक याद आई कि उनकी कृपा दृष्टि से यह सब सम्भव हुआ जिसे याद कर अश्रुधारा बहने लगी और पिताजी को लेकर ग्वालियर आ गये। हम गुरूजी के चरणों में नतमस्तक होकर प्रार्थना करने लगे कि आपकी कृपा सदैव हम पर बनी रहे।

कुमारी कीर्ति राठौर (इन्दौर) :– 16–03–1983 को पूज्य गुरूजी से मेरा साक्षात्कार इन्दौर में स्वर्गीय श्री भटजीवाले रिटायर्ड न्यायाधीश के घर पर जब हुआ तो मेरी उम्र 16 वर्ष थी। सद्गुरू क्या होते हैं एवं कुडलिनी जागरण की विधि सद्गुरू के माध्यम से प्राप्त होती है, ऐसी मुझे जानकारी थी एवं मेरी रूचि भी थी। पूरे परिवार सहित हम श्री भट्टजीवाले साहब के यहां पहुंचे। श्री गुरूजी ने बड़े ध्यानपूर्वक हम सभी को देखा। मैं गुरूजी के ठीक सामने बैठी थी। मैंने उनकी ओर देखा तो वे दिव्य चक्षु से बड़ी ही गंभीर मुद्रा से देख रहे थे। मैंने पहली बार में ही उनकी आंखों की शक्ति को देख लिया था। उनकी आंखें साधारण न होकर जैसे कुछ जांच रहीं हो, एवं उनकी आंखों की पुतलियों में हरे रंग के प्रकाश की धारियां, गोल चक्र में दिखाई दीं। उन्होंने उन हरी धारियों की पुतलियों को सामान्य आकार से बड़ा करके देखा और कहा कि जिनको दीक्षा लेनी हो, वो ही इस कमरे में रहे एवं जिनको दीक्षा नहीं लेनी हो, वे कमरे से बाहर चले जाएं। मुझे लगा कि वे मुझे दीक्षा नहीं देना चाहते, इसीलिए ऐसा कहा है। मैं कमरे से बाहर चली गई। आदरणीया बुआजी आईं एवं मुझे फिर से कमरे में लाकर बैठा दिया। हार–फूल, चरणों की पूजा से दीक्षा शुरू हुई। श्री गुरूजी ने आर्शीवचन दिये एवं कहा कि इन्हें याद कर लो। सभी को कॉपी में लिखवा दिये, कि विद्या विदुषी भवः, कला विदुषी भवः, आत्म विदुषी भवः, आनन्द मंगल भवः। और कहा कि रोज ध्यान करते समय गुरू चरणों में प्रणाम के बाद इन आर्शीवचनों को कान में सुनना, आवाज सुनाई देगी। फिर कहा कि मैं आपके सामने बैठा हूं। आप लोग ध्यान से मेरे शरीर को देख लीजिए एवं जो भी पसंद आये, उसी का ध्यान रोज पूरे दिन में से भले ही आधे मिनिट का ध्यान कीजिए, परन्तु रोज कीजिए। यह जुड़ता चला जाता है। फिर ध्यान करवाया, फिर पूछा हरेक से कि क्या दिखा?।

श्री गुरूजी मुझसे कहा करते थे कि कीर्ति तुम्हारा काम है, रोज आना एवं वहां, बैठना और मैं भी रोज समय निकालकर जाती एवं सभी आने जाने वाले शिष्यों के वार्तालाप सुनती। 1994 फरवरी में मेरी सर्विस लगने के दो महीने बाद गुरूजी इन्दौर आये एवं मुझे कुक्षी से बुलाया गया कि गुरूजी आये हैं। मैं इन्दौर आई। हर बार की तरह सब कुछ सामान्य था। परन्तु वे सम्भवतः किसी विशेष उद्देश्य से आये थे, परन्तु उन्होंने उस उद्देश्य को फिर भविष्य के हाथों सौंप दिया। हो सकता है, कि उस समय उनके उद्देश्य का उचित समय नहीं आया हो, या फिर अन्य कोई कारण रहा हो। वे सद्गुरू की परंपरा को आगे बढ़ाना चाहते थे। आज भी पूरी तरह से हम सभी उनकी आंखों की दृष्टि के सामने ही अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उनकी हर आने वाले क्षण पर दृष्टि है। कभी कभी वे बड़े भावुक होकर कहते थे कि अरे गुरूजी सक्षम हैं, कभी भी कोई भी बात हो तो गुरूजी को याद करना, अरे भाई, गुरूजी सक्षम हैं। आप याद तो करिये, आपका कार्य अवश्य होगा। कभी कभी उनका मूड बहुत अच्छा होता तो गाना भी सुनाते थे, उनका पसंदीदा गाना था–

मन रे तू काहे न धीर धरे, जो निर्मोही मोह न जाने, किनका मोह करे। जन्म मरण का मेल है, सपना, ये सपना बिसरा दे, कोई न संग मरे। मन रे, तू काहे ना धीर धरे।

वे कहते थे कि इस गाने के बाद वे थियेटर से बाहर आ गए, आगे की फिल्म नहीं देखी। गुलाब के फूल उनको सबसे अधिक प्रिय थे, कहते थे कि इनको मेरे सिरहाने रख दो, अच्छी खुशबू आती है।

एक बात और जो वे जोर देकर कहते थे कि कोई ये ना समझे कि वो दूसरों के लिए कर रहे हैं, सब अपना अपना ही करते हैं एवं ये बात

तो तय है कि जो करेगा, वह चक्रवर्ती ब्याज सहित पायेगा। यह बात बिलकुल सत्य है। सब कुछ अपने आप होता है, प्रकृति अपने गुणों में वर्तती है, लेकिन दिव्य शक्तियां अपने स्थान पर यथा संभव सहायता करती हैं एवं साथ ही साथ अपनी उपस्थिति भी दर्शाती है एवं किसी न किसी संकेत के साथ, अथवा शुभ लक्षणों के साथ भविष्य की घटनाओं के बारे में जानकारियां देती ही रहती हैं। ऐसा मेरे अनुभव में आता है।

कीर्ति राठौर पूज्य गुरूजी की बहुत पुरानी शिष्या हैं और उन्हें आध्यात्मिक जगत के बहुत अनुभव भी हुए हैं। आपने बताया सद्गुरू जी के मार्गदर्शन में प्रतिदिन ध्यान करने से भक्ति दृढ़ होती चली जाती है। नाना दृश्य, दर्शन, प्रकाश स्वरूप सामने आते हैं और सांसारिक कार्यों में भी सफलता प्राप्त होती है। पूज्य गुरूजी की ओर से सदैव प्रेम की, ज्ञान की एवं प्रकाश की अविरल धारा बहती रहती है। गुरूजी को आपने अखण्ड ब्रह्माण्ड की साक्षात चेतन शक्ति निरूपित करते हुए बताया कि हम सभी शिष्य उनकी कृपा पात्र बने हुए हैं।

श्री वीरचन्द्र जैन पेण्ड्रा रोड (बिलासपुर) :– सद्गुरू कृपा से 1986 महावीर जयंती के दिन गुरूजी का ध्यान कर रहा था। कुछ देर बाद करोड़ों सूर्य प्रकाश की ज्योति प्रगट हुईं। देखते–देखते पूज्य गुरूजी प्रगट हो गये। मैं इनके श्री चरणों को पकड़कर लिपट गया। मैं देखता हूं गुरूजी ऊपर आकाश मार्ग में उड़ते जा रहे हैं मैं उनके चरणों से लिपटा हूं, अनायास मेरे मुंह से निकलता है

बांह छुड़ाए जात हो निर्बल जानकर मोय।
हृदय से जब जाइयो, सबल जानहू तोय।।

मैं भी गुरूजी के साथ ऊपर उड़ा जा रहा हूं। देखते देखते एक गुफा में प्रवेश हुआ। जहां ज्योति ही ज्योति थी, चौबीस तीर्थंकर चारों ओर थे, भगवान महावीर स्वामी बीच में विराजमान थे। आशीर्वाद स्वरूप हाथ उनका उठा हुआ था। बड़ा अच्छा लग रहा था। देखते देखते गुरू जी बीच में आते हैं, कहते हैं, दर्शन कर लो, दिव्य लोक में भगवान विराजमान हैं। मेरे झर–झर आंसू गिर रहे थे, गुरूजी मन्द–मन्द मुस्कुरा रहे थे। यह अनुभूति काफी देर तक रही मैं बेसुध जैसी अवस्था में था। आज भी जब मैं मंदिर में भगवान का अभिषेक करता हूं मुझे गुरू चरण दिखाई देते हैं और उनके श्री चरणों में धारा जा रही है ऐसा आभास होता है।

गुरू स्वरूप नीर निधि से धीर हो, गुरू बने गंभीर।
पूर्ण तैरकर पा लिया, भव सागर का तीर।
अघोर हूं मुझे धीर दो, सहन करूं सब पीर।
चीर चीर कर चिर लिखूं, अन्तर की तस्वीर।

अब हमारी नैतिक जिम्मेदारी उत्पन्न हो गई है। हमें गुरूजी ने आत्मरति का नहीं आत्मक्रीड़ के संस्कार दिये हैं। इसे ध्यान में रखते हुए गुरु के बताये मार्ग के अनुसार समाज में हमें जाना होगा, तभी ऋण से उऋण हो पायेंगे। यही शाश्वत सत्य है।

सद्गुरू पूजा

सद्गुरू आगम चैत्य चैत्यालय शरण को पा लिया
भव सिंधु पार उतारने, नौका सहारा ले लिया
है भावना मेरी गुरू, मम ज्ञान महल पधारिये
निज सम बना लीजे मुझे, जिन राज पदवी दीजिये

सुखदाता गुरू देवता, तिष्ठो हृदय मंझार
भावों से आह्वान करूं, करो भवोदधि पार

ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरू अत्र अवतर अवतर संवौष्ट आव्हाननं।
ऊँ श्री सद्गुरू अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठःस्थापनं
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरू अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधकरणं

जिनको अपना माना, उनसे ही दुख पाया
फिर भी क्यों राग किया, यह समझ नहीं आया
यह राग की आग मिटे, ऐसा जल दो स्वामी
गुरूदेव शरण आया, शरणा दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरेभ्यैः जन्म जरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु काल अनादि से, भव का संताप सहा
अब सहा नहीं जाता, यह मेटों द्वेष महा
इस द्वेष की वैतरणी, से पार करो स्वामी
गुरूदेव शरण आया, शरणा दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरूभ्येः भव ताप विनाशनाय चन्दमं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसको मैंने चाहा, सब नश्वर है माया
जिस तन में हूं रहता, क्षण भंगुर है वह काया
क्षत विक्षत जग सारा, अब जाऊँ कहा स्वामी
गुरू देव शरण आया, शरणा दो जगनामी
ऊँ ह्री श्री सद्गुरेवेभ्यैः अक्षत पद प्राप्तयैः अक्षतां निर्वपामीति स्वाहा।

इस काम लुटेरे ने, आतम धन लूट लिया
मैं मौन खड़ा निर्बल, बस तेरा शरण लिया
विश्वास मुझे तुम पर आतम बल दो स्वामी
गुरूदेव शरण आया, शरणा दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरेवैभ्यः काम वाण विघ्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

इस क्षुधा रोग से मैं, गुरूवर लाचार रहा
व्यंजन की औषधि खा, न कुछ उपचार हुआ
गुरू तू ही सहारा है, यह रोग नशे स्वामी
गुरूदेव शरण आया, शरणा दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरूरेभ्यः क्षुधा रोग विनासनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की आंधी में, चेतन गृह बिखर गया
अब आया दर तेरे, निज आतम निखर गया
शुभ ध्यान अनल में ही, वसु कर्म जले स्वामी
गुरू देव शरण आया, शरणा दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरूरेभ्यः मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की आंधी में, चेतन गृह बिखर गया
अब आया दर तेरे, निज आतम निखर गया
शुभ ध्यान अनल में ही, वसु कर्म जले स्वामी
गुरूदेव शरण आया, शरणा दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरूवेभ्यः अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पापों की बीज बोया, कैसे शिवफल पाऊं
तप धारूं पाप नशे, तब सिद्ध शिला पाऊं
मुझे पास बुला लेना, यह अरज सुनो स्वामी
गुरूदेव शरण आया, शरण दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरेवेभ्यः मोक्ष फल प्राप्तयैः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु कर्मों ने मिलकर दिन रात जलाया है
गुरूदेव कृपा पाकर, यह अर्ध्य बनाया है
यह पद अनर्ध्य अनमोल, हो प्राप्त मुझे स्वामी
गुरूदेव शरण आया, शरण दो जगनामी
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरेवेभ्यः अनर्ध्य पद प्राप्तये अर्ध्य निर्वपामीति स्वाहा।
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरेवेभ्यः नमः।

जयमाल

काज भंगुर सारा जग जाना, जड़ चेतन भिन्न पिछाना
प्रभु आपने प्रभुता पाई, दो हमको समता सुखदाई
दुष्ट कर्म ने मुझको घेरा, निज स्वभाव से मुख को फेरा
गुरू आप सिद्धालय वासी, दर दर मैं भटका जगवासी
अब मिज भूल समझ में आई, सिद्ध दशा ही मन में भाई
करो नमन स्वीकार हमारा, भव सागर से करो किनारा
कर्म भंवर में मेरी नैया, गुरूवर तुम बिन कौन खिवैया
गुरूदेव को शीश झुकाऊँ गूंण गाऊं और ध्यान लगाऊं
रहूं सदा मैं गुरूवर चरणा, भव भव मिले आपकी शरणा
पूर्व पुण्य से हो रहा, श्री सद्गुरू का दर्श।
अल्प बुद्धि कैसे लहें, अनंत गुण का स्पर्श।
ऊँ ह्रीं श्री सद्गुरेवेभ्यः जय माला पूर्णाघम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्री ओ.पी. शर्मा (बड़कऊ) इन्दौर :— श्री गुरूजी के संबंध में कुछ लिखने के लिए कहा गया है। बार बार सोचता हूं कि लिखूं, परन्तु बहुत ही कठिन कार्य है। अन्यत्र तो कुछ भी लिखा जा सकता है परन्तु परम श्रद्धेय गुरूदेव के प्रति वही बात लिखी जा सकती है जो स्वयं की ईमानदारी से व्यक्त हुई हो, मौलिक हो और अनुभव सिद्ध सत्य बात हो। यदि हमारे गुरूजी केवल साधारण मानव होते, तो मैं बड़ी आसानी से लिख सकता था पर श्री गुरूजी मानव तो क्या देवों से भी उच्च अवस्था के हैं। वे जिस पद पर स्वयं अपनी साधना और त्याग तथा तपस्या के बल पर प्रतिष्ठित हुए हैं वह वर्णनातीत है। वह पद अनादि अनंत, अचिन्त्य है, तर्क और वाणी से बहुत परे हैं। और क्या कहें कल्पना से भी परे हैं। अतः मैं अपनी सीमा समझता हूं, परन्तु आदेश हुआ है कि श्री गुरूजी के निकट बहुत समय तक रहे हो, अतः कुछ तो लिखना पड़ेगा। अस्तु।

परम पूज्य गुरूजी से प्रथम बार मैं वर्ष 1980 में मिला और प्रथम दर्शन के एक माह के भीतर ही सपत्नीक दीक्षा प्राप्त की। वर्ष 1980 से 1992 तक मैं बिलासपुर जिले में ही पेण्ड्रा रोड, लोरमी आदि जगहों पर पदस्थ रहा। पूज्य श्री गुरूजी से भेंट होती रहती थी और उनका आगमन भी हमारे निवास पर होता रहा। यह परम सौभाग्य ही था हमारा कि उनका सत्संग प्राप्त होता रहता था।

पूज्य गुरूजी 1982 में सितम्बर माह में मुंगेली में डॉ. गिरीश पांडे के यहां विराजमान थे। उनके पास गया तो सबकी कुशल क्षेम पूछकर आशीष दिया और उसके बाद डांटना शुरू कर दिया। इस समय 'चरमोत्कर्ष' वाली स्थिति गुरूजी की थी। आंख मूंदकर बैठे हों, वाह वाह,

ऐसे ही ज्योति दर्शन हो जायेगा? रस गुल्ला है जो खा लिये? फिर बोले Are you ready to give up all that you have? Are you ready to leave all this? your family and belongings and then come to me? can you... can you do this....? आज्ञा लेकर जाने लगा तो डांट भी मिली और आशीष भी मिली। बस द्वारा अपने निवास लोरमी पहुंचा। एक दिन मामी जी बच्चों को समझा रहीं थीं, पानी झूठा मत कर देना कहीं गुरूजी आ जाये तो? और उसी समय घर के सामने गुरूजी जीप से उतर कर आ गये और बरामदे में टूटी खाट पर बैठ गये। खाट घर के नौकर अन्तुराम की थी और मैंने उसे तुम कहकर सम्बोधन किया तो गुरूजी फिर डांटे और कहा 'तुम' मत बोलिये 'आप' बोलिये। मामीजी गुरूजी से एकाएक बिना सूचना आने के पूछने पर कि कैसे आ गये। गुरूजी ने कहा जैसे भक्त के घर भगवान चले आये। हमें धन्य करके भगवान आये और मुझे संजीवनी मरहम लगाकर विदा हो गये।

1987 में पेन्ड्रा रोड में पूज्य गुरूजी पधारे हुए थे और हमें उनकी सेवा का अवसर उनकी कृपा से बहुत बार मिला है। उनके गूढ़ प्रवचनों का लाभ हमें सदैव मिलता रहा है। एक ओर जहां गुरूजी आध्यात्म के रहस्य अनावृत करते थे, वहीं दूसरी ओर शिष्यों को लोक व्यवहार भी आचरण में ले आकर समझाते थे। बड़े प्रभावशाली और सुन्दर ढंग से बताते थे कि वेदान्त और व्यवहार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक के बिना दूसरे का निर्वाह नहीं है। परम पूज्य गुरूजी ने वैयक्तिक नीति, कौटुम्बिक नीति, सामाजिक नीति और राष्ट्रीय नीति जैसे विषयों पर समय समय पर सारगर्भित शिक्षायें न केवल दीं बल्कि अपने आचरण और व्यवहार से उपदेशित भी किया है।

वर्ष 1992 में मेरा स्थानांतरण दूर खण्डवा में हो गया। हम लोग विह्वल और व्याकुल हो गये थे। तब गुरूदेव ने कहा था कि बड़कऊ, तुम जहां भी रहोगे मैं वहां आऊंगा। वर्ष 1993 में उनके पेट का बड़ा ऑपरेशन भिलाई में हुआ था और उसके बाद वह कई महीनों स्वास्थ्य लाभ करते रहे। अतः लम्बी यात्राएं नहीं कर सके। किन्तु वर्ष 1994 में वे खण्डवा आये थे। वर्ष 1996 में भी दूसरी बार उनका खण्डवा आगमन हुआ था।

मुझे वह दिन याद आता है जब गुरूजी अमरावती से कार द्वारा धारणी होते हुए खण्डवा पधारे थे। यह कल्पना ही की जा सकती है कि कैसे माह अप्रैल मई की भीषण गर्मी में कच्चे पक्के रास्तों से अपनी फियेट कार से पूज्य गुरूवर दोपहर करीब डेढ़ बजे खण्डवा मेरे निवास पर पहुंचे थे। साथ में थे पूज्य अशोक भैया सपरिवार तथा वाहन चालक के रूप में श्री जे.के. जैन साहब भोपाल वाले। इतनी कष्टप्रद यात्रा करीब 86 वर्ष की उम्र में बड़े ऑपरेशन के बाद–भीषण गर्मी कच्चा उबड़ खाबड़ रास्ता, 45 डिग्री तापमान फिर भी गुरूजी आये, ऐसा क्यों? क्योंकि उन्होंने रायपुर के डॉ. आचार्य जी के यहां कहा था, बड़कऊ मैं तुम्हारे यहां सशरीर आऊंगा (दिव्य स्वरूप में तो सदा ही सबके साथ रहते हैं) चाहे मेरी लाश ही क्यों न आये पर आऊंगा। गुरूजी करीब तीन सप्ताह रहे फिर इंदौर होते हुए भोपाल पहुंचे थे।

गुरूजी की खण्डवा की दूसरी यात्रा फरवरी 1996 में हुई थी, पर एक सप्ताह ही रूके थे। वर्ष 1997 में भोपाल में गुरू पर्व के समय भी खण्डवा आने की बहुत योजना एवं प्रयास किये थे परन्तु स्वास्थ्य के कारण संयोग नहीं बन सका था।

14 मार्च 1998 को शरीर छोड़ने तक करीब 18 वर्ष उनकी छत्रछाया में प्रत्यक्ष सत्संग मिला और अब क्या चाहिये। इतने अधिक प्रसंग, घटनाएं वार्ताएं, शिक्षाएं, विनोद एवं व्यवहारिक दिशा निर्देश प्राप्त हैं कि उनका सभी का वर्णन कठिन ही नहीं, असम्भव है। अतः कुछ को व्यक्त करने का प्रयास कर रहा हूं जैसा मैंने अनुभव किया।

ज्ञान एवं भक्ति की पराकाष्ठा :— सभी को ज्ञात ही है परम श्रद्धेय गुरूजी स्वयं ज्ञानमूर्ति एवं योग साधना की परमोच्च अवस्था पर प्रतिष्ठित हैं। उनका विस्तार, उनकी महिमा उनकी प्रतिष्ठा अनंत है उनका ज्ञान अनंत है और वह स्वयं कहते थे कि सत्यं ब्रह्म अनन्तम ज्ञान तथा सत्यं ज्ञान अनंतम ब्रह्म । अब आप यह भी देखें कि गुरूजी भक्ति की पराकाष्ठा भी है।

खण्डवा में एक भजन का कैसेट पूज्य गुरूजी को सुनाया जिसे सुनकर कई कई बार बोलते रहे बड़कऊ यह कैसेट मुझे दे दो ये मुझे दे दो। मैंने कहा गुरूजी यह आपके लिए ही है, आपका ही है, फिर भी पूर्ववत कहते रहे, ये मुझे दे दो। उस कैसेट में कई गीत थे। अधिकतर राधा का वियोग, कृष्ण के प्रति वियोग जनित पीड़ा के थे। ब्रज और गोकुल वासियों के विरह के कुछ कबीर एवं मीरा बाई के भजन थे। सभी मोहम्मद रफी के द्वारा गाये गीत थे। मैंने देखा कि आंसुओं से गुरूजी का कुर्ता भीग जाता था और उनका गला हिचकियों से रूंध सा जाता था। वे भाव की विहवलता की दशा में पहुंच जाते थे। विशेष कर इन गीतों में—

''श्याम से नेहा लगाये... राधे नीर बहाये। इसी प्रकार पैंया पडूं तोरे श्याम... लौट चलो। तो यह भक्ति और ज्ञान का अपूर्व संगम था। ये भजन कई कई बार वे सुना करते थे। मैंने बाद में उन्हें मुंगेली में भी उन्हें इसी प्रकार भक्ति भाव में आंसुओं की झड़ी में डूबे देखा था।

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2

कौन न तरे है—फरवरी 1996 में गुरूजी जब पुनः खण्डवा पधारे तो कई बार हास परिहास एवं विनोद का वातावरण बना। श्री मनोहर तेजवानी (अब स्वर्गीय) जी ने ''वन्स मोर'' कहा तो गुरूजी फिर से बोले

प्रात के नहाये से कौन ना तरे है?
तरे तो मेढ़क नहीं, जिसका पानी में ही धर्र है।
मूंड़ के मुड़ाये से कौन ना तरे है?
तरे तो भेंड़ी नही जो मुंडाये सरा सर्र है।
बाल के बढ़ाये से कौन ना तरे है?
तरे तो मोर नहीं जिसका सवा हाथ पर्र है।

भोजन के समय एक बार गुरूजी ने पूछा ''प्राची थाली में क्या है? ''गुरूजी लौकी की सब्जी है? अच्छा पारलौकिक तो नहीं है? और ये क्या है? गुरूजी ये पालक की सब्जी है अच्छा? पालक है? (सभी हंस रहे हैं)। एक दिन प्राची की एकआंख में तकलीफ थी। अतः डॉक्टर के यहां चेकअप कराकर आई। ''अशोक, आज प्राची आंख दिखाने गई थी, प्राची आजकल सबको एक आंख से देखती है। अशोक भैया, तेजवानी जी सभी हंस रहे हैं और पूज्य गुरूजी श्लेषादि अलंकार से विनोद करते जा रहे हैं। जैसे परमात्मा मनुष्य, रूप में आकर सबसे विनोदपूर्ण संवाद कर रहा हो और सर्वत्र आनंद ही आनंद हो रहा है।

वक्त ठहर जाता था—सभी ने एक बात जरूर महसूस की होगी, कि जब पूज्य श्रीगुरूजी के पास हम होते थे तो कोई चिन्ता, टेंशन, बोझ या समस्याओं की याद तक नहीं रह जाती थी। इसका आप विश्लेषण करें तो निष्कर्ष निकलता है कि उनके पास जैसे वक्त ठहर सा जाता था अर्थात् भूत और भविष्य दोनों गायब हो जाते थे और हम केवल वर्तमान

में जीते थे। यह भी अत्यंत कठिन बात या कहें कि मानव के दैनंदिनी जीवन में एक दुर्लभ सौगात जैसी है कि वह केवल अपने वर्तमान में ही जिये। गुरूजी कहते थे कि वह केवल वर्तमान में रहते हैं...संतों का न कोई भूत न कोई भविष्य होता है, केवल वर्तमान होता है।

श्रीमती शैलजा नावलेकर :— (ग्वालियर) दीक्षा 1984—85 में हुई थी। अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहती हैं कि गुरूजी की महिमा का बखान करने के लिये न वाणी में ताकत और न ही शब्दों का भंडार है। इस बात का भी आश्चर्य होता है कि गुरूजी के फोटो के सामने भी मन ही मन कही गई बात पता चल जाती है ओर निदान भी समस्या का हो जाता है।

1990 में अत्यंत खराब स्वास्थ्य के समय जब सभी दवायें बेअसर थीं और परेशान होकर रात 11 बजे दो अगरबत्ती गुरूजी की फोटो के समक्ष लगाकर मन में प्रार्थना की कि गुरूजी मुझे तकलीफ से मुक्ति दिलाईये, कम से कम कोई दवा तो माफिक मिल जावे। ऐसे समय में पूज्य गुरूजी ने मन की बात सुनकर एक होम्योपैथिक दवा लिखकर भिजवाई जिससे मैं पूर्ण स्वस्थ हो गई थी। इसी प्रकार 1994 में कैंसर का ऑपरेशन करवाते समय गुरूजी की आवाज मुझे बिलकुल, स्पष्ट सुनाई दे रही थी **''ऑपरेशन हो जाने दो, चिन्ता मत करो सब ठीक हो जायेगा''।** मेरी बेटी सुषमा जो सांइस की छात्रा थी, उसके बारे में भविष्यवाणी की थी कि यह सी.ए. बनेगी और ऐसा ही हुआ। वह स्वयं भी सी.ए. और अपने पति, जो कि सी.ए. हैं, के साथ आज आनन्दमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

तमाम घटनाओं और अनुभवों से हमारा विश्वास दृढ़ हो गया है कि पूज्य गुरूजी साये के माफिक सदैव हमारे साथ रहते हैं। हमारी श्रद्धा लगन और विश्वास से हमें अत्यंत सुंदर अनुभव हो रहे हैं और साथ में यही प्रार्थना है कि गुरूजी हमें अपने चरणों में सदैव पड़ा रहने दें।

श्री अरविंद गणेश नावलेकर :— (ग्वालियर) 1984—85 में दीक्षा मिली और उन्होंने कौतुहल वश गुरूजी से प्रार्थना की कि मुझे ध्यान में कोई भी अनुभव नहीं होता। तब गुरूजी ने उन्हें समझाया था कि ''प्रत्येक व्यक्ति को अपने अपने संस्कार जनित अनुभूतियां होती हैं। निरंतर दृढ़ विश्वास से साधना करते रहें, शेष सब मुझ पर छोड़ दें''। तब से स्मरण में ही आनन्द और समाधान मिलता है। मेरी यह भावना दृढ़ हो गई है कि जो जो कर्म हो रहा है वह गुरूदेव ही करवाते हैं या वही कर रहे हैं—सो उन्हीं को अर्पण।

जिलाधीश कार्यालय से अपनी बच्ची का विवाह प्रमाण पत्र चाहता था परन्तु वहां की भीड़ और कार्यालय के चक्कर लगाकर थक गया और परेशान होकर लौट रहा था। इस क्षुद्र कार्य के लिये गुरूजी से निवेदन करने का भाव नहीं आया। इसी क्षण मुझे गुरूजी की विनम्रता याद आई। मैं आपका सेवक हूं—चाकर हूं और यह याद आते ही गुरूजी से सहायता की प्रार्थना भी कर डाली। उसके बाद आश्चर्य हुआ कि एक परिचित व्यक्ति मिले जो पीछे के रास्ते से ए.डी.एम. के कमरे में ले गये, जहां सादर एक कुर्सी पर बैठाया गया और लिपिक को आदेश दिया गया कि प्रोफेसर साहब का काम तुरंत करें। गुरूजी के स्मरण मात्र से कार्य सम्मानजनक तरीके से हो गया—जहां मैं अन्यथा थक हारकर लौट रहा था।

पूज्य गुरूजी अपना स्मरण अपने आप दिन में कई बार करवाते रहते हैं, अतः मेरी धारणा है कि यह प्राप्ति कम नहीं है। प्रयासों की तुलना में प्राप्ति अधिक है। सद्विचार से सदाचार और सदाचार से भौतिक जगत में थोड़ी बहुत ख्याति और पारमार्थिक दृष्टि से शांति अधिकाधिक समय बनी रहती है। पूज्य गुरूजी का स्मरण, चिंतन, सद्विचारों का उदय और दुर्विचारों का क्षय, सद्विचारों की श्रृंखला और आगे सदाचार, समाधान और शांति इस सतचक्र की अनुभूति जीवन में आने लगी है। उनकी विराटता का बखान असंभव लगता है।

सौ. रश्मि मुकुल अभ्यंकर–मुम्बई :– के अनुभव उस कड़ी में विरले हैं जो पूज्य गुरूजी को याद करके उनकी फोटो के सामने दो अगरबत्ती लगाना कभी नहीं भूलती। आफत और विपत्ति के समय गुरूजी को बिना याद किये ही पूज्य गुरूजी की कृपा पात्र बनी हुई हैं। सन् 2005 में जनवरी में अमेरिका अपने पति के साथ 2–3 माह के लिये गई थी और वहां पर पति के ऑफिस जाने पर बहुत निराशा में डूब गई और डर भी रही थी। अपने पति को फोन करके यह भी कहा कि मुझे भारत वापिस भेज दो, मैं यहां अकेली नहीं रह सकती।

अपने दोनों घुटनों में सर घुसाकर रो रही थी। बाहर बर्फ गिर रही थी, कमरे में अंधेरा था। तभी एकाएक उन्हें लगा कि कमरे में उजाला हो रहा है और कुछ क्षणों में कमरा प्रकाश से भर गया और सर उठाकर सामने देखा तो 8–10 कदम दूर एक कुर्सी पर साक्षात् पूज्य गुरूजी विराजमान थे। पल भर में आंखें मलते हुए आगे आई और पूर्ण सफेद पोशाक में गुरूजी प्रसन्न मुद्रा में कुर्सी पर बैठे मुझे देख रहे थे। मेरे कुछ बोलने के पहले ही गुरूजी बोले कि–

''इतना क्यों रोती हो, इतनी दूर से गुरूजी तुम्हारे साथ आये हैं, फिर काहे का डर और क्यों अकेला महसूस कर रही हो? शांत हो जाओ।''

मैंने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया और पलंग पर बैठ गई और धीरे–धीरे कमरे में अंधेरा होता गया, प्रकाश चला गया और मैंने देखा कि गुरूजी कुर्सी पर नहीं थे पर उनका कमरे में होने का एहसास मुझे होता रहा। मैंने भारत वापिस न जाने का मन बना लिया और पूरे समय अकेली होकर भी अकेली नहीं थी और डर भी पता नहीं कहां चला गया था।

12–06–2012 को मैं बम्बई में बेटी के साथ घर में अकेली थी और मेरे पति विदेश गये हुए थे। रात में 1 बजे से 2.30 बजे तक कई बार फोन आया और कोई व्यक्ति अश्लील भाषा बोल रहा था। यही क्रम दूसरी रात भी हुआ और अश्लील भाषा के साथ दरवाजा खोलने का भी कहा जा रहा था। मैं बहुत डरी हुई थी और शेष रात्रि अपने फ्लैट की लाईटें खोलकर सुबह का इंतजार करती रही। दिन में अपनी सहेलियों के साथ इन घटनाओं को बताया तो उन्होंने सलाह दी कि मैं उनके साथ रहूं। परन्तु मैंने अपने घर में रहना उचित समझा और यह भी तैयारी की कि यदि तीसरी रात भी यही फोन आता है तो मैं खिड़की से कूदकर शोर मचाऊंगी।

14 जून 12 को रात में 2 बजकर 7 मिनिट पर फोन की घन्टी बजी और बेटी को उठाकर मैं खिड़की की तरफ मुड़ने को हुई तभी मुझे दरवाजे पर कुछ चमकता हुआ दिखाई दिया जिसे मैंने अनदेखा किया। किन्तु तभी प्रकाश ज्योति के रूप में दिखाई दिया। बेटी को वापिस पलंग पर सुलाकर मैं आगे बढ़ी तो घर के दोनों कमरे हल्के गुलाबी और मोतिया

रंग के प्रकाश से भरे थे।

अपनी दांई तरफ देखा तो श्वेत वस्त्रों में पूज्य गुरूजी एक कमरे से दूसरे कमरे में जाते दिखाई दिये। मैं गुरूजी के पीछे चिल्ला रही थी, गुरूजी रूकिये पर वे आगे बढ़ रहे थे। मैं उनके पीछे पीछे चिल्लाते हुए बढ़ रही थी। हाल में सुगंधित फूलों की खुशबू और दोनों कमरों में यही सुगंध फैली हुई थी। गुरूजी आगे बढ़ते गये और मैंने फ्लैट का दरवाजा खोला तो देखा कि गुरूजी रूके नहीं अपितु सीढ़ियों से निडरता से उन्हें अंतिम सीढ़ी तक उतरते देखती रही।

डर के मारे खिड़की से कूदने वाली लड़की स्वयं दरवाजा खोलकर निडरता से खड़ी पूज्य गुरूजी को जाते हुए देख रही थी। मैंने अंदर आकर बिना कोई लाईट खोले उसी मोतिया प्रकाश की रोशनी में गुरूजी की फोटो के आगे दिया जलाया एवं अगरबत्ती लगाई। अभी तक फ्लैट के दरवाजे खुले थे। खिड़की भी खुली थी। कुछ पल के बाद इसे बन्द किया। आंखों से अश्रुपात हो रहा था। अब मैं निडर थी।

इतनी शक्ति रूपी उजाले का संचार पूज्य गुरूजी ने किया था कि मैं पूर्ण अभय होकर सो गई। ऐसी विपत्ति के क्षणों में भी गुरूजी अपने शिष्यों की रक्षा तभी कर सकते हैं जब वे सदैव साथ रहते हों। हम ऐसी स्थिति में भी उन्हें याद नहीं कर पाते पर धन्य है पूज्य गुरूजी जो अपने शिष्यों को कभी नहीं भूलते। मेरा उन्हें कोटि कोटि नमन।

योगेश शर्मा–रायपुर :– ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि श्री गुरूजी के प्रवचनों से प्रभावित होकर मन में दीक्षा लेने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई और सन् 1988 में रायपुर में यह संयोग आया जब गुरूवार के दिन अंधकार से प्रकाश अर्थात् विकार से निर्विकार की ओर जाने के लिये

गुरूदेव ने अपना शिष्य बनाना स्वीकार किया। यह मेरा दूसरा जन्म था जब मेरी व्यर्थ की धारणाओं से निकालकर पूज्य गुरूजी द्वारा आत्मयोग से मुझे दीक्षित किया। दीक्षा देते समय गुरूजी के पूछने पर मैंने बताया था कि मैं भगवान राम को मानता हूं। गुरूजी ने आगे कहा आत्माराम की साधना से ही राम राम और कृष्ण कृष्ण हुए। पूज्य गुरूजी ने साधना अर्थात् अभ्यास पर ही सदैव अपने शिष्यों को जीवन का आधार बनाने के लिये प्रेरित किया है। गुरूजी ने बताया कि

योगः चित्त वृत्ति निरोधः

ध्यानं निर्विषयं मनः

चित्त की वृत्ति से एक के बाद दूसरे विचार की श्रृंखला अनवरत चलती है। वह अभ्यास के माध्यम से कम होती हुई मन को अपने भीतर स्थित महाशक्ति में अर्थात् आत्मा से जोड़ देती है। जैसे जैसे आत्मयोग होता है दोष (विकार) समाप्त होते जाते हैं। हम ज्ञान (आत्मज्ञान) प्राप्ति की ओर आगे बढ़ते जाते हैं। गुरूजी आगे बताते हैं कि आत्मज्ञान होने पर ऐसा कोई ज्ञान नहीं है जो जानने के लिये शेष रह जाये या कुछ और पाना शेष बचे। वह स्वयं समर्थ ज्ञानवान हो जाता है। सभी में सूर्य रूपी आत्मा समान रूप से विराजमान हैं जो कि विकार रूपी बादल से आच्छादित हैं। गुरूजी ने बताया कि ध्यान योग अभ्यास से विकार रूपी बादल हटते हैं और सूर्य रूपी आत्मा प्रकट हो जाती है।

गुरूजी ने अपने शिष्यों को मात्र उनके द्वारा बताई गई विधि से अभ्यास करने की बात कही। बाकी जो कुछ पाना है, अपने आप वह आत्म तत्व मिल जायेगा और दोष विकार सब छूट जायेंगे।

बड़ी दृढ़ता से गुरूजी कहते थे कि इस देश में विद्वानों की भरमार है जो राम के संबंध में सुनाने में सक्षम हैं, किन्तु राम को पाने की विधि हम अपने शिष्यों को बताते हैं। न कपड़ा रंगने की जरूरत है, न मूड़ मुड़ाने की, न घर द्वार छोड़कर कहीं जाने की जरूरत है। मात्र थोड़ा समय निकालकर नियमित ध्यान के अभ्यास में बैठो, बाकी सब अपने आप होता है। जैसे जैसे हम निर्विषय होंगे ज्ञान का प्रकाश (आत्मज्ञान) हमें प्राप्त होगा।

सद्गुरू भगवान में अलौकिक शक्तियां विद्यमान थीं जिनसे वह मन की बात बिना बताये ही समझकर समाधान कर देते थे। मैं दुविधा में था कि पढ़ाई आगे करूं अथवा नहीं और बिना बोले ही पूज्य गुरूजी ने हमें बर्धा में कहा कि अपनी दुकान ही ठीक है। मैं हूं न, चिन्ता करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि वह गुरूजी की दुकान है। इसी तरह मुझे एक बार किसी ने अपमानित किया जिसके कारण मैं बहुत दुखी था। कुछ समय बाद मुंगेली जाने पर बिना कुछ बोले ही गुरूजी कहने लगे कि कोई अपमानित करे, अनादर करे तो उसमें दुखी होने की क्या बात है। अज्ञानी जन ऐसा करते हैं। उनकी कृपा से अब ऐसी स्थिति में मन, मान–अपमान होने पर भी शांत रहता है।

एक बार मैं बहुत अधिक बीमार था और डॉक्टरों को बीमारी समझ नहीं आ रही थी तब मैं निराश और हताश होकर अगरबत्ती जलाकर गुरूजी के सम्मुख बैठा और गुरूजी से कहा आपके होते हुए मैं भटक रहा हूं। मैं ऐसा बोलकर सो गया। तभी हमारी पत्नी को आवाज सुनाई दी **मैं मरा नहीं हूं, मैं हूं। यह आवाज 3 बार सुनाई दी और गुरूजी सामने खड़े हो गये।** इसके बाद सब कुछ सामान्य होता गया और मेरी बीमारी

भी डॉक्टरों को समझ में आ गई तथा में निरोग हो गया। गुरूजी सदैव कहते थे कि मैं हमेशा साथ में हूं। हर शिष्य को आपत्ति विपत्ति में, याद करने पर और बिना याद किये भी रक्षा करते आ रहे हैं। पूज्य गुरूजी कहा करते थे कि मेरा कोई दुख सुख नहीं हैं मैं औरों के दुख से दुखित व सुख से सुखी होता हूं। मैंने जो पाया है, वह सबको मिले, सब आनंदित हों।

पूज्य गुरूजी ने सदैव अपने शिष्य परिवार को बताया कि दुनिया भर में देवी देवता और भगवान खोजने व जानने के बजाये अपने आपको खोजने और जानने से सब कुछ मिल जायेगा। आज उन्हीं दीन दयाल की कृपा से जितने भी दोष हैं, काम, क्रोध, मोह, लोभ, मान, मत्सर, द्वेष, घृणा, भय, चिन्ता दूर हो रही है। मन शांत लगने लगा है और उनका कृपा पात्र बना रहूं, यही उनके चरणों में विनती है।

श्री दिलीप मराठे (भोपाल) :— को इस बात का बहुत दुख रहा कि जिन्हें वे सन् 1974—75 से एक साधारण व्यक्ति के रूप में जानते थे, उस महान दिव्य पुरूष से उन्हें 1997 में दीक्षित होने का योग आया और उनकी कृपा से तुरंत गजानन महाराज के दर्शन भी हुए। आज उनकी कृपा से पूरा जीवन बदल गया है और अथाह शांति जीवन में आ गई है। जब गुरूजी सशरीर थे, तो समझ नहीं थी, उनकी भव्यता की, उनकी प्रखरता की, उनके तेज की—उनकी व्यवहारिकता की और अब यही इच्छा रहती है कि उनके कथन का हम अनुसरण करें। गुरूजी कहते थे कि कर्तव्य के प्रति लापरवाही नहीं होना चाहिये। आपके बताये मार्ग पर चलते हुए जीवन में हम सदा सचेत रहें कि कोई क्षण भी आपकी याद के बिना न रहें। आपके प्रति सच्ची भक्ति रखें और अपने कर्तव्यों के प्रति सजग

रहें। आपके चरणों में हम सदैव बने रहें, यही हमारी अन्तःकरण से विनम्र प्रार्थना है।

श्री प्रकाश मिश्रा (दुर्ग) :– ने बताया कि उन्हें गुरूजी की जीवनी ''दिव्याम्बु निमज्जन'' श्री जय प्रकाश वर्मा जी के यहां पढ़ने को मिली थी जो योगदा सत्संग सोसायटी से दीक्षित थे, जिस मार्ग को गुरूजी ने susplcious मार्ग बताया था। सन् 1983 में मुंगेली में मेरी दीक्षा हुई। गुरूजी मुझे हरि का मंत्र देकर दीक्षित कर रहे थे, तब मैंने कहा मुझे शिव का मंत्र चाहिये। पूज्य गुरूजी अपनी ओर अंगुली दिखाकर बोले कि यही तो शिव है पर यह बात किसी को मत बताना। दीक्षित होने के बाद आगे पढ़ाई करने सनावद चला गया। जब मैं गुरूजी को याद करके दूध और रबड़ी खाता था तो इस बात का पता गुरूजी को चल जाता था तथा जब भी मुंगेली गया तो गुरूजी बोलते कि तुम सनावत में रबड़ी बहुत खाते हो।

1986 में मेरी दोनों कुहनी के पास बड़ी बड़ी गांठें निकल आईं थीं। दुर्ग के सर्जन डॉ. आर. के. तिवारी ने बताया तुम्हारा नर्वस सिस्टम फेल हो जायेगा या सड़ जायेगा। मैं बहुत दुखी हो गया तथा गुरूजी को बताया तो उन्होंने कहा तुम्हें कुछ नहीं होगा और दोनों गांठों को छूकर बोले कैलकेरिया फ्लोर 30 पोंटेंसी 15–15 दिनों में 4–4 गोली खाना, सब ठीक हो जायेगा। गुरूजी को याद करके मात्र एक बार यह खाने से गांठें अंदर चली गईं, जो सन् 1986 से आज 2012 तक कोई तकलीफ नहीं हुई है।

1993 में मेरे पुत्र को लेक्टोज डायरिया था जिससे मां का दूध एवं गाय का दूध पचता नहीं था और लेक्टोज मुक्त दूध प्रोसोयाल नेस्तम

इतना महंगा था जिसे पिलाना मेरे लिये संभव नहीं था। एक दिन मेरी पत्नी ने गुरूजी की चरण पादुका को गाय के दूध में धोया। उस दूध को मेरे पुत्र ने आराम से पी लिया। फिर कोई तकलीफ नहीं हुई, जिसे सुनकर डॉक्टर भी आश्चर्य चकित थे और हमारी समस्या का भी निदान हो गया था।

पूज्य गुरूजी 1993 में जब भिलाई अस्पताल में भर्ती थे, तब हमें गुरु भाइयों एवं गुरूजी की सेवा का अवसर मिला था। उनकी बड़ी कृपा कि उन्होंने अपने पौत्र को बोला था कि प्रकाश को बोलना वह नहीं जानता कि वह क्या कर रहा है तथा इस कार्य में लगे रहने को अवश्य कहना। इन्हीं दिनों मुझे कुर्सी पर बैठे गुरूजी के दर्शन भी हुए और गुरूजी का सर पर प्यार भरा आशीष भी मिला था। एक बार गुरूजी अत्यंत प्रसन्न मुद्रा में हमें आशीष देते हुए आदेश दिये कि मात्र मंत्र का जाप कर लिया करो वही तुम्हें और तुम्हारे समस्त परिवार को मुक्त कर देगा। दंडवत प्रणाम करते समय कुछ सिक्के जमीन में गिरे और खनखनाने की आवाज हुई तो गुरूजी ने मां लक्ष्मी भी प्रसन्न रहे ऐसा आशीष दे दिया।

पूज्य गुरूजी को आने वाली घटनाओं का आभास हो जाता था। एक बार रायपुर में गुरूजी बोले–जाओ प्रकाश, तुम्हारी बला टले। दूसरे दिन दुर्ग से भिलाई ऑफिस जाते समय ट्रक के ड्राईवर की गलती से मेरे स्कूटर की टक्कर कुछ सेन्टीमीटर से ही बची थी। उस समय ड्राईवर पर क्रोध भी आया कि इसे डांटूं या मारूं। पर उसी क्षण गुरूजी की बात याद करके अश्रुपात होने लगे जिनकी कृपा से आज जीवनदान मिला था।

मन की बात गुरूजी तक पहुंच जाती है, यह भी एक बड़ा आश्चर्य और कौतूहल पैदा करता है जो सर्वज्ञ की स्थिति में रहने वाले गुरूजी के लिये ही सम्भव हो सकता है।

मन में आया कि पूज्य गुरूजी हमें अपने जैसा बना लीजिये। तुरंत गुरूजी बोले हमारे जैसा कोई न बने, नहीं तो उसका छप्पर उड़ जायेगा।

इसी प्रकार 1995 में मुंगेली जाने के पूर्व घर में रखी गुरूजी की चरण पादुका को सर पर रखकर सोचा कि पत्नी मेरे अनुकूल रहे और दूसरे दिन मुंगेली पहुंचने पर गुरूजी ने आशीष दिया पत्नी भी मनोकूल और धर्मानुकूल रहे। ऐसा आशीष पहली एवं अंतिम बार ही प्राप्त हुआ था।

13–03–1998 को रात में घर में अकेला था। यह सोचकर कि जब गुरूजी सशरीर नहीं रहेंगे तो मैं कैसे जी पाऊंगा और गुरूजी की चरण पादुका को पकड़कर रोने लगा। लग रहा था कि मेरे प्राण निकल जायेंगे। बिस्तर में करवटें बदल बदलकर रो रहा था और ऐसा रोना कि हिचकी और आंसू अत्यंत वेदना के साथ निकल रहे थे। यह होली की रात थी तथा प्रातः लगभग 5:30 बजे सुबह एक कमरा दिखा जिसमें बहुत सारे गुरू भाई–बहन बैठे थे तथा दूसरे कमरे में रखे टेप रिकार्डर से गुरूजी की आवाज ओम् ओम् दो बार स्पष्ट और तीसरी बार अस्पष्ट ओम् की आवाज सुनाई दी। यही वह समय था जब गुरूजी अपने शरीर को छोड़कर ब्रह्मलीन हो गये, पर गुरूजी की अत्यंत अनुपम कृपा का उदाहरण मुझे दे गये एवं बता गये कि हमेशा मैं तुम्हारे साथ हूं।

गुरूजी की कृपा से आज भेदभाव, रागद्वेष, मोह लोभ कम से कमतर हो रहे हैं। गुरूजी की उपस्थिति सदैव महसूस करता हूं। लाभ हानि, अच्छा बुरा, हर घटना में मैं गुरूजी की कृपा का अनुभव करता हूं। एक

माह से रोज गुरू जी मुझे दर्शन देते रहते हैं। यह उनकी बहुत बड़ी कृपा मुझ पर है और क्या चाहिये? सदैव उनके चरणों का सेवक बना रहूं यही आकांक्षा है।

राजू काण्णव वर्धा :– अनन्त जन्मों के पुण्य कर्मों से मेरा भाग्योदय हुआ और ऐसे महान योगी संत और सद्गुरू का शिष्य होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिसकी महिमा का बखान वेद–पुराण और उपनिषद भी करने में असमर्थ रहे हैं। वह जो कालातीत है, शब्दातीत है ओर वर्णनातीत है, जो मात्र तत्व से ही जाना जा सकता हो, उस श्रद्धेय परम सद्गुरू की महिमा का गुणगान का अवसर ही आनन्द दायक और सुखानुभूति देने वाले पल हैं।

रामदासी सन्यासी से मेरा पूरा परिवार दीक्षित था। ये उच्च कोटि के भविष्य वक्ता तथा हस्त रेखा विशेषज्ञ थे जिन्होंने मेरे दादा जी स्वर्गीय श्री केशव दाजिबा कण्णव को स्पष्ट कह दिया था कि मैं इस बालक का सद्गुरू नहीं हूं, क्योंकि इस बालक की कुण्डलिनी शक्ति पर संस्कार करने का समय आ गया है। वह सामर्थ्य और शक्ति जिस महान योगी और सद्गुरू के पास है, छः माह के बाद उस महापुरूष तक वह पहुंचने वाला है। संसार में उच्च कोटि के विद्वान और गुरू अनेकों हैं जो ऐसी भविष्यवाणियां तो कर सकते हैं, किन्तु सद्गुरू जिसमें शिष्य की कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत करने का सामर्थ्य हो, जो स्वयं मुक्त होते हुए शिष्यों को मुक्त कराने की राह पर पहुंचाने का सामर्थ्य रखता हो ऐसे परमपद पर पहुंचे हुए हमारे पूज्य सद्गुरू की शरण में 18 वर्ष की आयु में 26 मार्च 1982 को मुझे दीक्षित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

हमारे दादाजी वर्धा के पूज्य श्री परांजपे महाराज से दीक्षित थे और उनके मार्गदर्शन में साधना करते थे। पर उनके शरीर त्याग के बाद दादाजी को साधना में मार्गदर्शन नहीं मिल सका और साधना काल में शरीर में झटके लगते थे। अनेकों उपाय करने पर भी उनकी कठिनाई दूर नहीं हुई थी। अपनी इस कठिनाई को बिना बताये ही पूज्य गुरूजी के प्रथम दर्शन से ही साधना में होने वाली कठिनाई समाप्त हो गई थी। इस तरह की समस्या का समाधान मात्र दर्शन से हो, ऐसे महान सिद्धावस्था में रमने वाले योगी का बखान शब्दातीत ही है।

दादाजी पूज्य गुरूजी के सम्पर्क में बाबा तकवाले के घर में आये। उस समय दादाजी 85 वर्ष की आयु के थे। उन्होंने मुझे अपने अनुभव से बताया था कि पूज्य गुरूजी जैसे कुण्डलिनी योग के सिद्ध योगी उन्होंने अपने जीवनकाल में कभी नहीं देखा तथा मुझे इस महापुरूष की हर प्रकार की सेवा और अधिक से अधिक सान्निध्य पाकर लाभ उठाने का मार्गदर्शन किया था।

परमपूज्य गुरूजी अपनी दिव्य दृष्टि से हर व्यक्ति से जन्म जन्मांतर के संबंधों को जान लेते थे। अमरत्व कृति आरती के रचियता श्री घुसे जी को उन्होंने बताया था कि उनका संबंध पुराने जन्मों में उनसे रहा है। इसीलिये इस जन्म में आपको मुझसे प्रकाश में जाने की राह मिलेगी। दादा श्री अशोक धर्माधिकारी जी की पत्नी ने एक बार गुरूजी को नहलाया था। उस समय पूज्य गुरूजी ने कहा था कि वे महिलाओं से सेवा नहीं लेते पर किसी जन्म में वे उनकी मां रहीं हैं, इस कारण इस सेवा का अवसर दिया था। पूज्य गुरूजी मर्यादा का पाठ सदैव सिखाते थे। अतः उन्हें मर्यादा पुरूषोत्तम कहना उचित रहेगा।

परमपूज्य श्री गुरूजी जन्मसिद्ध योगी थे। इसलिये अष्टसिद्धियां तो उनकी दासियां थीं लेकिन वो नवनिधि के भी स्वामी थे। दिसंबर 1997 की बात है। परम पूज्य श्री गुरूजी बोले मुझे मेरे जन्म स्थान जाने की बहुत इच्छा हुई, लेकिन दो बार समुद्र तक जाकर वापिस आ गया। लेकिन तीसरी बार मैं मुंगेली के आश्रम में यह शरीर यहां छोड़कर दूसरे देह से समुद्र लांघकर जॉर्जटाउन गया। वहां वर्तमान शरीर धारण कर घर में जाकर बैठा। वहां नाती पोतों ने अंग्रेजी में पूछना शुरू किया–''हू इज दिस ओल्ड पर्सन?'' मैं दो मिनिट उस घर में बैठा था। बाद में समुद्र के पास आकर दूसरा देह धारण कर मुंगेली आश्रम में छोड़ आये शरीर में प्रवेश कर लिया। बाहर से किसी को कुछ पता नहीं चला। परम पूज्य गुरूजी योग की गहन तथा अतिसूक्ष्म विधि का उपयोग करना भी जानते थे।

1997 की दीपावाली की छुट्टी में मैंने और सुधीर देशमुख ने परम पूज्य श्री गुरूजी के चरण कमलों में प्रणाम किया। पूज्य गुरूजी बोले किस की सेवा करने के लिए आये हो। हमने कहा, पूज्य गुरूजी की सेवा करने के लिए आये हैं। गुरूजी कौन हैं? मैं आगे कुछ बोल नहीं पाया। स्वयं **परम पूज्य श्री गुरूजी बोलने लगे मैं ॐ हूं, मैं ॐकार हूं, राजू, आप ॐ की सेवा करने आये हो, न कि इस देह की। इस भाव से ही सेवा करना।** ऐसा ही एक प्रसंग वर्धा का है। परम पूज्य श्री गुरूजी, मनोहर तेजवानी जी के साथ 1995 में वर्धा पधारे थे। सौ. पांडे चाची के घर की बात है। मैं सुबह 9 बजे सेवा हेतु पांडे चाचीजी के घर गया। परम पूज्य श्री गुरूजी बोले, राजू कैसे हो? मैंने परम पूज्य श्री गुरूजी को कहा गुरूजी कल साधना में मैंने आपका ट्रांसपरेंट शरीर देखा। उस पर पूज्य गुरूजी बोले, वही मेरा सच्चा शरीर है। यह हाड मांस का शरीर मैं नहीं

हूं। इस शरीर का वर्णन गीता में किया है।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारूतः।।

(अध्याय 2, श्लोक 23)

इस आत्मा को शस्त्र नहीं काट सकते, इसको आग जला नहीं सकती, इसको जल गला नहीं सकता और वायु सुखा नहीं सकती। ऐसा जो शरीर है, वह दिव्य शरीर है। वही मैं हूं, यानि मैं ॐ हूं। परम पूज्य श्री गुरूजी प्रत्यक्ष वेद पुरूष हैं।

श्रीमती प्रतिमा एस. मैथ्यू (शहडोल/भोपाल) :— सम्पूर्ण रूप से गुरूजी के प्रति समर्पित उन विदुषी महिलाओं में से हैं, जिन्होंने सशरीर रहते हुए गुरूजी को नहीं देखा किन्तु सौभाग्य से उन्हें 25—01—2005 को गुरूजी की समर्पित शिष्या डॉ. हनीफा तालिब द्वारा टेलीफोन द्वारा मंत्र बताया। गुरू जी की अभ्यास विधि की जानकारी मिलने पर शुरू में खुली आंखों से पूज्यवर के चित्र को देखते हुए ध्यान करने लगी और उनके चरणों से दिव्य प्रकाश निकलते हुए कई बार दिखा। फिर आंख बन्द करके गुरू चरणों में ध्यान करना जीवन का प्रमुख अंग बन गया। परिणामतः जीवन के प्रति समझ, संवेदनशीलता और प्रेम बढ़ा, साथ ही सजगता के साथ वैराग्य भाव, आत्म नियंत्रण और जीवन का सही लक्ष्य गुरू कृपा से स्पष्ट हुआ। उस महान योगेश्वर की कृपा से हर क्षण उस लक्ष्य की ओर अबाधित गति से बढ़ने का सुअवसर मिल गया।

आत्म साक्षात्कार की प्रबल चाह और इच्छा का लक्ष्य रखते हुए उनके बताये मार्ग पर चलते हुए सौभाग्य से एक बार सोते समय गुरूजी ने vision में दर्शन दिया। साथ ही आश्वस्त किया कि मेरी प्रार्थना

अवश्य पूरी होगी। पूज्य गुरूजी, जिन्हें हम अपना सर्वस्व मानते हैं—उस महान परमपद पर प्रतिष्ठित परमहंस के विषय में लिखने की समर्थ शब्दावली हमारे पास नहीं है। उनकी महान कृपा के प्रतिफल स्वरूप सामान्य जीवन में मौन घटित हो गया है और संसारिक बातें निरर्थक मालूम होती है। ऐसा अहसास होने लगा है कि एकमात्र गुरूजी ही सच हैं, और उन्हीं का चिंतन, मनन और प्रार्थना ही सर्वोपरि है।

गुरूजी की कृपा से इस जीवन में उपजी कुछ प्रार्थनाएं —

1. हे गुरूजी! मुझे अपने चरणों में शुद्ध भक्ति दीजिये, अहैतुकी, अनहद, अपार, अथाह, अमला, विमला भक्ति दीजिये।
2. हे गुरूजी! इस जीवन को सर्वभूतों के प्रति प्रेम पूर्ण बना दीजिये।
3. हे गुरूजी! इस जीवन से सारा अहंकार, ममता मिटा दीजिये।
4. हे गुरूजी! मुझे सभी में हर पल आपके दर्शन हों।
5. हे गुरूजी! इस जीवन को सार्थक कर दीजिए, आत्म साक्षात्कार करा दीजिये।
6. हे गुरूजी! कामना रहित कर दीजिये, भय शून्य बना दीजिये।
7. हे गुरूजी! आपकी कृपा के प्रति ग्रहणशील बना दीजिए।
8. हे गुरूजी! आपके प्रति अहैतुक, अटल विश्वास दे दीजिये।
9. हे गुरूजी! आपकी करूणा को कभी न भूलूं।
10. हे गुरूजी! मुझे सच्चा शरणागत बना दीजिये।
11. हे गुरूजी! इस जीवन में अपनी इच्छा पूर्ण होने दीजिये।

सद्गुरूजी की कृपा से, जैसा दीदी ने नियमित ध्यान हेतु निर्देशित किया था हम उस ध्यान को जो समझ सके और लक्ष्य प्राप्ति का विशिष्ट

उपाय अपनाने लगे, उसकी व्याख्या करना सार्थक होगी।

ध्यान–

1. गुरूजी के चरणों में **बस बैठ जाना है बिना किसी अपेक्षा के।** बिना किसी अनुभव का इंतजार किये, सिर्फ बैठना है–शांत, निश्चल, स्थिर.... जितना अधिक से अधिक लंबे समय तक बैठा जा सके। इस बैठने से पहले केवल एक ही प्रार्थना हो कि गुरूजी आपके चरणों में अपने आपको सौंप दिया है। अब हे करतार, आप इस अस्तित्व को अपनी मर्जी के मुताबिक संवारिये। यह प्रार्थना करके सचमुच उनकी इच्छा पर अपने आपको निढाल छोड़ देना है।

2. ध्यान के लिये बैठते समय **गुरूजी को पूरे मन से पुकार लिया जाये** फिर यह पूर्ण विश्वास रखा जाये कि गुरूजी ने हमें हमारी समग्रता से अपनी गोद में ले लिया है और उनकी बेहद सूक्ष्म किन्तु बेहद शक्तिशाली उपस्थिति को पूरी एकाग्रता से अनुभव करने का प्रयास किया जाये। शुरू शुरू में चूक हो सकती है किन्तु शीघ्र ही ऐसी स्थिति आ जाती है जब न केवल ध्यान के समय बल्कि सतर्कता, जागरूकता के हर पल में उनकी प्रेममयी, सुहृदय उपस्थिति को अनुभूत किया जा सकता हैं।

3. कुछ दिन ध्यान करने के बाद यदि कोई अनुभव न मिले तो मन उकताने/ऊबने लगता है तो भी अभ्यास न छोड़ा जाये। यह बस कुआं खोदने की तरह है कि कुछ गहराई तक केवल सूखी खुदाई करने के बाद अचानक पानी निकल आता है। पानी निकलने से पहले सिर्फ विश्वास के बल पर प्रयास किया जाता है।

गुरूजी की कृपा से प्रत्यक्ष जीवन के संदर्भ में कुछ विशेष झलकियां :–

1. स्वयं के कर्ता होने का भाव काफी हद तक मिट गया है। यद्यपि अभी भूल होती रहती है लेकिन, इसकी अवधि काफी कम होती है। केवल एक कठपुतली की तरह होने की स्पष्ट अनुभूति रहती है। कोई और है जो मेरा, दूसरों का, सारी दुनिया का संचालन अपनी शक्ति से कर रहा है। कोई अदृश्य शक्ति हमारे आसपास, अंदर–बाहर व्याप्त है। उस शक्ति का विश्लेषण प्रचलित शब्दावली से किया जाना संभव नहीं लेकिन उसे बड़ी शिद्दत से महसूस किया जाने लगा है कि वह और कोई नहीं पूज्य गुरूजी ही हैं।

2. श्री गुरू चरणों में आने से पहले बातों, शब्दों, संवादों पर काफी निर्भर हुआ करती थी। वाकपटु होने के कारण मेरे अंदर यह भ्रम और अधिक गहरा था कि बातचीत की चतुरता से सच्चा संवाद किया जा सकता है। पूज्य गुरूजी की कृपा से अब यह बहुत अच्छी तरह समझ में आ गया है कि शाब्दिक संवाद आपसी संव्यवहार का संभवतः सबसे कमजोर तरीका है। चित्त की शुद्धि, मन की पवित्रता और गहन मौन के घटित होने पर जो मूक संवाद होता है, उससे अधिक शक्तिशाली बातचीत का तरीका संभव ही नहीं।

3. लगातार व्यस्तता, हर गुजरती हुई घटना और व्यक्ति के साथ अनिवार्य हस्तक्षेप इस जीवन के महत्वपूर्ण पहलू हुआ करते थे किन्तु सद्गुरू की महान कृपा और आशीष से अब समझ में आ गया कि घटनाऐं, वस्तुऐं व्यक्ति मेरे हस्तक्षेप के बिना भी वैसे ही गुजर जाते हैं और बस मेरे अंदर आनंदपूर्ण गहन मौन सभी कुछ शांत भाव से देखता रहता है। यह सृष्टि मेरे द्वारा कुछ किये जाने की मोहताज नहीं है।

4. मेरा सारा दुख मेरी अपनी कामनाओं और सुख संबंधी अपेक्षाओं के कारण था। अब कोई दुख नहीं है, क्योंकि किसी से कोई कामना नहीं, कोई अपेक्षा नहीं। अब जान गयी हुं कि जिस तरह मैं पूज्य गुरूजी की शक्ति के प्रभाव में क्रियाशील रहती हूं, बस वैसे ही सृष्टि के अन्य तत्व भी क्रियाशील हैं। ऐसी स्थिति में किससे शिकायत की जाये?

5. गुरूजी की कृपा से एक बात और समझ में आ गयी कि इस दुनिया में जो भी घटित हो रहा है वैसा कभी न कभी मैंने स्वयं ही प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से चाहा था। इस ब्रह्माण्ड में हम अपनी जो भी इच्छा का विचार प्रसारित करते हैं वह सुख पाने के लिये करते हैं। किन्तु कोई भी सुख बिना दुख के अस्तित्व ही नहीं रखता। यह जानकर अब सुख की कोई इच्छा शेष नहीं।

6. वर्तमान में कामना शून्य होने के बावजूद जीवन तो शेष है। सोना, जागना, उठना, बैठना, खाना, पीना, बात करना, नौकरी करना, संबंध निभाना सब कुछ यथावत जारी है। किन्तु इन समस्त प्रक्रियाओं में मेरी सहभागिता एक साक्षी की तरह हो गयी है तथा जैसा कि गुरूजी ने बताया–ये सब ऋणानुबंध है, जिन्हें सहर्ष निभाना हमारा कर्तव्य है, तभी उऋण हो सकेंगे।

7. पहले हर घटना का विश्लेषण कार्य कारण संबंधों की कसौटी के आधार पर करने की आदत थी। अब बुद्धि, तर्क, विवेचन करने से मन पूरी तरह उचाट हो गया है। एक ही घटना के अनंत कारण संभव हैं, बल्कि प्रत्येक घटना के घटित होने में समग्रतः सारा विश्व जिम्मेदार है। इसलिये अपनी सीमित बुद्धि से व्यर्थ की विवेचना में

अब कोई रूचि शेष नहीं।

8. इस विश्व में जो कुछ भी घटित हो रहा है, वह हम सभी के परम शुभ और परम कल्याण के लिये घटित हो रहा है। यह भाव बड़ी गहराई से आत्मसात हुआ है। इसी वजह से सभी के प्रति सहज और स्नेहपूर्ण स्वीकार्यता उपजी है, जिसका सम्पूर्ण श्रेय पूज्य गुरूजी और उनके आशीष को ही जाता है।

9. इस जीवन का एकमात्र उद्देश्य आत्मस्वरूप का ज्ञान और आत्मसाक्षात्कार है। इस उद्देश्य की प्राप्ति भी गुरू कृपा से देर सबेर सुनिश्चित है। इस लक्ष्य के प्रति लगनपूर्ण एवं गंभीर प्रतिबद्धता के साथ सद्गुरू चरणों में अटल विश्वास श्रद्धा और भक्ति के साथ अपने आपको सजग एवं जागरूक बनाये रखती हूं।

10. तमाम समझबूझ के बावजूद समय समय पर एक अनजानी चिंता, अनचीन्हा अवसाद घेर लेता है, लेकिन श्री सदगुरू का सघन स्मरण शीघ्र ही प्रसन्नता एवं आश्वस्ति से भर देता है।

11. इस दुनिया का हर काम सिर्फ और सिर्फ गुरूजी का काम है। यही जानकर हर काम को पूर्ण तल्लीनता के साथ करने का प्रयास जारी है। व्यक्ति और कार्यों के बीच पहले होने वाला भेद क्रमशः गुरूजी की कृपा से मिटता जा रहा है।

इन्हीं विचारों, भावों के बीच यह जीवन श्री गुरूकृपा पर आश्रित होकर व्यतीत हो रहा है। इसी जन्म में आत्म साक्षात्कार होकर जन्म–मृत्यु के चक्र से मुक्त होकर सदा के लिये गुरूजी के साथ एक हो जाऊंगी, बस इसी एक आशा और विश्वास के साथ जी रही

हूं। इस मार्ग और प्रयास में जो भी बाधा है उसे गुरूजी ही समझें और सुलझायें।

12. मैं और क्या लिखूं गुरूजी? मैं कुछ भी तो नहीं हूं, जो भी है आप ही हैं, सिर्फ आप और केवल आप। आप निःशब्दता के साथ ही इस जीवन में परम संवाद घटित कर दें।

आनन्द मिश्रा, (शहडोल) :– हमारे परम पूज्य श्रीगुरूजी के जीवन की कुछ ऐसी विलक्षण विशेषताएं हैं जो कि अन्य संतों, योगियों में नहीं दिखाई देती हैं।

हमारे पूज्य गुरूजी अपने अंतिम समय तक इस बात को शिष्यों के समक्ष बारम्बार दोहराते थे कि ''इन 75 वर्षों में मुझे भारत में कोई भी पूर्ण योगी नहीं मिला। श्रीगुरूजी के मुख से उद्धृत इस शब्द ''पूर्णयोगी'' का गूढ़ार्थ तो मैं नहीं समझ सकता किन्तु जहां तक मेरी समझ है–हमारे पूज्य गुरूजी जन्मसिद्ध, अष्टसिद्धि और नवनिधि से परिपूर्ण होकर भी 72 वर्ष की अवस्था तक गृहस्थ का जीवन यापन करते रहे। गृहस्थ जीवन के सभी दायित्वों का निर्वहन उन्होंने बड़े ही निस्पृह भाव से पूर्ण किया और जब माताजी ने उन्हें 72वें वर्ष यह कहा कि **''आप सन्यासी हैं, जबरदस्ती संसार में रहे हैं, अब आप जा सकते हैं''** तब हमारे पूज्य गुरूजी ने स्वतंत्र रूप से लोक कल्याण का कार्य आरंभ किया और लोगों को आध्यात्मिक मार्ग की दीक्षा प्रदान की। अर्थात् हमारे गुरूजी ने सिक्के के दोनों पहलुओं (भौतिक एवं आध्यात्मिक) को पूर्णता से जिया। मेरी समझ से इसलिए हमारे गुरूजी ऐसा कहा करते थे कि मुझे कोई भी ''पूर्णयोगी'' नहीं मिला।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारे परम पूज्य गुरूजी के अनेक शिष्य चिकित्सक या मेडिकल कॉलेज के प्रोफेसर रहे हैं जिनके समक्ष परम पूज्य गुरूजी ने अपने आध्यात्मिक पथ एवं संबंधित शारीरिक एवं मानसिक अनुभव/अनुभूतियों को बड़े ही वैज्ञानिक एवं चिकित्सीय ढंग से प्रमाणित किया है। श्री गुरूजी की एक एक आध्यात्मिक व्याख्या शरीर एवं मनोविज्ञान सम्मत है, जिसकी पुष्टि श्रीगुरूजी के सभी चिकित्सक शिष्यों ने की है। इस प्रकार का आध्यात्मिक मार्गदर्शन वर्तमान वैज्ञानिक, बौद्धिक एवं तर्कवादी युग में अनोखा एवं पूर्ण है, जो हमें अन्यत्र नहीं दिखायी देता।

तीसरी बात जो ध्यान देने योग्य है कि हमारे परम पूज्य गुरूजी सदैव प्रचार, कर्मकाण्ड, सम्मेलन या समारोहों से दूर रहे हैं। उनका यह कथन–**''जो मेरा है, वह संसार में कहीं भी रहेगा, मेरे पास आ ही जायेगा–**इस बात की पुष्टि करता है। इस प्रचार प्रसार के युग में इससे बच पाना श्रीगुरूजी जैसे महापुरूषों के लिये ही संभव था।

चौथी बात, हमारे पूज्य गुरूजी ने अपने साधनात्मक और उसके बाद भी, जीवनपर्यन्त किसी से भी कुछ नहीं मांगा। यहां तक कि वे वर्षों तक वनों या उसके आसपास की बस्तियों में रहे लेकिन मांगने के नाम पर श्रीगुरूजी ने पानी तक नहीं मांगा। यह बहुत ही अद्भुत बात है, जो हमें अन्यत्र सुनायी नहीं देती। हमारे गुरूजी सदैव अपनी ही बात करते थे। यदि कोई शिष्य या कोई व्यक्ति गुरूजी से किसी संत या योगी के बारे में पूछता था तो वे सीधा जवाब देते थे–मैं किसी को नहीं जानता, मैं केवल अपने बारे में जानता हूं, मैं क्या करता हूं, मैंने क्या किया–मेरे बारे में पूछें तो बताउं, मैं किसी के बारे में नहीं बता सकता। गुरूजी, अपने शिष्यों से भी सदैव यह कहते थे–आप अपनी बात करें न कि दूसरों की।

यह बात बड़ी ही अद्‌भुत थी कि गुरूजी सदैव कहा करते थे—**मैं बिना प्रमाण के कोई बात नहीं रखता हूं।** यह अत्यंत ध्यान देने योग्य बात है कि गुरूजी ने अपनी जीवनी अपने ही सामने, अपने ही जीवन काल में लिखवाई जो **''दिव्याम्बु निमज्जन''** के नाम से प्रकाशित है, **इस आत्मकथा में गुरूजी ने वे ही घटनाएं या अनुभव उल्लेखित किये हैं, जिनके प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित थे। वे सदा कहा करते थे—आपको मैं उन लोगों का पता बता देता हूं, आप उस स्थान या व्यक्ति से मिलकर मेरे संबंध में, मेरे आचरण—व्यवहार, मेरे लेन—देन आदि के संबंध में खोजबीन कर लें।** गुरूजी कहते थे कि जब ये व्यक्ति (जिन्हें प्रमाण के रूप में गुरूजी ने अपनी जीवनी में उद्‌धृत किया) संसार में नहीं रहेंगे, मैं चुप हो जाऊंगा, क्योकि मैं बिना प्रमाण एवं अनुभव के एक शब्द भी नहीं बोलता।

गुरूजी के शब्दों में—**मेरे जीवन की एक विशेष बात है, इसमें आप कुछ भी (असत्य) नहीं पायेंगे।** चाहे कितनी भी खोजबीन कर लें।

इस तरह हमारे गुरूजी का जीवन पूर्णतः प्रमाणित एवं निष्कलंक रहा। ऐसा इस वर्तमान युग में कदाचित ही देखने व सुनने में आता है।

हम अपने परमपूज्य गुरूजी के बारे में क्या बता सकते हैं? वे और उनका जीवन अद्‌भुत है जो कि श्रीगुरूजी की आरती में वर्णित है—**''तव गुण वर्णन करते, मौन बने वाणी।''**

संतोष शुक्ला, (शहडोल) :— सन् 1990 में गुरूजी से पहली बार, मैं रीवा में डॉ. शिन्दे के घर पर मिला। उनसे मिलने के बाद से ही गुरूजी के स्वप्न में दर्शन होने लगे, जिससे खूब आनंद मिलने लगा। दीक्षित होने के बाद लगभग हर दूसरे महीने गुरूजी के दर्शन के लिए जाना होता रहता। जब भी उनसे मुलाकात करने के लिए गुरूजी के कमरे में प्रवेश

करता, मन शांत होने लगता, गुरूजी के चरण—स्पर्श के समय हाथों में करंट सा बहता महसूस होता, और कमरे से बाहर निकलने पर नशे का अहसास होता जो कई—कई दिनों तक बना रहता। कई बार तो यह महीनों तक बना रहा। अब जब पुरानी बात याद आती है तो उन अनुभवों से पता चलता है कि गुरूजी कितने उच्च योगी थे। जिस समय गुरूजी के पास होते, तब मन में जो कुछ भी चल रहा होता—गुरूजी उसी विषय पर बोलने लगते।

अंतिम वर्षों में जब गुरूजी मुंगेली में थे और उनकी तबियत खराब थी, एक दिन मुंगेली के डॉ. संजय अग्रवाल गुरूजी का चेकअप करने आए। उन्होंने स्टेथोस्कोप लगाकर हार्ट बीट चेक की, फिर नाड़ी चेक की। उन्हें हार्ट बीट नहीं मिली और नाड़ी भी जीरो थी। जैसे ही डॉ. साहब ने कहा—हार्ट बीट नाड़ी नहीं मिल रही, गुरूजी अचानक बोल पड़े, संजय यह तुम्हारे समझ में नहीं आएगा। देखो हार्ट बीट और नाड़ी नहीं मिलने के बाद भी मैं बोल रहा हूं—ऐसे योगी थे।

मैंने यह अनुभव किया कि गुरूजी का स्मरण रहने से ही समस्त कार्य पूरे होते हैं। ऐसा अनुभव एक या दो दिन नहीं बल्कि वर्षों मेरे साथ रहा। उन वर्षों में—जो भी इच्छा, मेरे मन में उत्पन्न हुयी, वह पूरी हुयी। यह अनुभव आज भी यथावत कदाचित सभी शिष्यगणों के साथ है।

गुरूजी के शरीर रूप में रहते हुए न जाने कितनी आश्चर्यजनक घटनाएं हमारे आस—पास हुईं होंगी, जिन्हें चमत्कार कह सकते हैं। उनका लेख करने के लिए बहुत पन्ने चाहिए, परन्तु आज जब भी भारत के महान योगियों के बारे में तथा उनके चमत्कारों के बारे में पढ़ता या सुनता हूं, तो याद आता है कि यह सब कुछ गुरूजी के समय उनको, शिष्यों ने

अनुभव किया है और आज भी अनुभव कर रहे हैं। आज भी गुरूजी सभी शिष्यों को अपनी उपस्थिति का बराबर अहसास कराते रहते हैं।

श्री आर. के. शिन्दे (ग्वालियर) :– जिन्हें समस्त परिवार आदरपूर्वक 'बुआ साहब' के नाम से जानते हैं और पूज्य गुरूजी के शिष्य परिवार में सबसे बुजुर्ग शिष्य जिन्हें आध्यात्म की गहनतम उंचाईयों पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय कृपावंत पूज्य गुरूजी को है, ऐसा स्वयं श्री बुआ साहब ने माना है। बुआ साहब के अंतरंग परम मित्र डॉ. व्ही. ए. शिन्दे एवं उनकी पत्नी, जिन्हें बुआ साहब अपनी बहिन के रूप में मानते रहे हैं, इस विषय में अत्यधिक रूचि रखते थे और सतत् सुयोग्य मार्गदर्शक की तलाश में रहते थे। श्री बुआ साहब ने बताया कि इस परम स्नेही डॉक्टर दम्पत्ति ने अनेकों प्रयास मार्गदर्शक की खोज के लिये किये और उन्हें जो निराशा मिली उससे बुआ साहब ने यह दृढ़ निश्चय किया कि जब तक कोई सद्गुरू स्वयं ना बुलाये इस भागदौड़ में शामिल नहीं होंगे।

इसी दौरान सन 60–62 में मेरी मामीजी जो इन्दौर में रहती थीं और उनके गुरू पूज्य श्री रंगनाथ महाराज जो कि परमसंत श्री वासुदेवानंद सरस्वती जी (जिन्हें दत्त कहते थे) के परम प्रिय शिष्यों में से हैं, उन्हें स्पर्श मात्र से व्याध्यिों का उपचार करने में महारत हासिल थी, मेरी बीमारियों का जिनसे मैं अत्यधिक पीड़ित, दर्द और कमजोरी महसूस करता था उनका जिक्र किया तथा मेरा उपचार 2–3 दिन करवाया। मेरा उपचार करवाते समय कुछ मंत्रों का उच्चारण किया गया और आश्चर्य रूप से मेरी व्याधियों का निवारण भी हुआ और यह संयोग ही था कि श्री दत्तात्रय भगवान जो मेरे भी इष्ट देव हैं उन्हीं के स्नेही शिष्य से मुझे दीक्षा एवं गुरूमंत्र मिला साथ ही मेरी व्याध्यिों का निवारण भी हुआ। मंत्र

जप करने को जो मिला था वह था **ओम ऐं श्रीं ह्री क्लीं ग्लोम द्रां श्री दत्तात्रय गुरूभ्यो नमः।** इस श्रद्धा हीलिंग मंत्र से शारीरिक कष्टों से काफी राहत मिली किन्तु ध्यान की कोई प्रक्रिया नहीं बताई गई और जैसा कि मेरे मन में आया था कि मेरी आध्यात्मिक उत्कंठा की पूर्ती हेतु ही श्री दत्तात्रय भगवान के परम शिष्य श्री रंगनाथ महाराज को भेजा गया है वह अधूरी प्यास बनी रही एवं दीक्षा के 2 वर्ष उपरांत उन महाराज जी ने देह त्याग दिया। इस मंत्र एवं दत्तात्रय भगवान की पूजा तथा भगवती दुर्गा कवच के जाप ने शारीरिक एवं मानसिक लाभ काफी हुआ किन्तु आध्यात्म की उंचाई की उत्कंठ प्यास शांत नहीं हुई।

सन् 1980–81 में मेरी अनेक वर्षों की आध्यात्मिक उत्कंठा, आकांक्षा पूरी हुई और परम पूज्य गुरूजी के रूप में सद्गुरू तो क्या आत्मसाक्षात्कारी सदगुरू की प्राप्ति हुई। हमारे अंतरंग डॉक्टर शिन्दे तथा सौ. सईदा शिन्दे, जिन्हें आदरणीय गुरूजी ने राय साहब के यहां बालोद में अपनी दिव्यता से देखा था और रायपुर में दीक्षित किया था, उन्हीं ने समाचार दिया कि सदगुरू प्राप्ति हो चुकी है और मेरे विषय में जिक्र करने पर कृपा निधान ने दीक्षित करने की अनुमति दे दी है।

जैसा कि ऊपर व्यक्त किया है मुझे वास्तव में ऐसा आभास हुआ कि सद्गुरू मुझे कृपा कर बुला रहे हैं और ऐसा लगने लगा कि तुरंत रायपुर जहां गुरूजी विराजमान थे, पहुंच जाऊं। एक एक पल भारी पड़ रहा था और ऐसा लग रहा था कि उनकी महान अदृश्य शक्ति मुझे सद्गुरू की ओर खींच रही है। बिना विलम्ब के मैं हवाई यात्रा द्वारा रायपुर गया और गुरूजी ने मुझे अत्यंत कृपानुग्रह पूर्वक अपने श्रीचरणों में शरण देकर तुरंत दीक्षा प्रदान कर जन्म जन्म की प्यास को शांत करके मुक्ति के मार्ग में

प्रशस्त कर दिया।

इस महानतम योगी, तपस्वी, ईश्वरावतार द्वारा दीक्षित होने पर साधना में प्रगति–ध्यान में एकाग्रता, तल्लीनता और समयावधि का निरंतर बढ़ना एवं ज्योति दर्शन में मगन और ओतप्रोत रहने का अवर्णीय अनुभव होने लगा।

इस अलौकिक अनुभव और परमसत्ता के निकट दर्शन का लाभ मेरी पत्नी डॉ. ओमबाला को भी मिले अतः कुछ समय उपरांत उन्हें रायपुर ले जाकर गुरूजी के दर्शन लाभ कराये।

मेरी पत्नी के मन में एक विचित्र झिझक और संकोच बैठ गया था कि पुरूष गुरू से दीक्षा नहीं लेनी चाहिये। परम शक्ति सम्पन्न अन्तर्यामी पूज्य गुरूजी को इस बात का बोध हो चुका था और ज्योंही हम उनका आशीष लेकर वापिस ग्वालियर जाने लगे, पूज्य गुरूजी ने मुझे बुलाया और एकांत में निर्देशित किया कि ''डॉ. ओमीजी को दीक्षा लेने हेतू परेशान न किया जाये, लेकिन वे स्वयं स्वैच्छा से दीक्षा लेना चाहें तो मैं उन्हें उसी प्रकार दीक्षा दूं, जिस प्रकार पूज्य गुरूजी ने मुझे दी है''।

कृपावंत को यह आभास था, किन्तु मुझे अवश्य आश्चर्य हुआ कि रायपुर से आने के कुछ दिन बाद ही ओमी जी ने स्वयं मुझसे अनुरोध किया कि वे परम पूज्य गुरूजी से दीक्षा लेना चाहती हैं। ओमी जी की झिझक और संकोच का समाप्त होना परम पूज्य गुरूजी के अद्‌भुत एवं जबरदस्त दिव्याकर्षण की अनोखी मिसाल है जो सदैव सद्‌गुरू में विद्यमान रही है।

मैंने सहर्ष उन्हें परम पूज्य गुरूजी के निर्देशानुसार दीक्षा प्रदान की। इस दीक्षा के उपरांत ओमी जी को साधना में परमसत्ता के दर्शन, ज्योति

दर्शन और अनेकानेक दिव्य अनुभूतियां हुईं, जिसका विस्तृत विवरण दिव्याम्बु निमज्जन में किया गया है, जो असाधारण और अकल्पनीय किन्तु सच्चाई की बेमिसाल अनुभूति है, जिसे गुरूवर स्वयं अच्छी तरह जानते हैं।

परम पूज्य गुरूजी अपने शिष्यो ंको आध्यात्म की उंचाई में ले जाने में पूर्ण रूप से सक्षम हैं और उनके शिष्यों की किसी भी तरह अवनति न हो, इस पर भी नियंत्रण रखने में भी सक्षम हैं। यद्यपि हमने गुरूजी के निर्देशानुसार ही ओमी जी को मार्गदर्शन दिया, पर उन्हें जो दिव्य अनुभूतियां हुईं थीं वह गुरू कृपा से ही सम्भव हुआ था।

थोड़े समय बाद हमारी स्वयं की साधना ठीक से होना बन्द हो गयी–ध्यान भी ठीक से नहीं लगा और हम चिन्ता में पड़ गये। उस समय पूज्य गुरूजी रीवा में डॉ. शिन्दे के यहां विराजमान थे। अविलम्ब हम रीवा पहुंचकर गुरू चरणों में अपनी विनती रखे और तभी गुरूजी ने बताया कि–

आपकी साधना हमने ओमीजी को ट्रांसफर कर दी है, इसलिये तुम्हारी रूक गई है। अब तुम आ गये हो तो उसे हम पुनः चालू कर देते हैं।

आश्चर्य कि उसी क्षण मेरी स्थिति पूर्ववत हो गई और मैं रीवा में ही पुनः आनन्द मगन रहने लगा। कुछ दिन गुरूजी का सामीप्य लाभ लिया और रीवा से जाने के पूर्व गुरूजी के चरणों में निवेदन किया कि एक बार मुझे **दिव्याम्बु** में डुबा दें। गुरूजी ने समझाया कि अभी पारिवारिक जिम्मेदारियां हैं और पूर्णतः डूबने पर यह भरोसा नहीं है कि वापिस आ सको।

विदा होने के पूर्व गुरूजी के पीछे **दिव्याम्बु** में डूबने के लिये पड़ गया। उस समय गुरूजी तख्त पर विराजे थे और हम लोग जमीन पर नीचे बैठे थे। गुरूजी ने हंसकर मुझे कहा कि मेरे सामने आसन लगाकर बैठो और मेरी तरफ देखो। मैंने जैसे ही नजर उठाकर उनकी ओर देखा तो देखता ही रह गया। गुरू जी का मुख मण्डल विशाल होता गया और उनकी आंखें भी विशाल होती गईं और जबरदस्त तेजोमय हो गईं जो तेज देखते ही मुझे ऐसा दिव्य नशा आया कि मैं उसी में उनकी कृपा से डूबता चला गया।

पूज्यवर ने ऐसा नशा चढ़ाया कि रीवा से ग्वालियर आने पर भी उसी में डूबा रहा और दो दिन बीत गये, किसी भी तरह की सुध बुध नहीं थी, न किसी काम को कर पा रहा था और न ही कोर्ट गया और न खाने पीने की सुध थी और न ही रीवा अपने ग्वालियर पहुंचने की सूचना दे पाया था। तीसरे दिन डॉ. शिन्दे का फोन आया। तब उन्हें अपने दिव्य नशे की जानकारी दी और पूज्य गुरूजी ने फोन से ही मुझे कहा कि **''बस बहुत हो गया, अब नशे से बाहर आओ और अपना काम काज शुरू करो''।** उनकी कृपा से, उनके आदेशानुसार धीरे धीरे यह दिव्य नशा उतरने लगा जिसका वर्णन करना तथा परम पूज्य द्वारा दिये गये दिव्य दर्शन का एवं उस परमानंद का शब्दों में बखान करना कतई सम्भव नहीं है। धन्य हैं परम पूज्य सद्गुरूजी जिनकी परमशक्ति की व्यापकता का बखान शब्दातीत है।

पूज्यवर की असीम कृपा से जो दिव्यानुभूति हुई उससे साधना में उत्तरोत्तर प्रगति, और ध्यान में प्रगाढ़ता, साथ ही ज्योति दर्शन में प्रखरता और तेजस्वीपन पसरता गया। उनका सामीप्य, जो हमें उनके

ग्वालियर आने पर साथ मे ंरहने पर हुआ, उससे अनेकों दिव्य अनुभवों के साथ साथ 'तत्व' का ज्ञान एवं मानव जीवन का हेतु उद्देश्य और प्रयोजन का भी बोध हुआ।

करूणासागर पूज्य गुरूजी की कृपा से हमने जाना कि हम मात्र एक शरीर नहीं अपितु उस परमात्मा परब्रह्म का अभिन्न, अविनाशी, अक्षय, शाश्वत किरण हूं, नित्य चैतन्य निज बोध रूप आत्मा हूं। पूज्य गुरूजी की असीम शक्तियों से हमारी आत्मशक्ति और वाक्शक्ति का विकास भी सम्भव हो सका है।

गुरूजी के सामीप्य से जो प्रगाढ़ता ध्यान में आई, वह एक नशा बनकर शरीर में व्याप्त हो गई, जिससे एक समय, इन्दौर में, शरीर की सुध–बुध तथा सारे शरीर में जकड़न एवं मेरूदंड में नीचे से विशुद्ध चक्र बेहद स्फुरण और गला CHOCK (घुटन) होकर जी मचलाने लगा तथा बेहोश सा हो गया, जिससे मल मूत्र विसर्जन का ज्ञान भी नहीं रहा। होश में आने पर पास में डॉक्टर और हमारे प्रिय मित्र भाऊ और उनकी पत्नी खड़ीं थीं, जिन्होंने बताया कि मेरा ब्लड प्रेशर व पल्स शून्यवत् हो गई थी। गुरूजी को इस घटना का ब्यौरा देने पर उन्होंने बताया कि ''तुम विशुद्ध चक्र पार नहीं कर पाये, वहां अटक गये''।

जैसा गुरूवर ने आदेशित किया है, उस मार्ग पर चलना जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। साथ ही उनकी कृपा से समस्त अवांछनीय आदतें, साथ में क्रोध, टेंशन कम होता गया तथा जीवन में धैर्य, स्थायित्व, शांति और भौतिक प्रगति जो एक ग्रहस्थ को आवश्यक है उसमें भी अप्रत्याशित वृद्धि हुई है।

गुरूवर के नाम स्मरण मात्र ने अनेकों बार दैविक व भौतिक परेशानियों एवं खतरों से हमे बचाकर पार लगाया है। जैसा कि गुरूजी ने बताया कि, अहंकार हमारा सबसे बड़ा शत्रु है और उस अहं पर नियंत्रण आध्यात्मिक प्रगति के लिये आवश्यक है। आज उन्हीं पूज्यवर की कृपा से हमें उन्होंने यह नियंत्रण कराना भी सिखा दिया। इससे जो परिपूर्णता का परमानंद प्राप्त हुआ है वह मात्र अनुभव किया जा सकता है।

कृपावंत करूणासागर द्वारा जो कुछ हमने पाया उसे व्यक्त करना असंभव है किन्तु उनकी विराटता का वर्णन करना हम शिष्यों का कर्तव्य मानते हुए उल्लेखित करना आवश्यक प्रतीत हो रहा है। ध्यान की अवस्था में एक बार टिहरी (गौरैया) काफी कर्कश स्वर में चीख रही थी और इस कारण व्यवधान हो रहा था। मानसिक रूप से निवेदन करने पर भी वह नहीं गई और चीखती रही। क्रोधावेश में हमने कहा कि अगर तू चीखी तो खैर नहीं और परिणामतः उसकी चीख सदा के लिये चली गई।

उसकी मौत से हमें एक ओर दुख हुआ दूसरी ओर यह भी ज्ञान मिला कि इस तरह के व्यवधान हमारी एकाग्रता की परीक्षा है और साधना में डूबने के लिये अधिक से अधिक एकाग्रता प्राप्त करना है।

आज उनकी असीम कृपा से घंटों, ध्यान और निर्विचार अवस्था में डूबे रहकर जो दिव्य अनुभूतियां और परमानंद की प्राप्ति हो रही है, जो अचिंत्य, लौकिक और दिव्य है, उसे व्यक्त कर पाना संभव नहीं है।

जैसा कि पूज्य गुरूजी ने आदेशित किया है कि हमारा काम है अपने आपको जानें और अपने आपको जानकर हमें जो अनुभव प्राप्त हुए

हैं, उन्हें संसार में, सारे जग में घर-घर जाकर व्यक्ति-व्यक्ति के पास जाकर उसका प्रचार व प्रसार करें।

ये हमारा कर्तव्य पूज्य गुरूजी ने निरूपित किया है। पूज्यवर ने यह भी आदेशित किया है कि अपने आध्यात्मिक अनुभवों को भले ही अन्य किसी को न बतायें, परंतु अपने गुरू परिवार को निःसंकोच अवश्य बतायें।

हम यहां प्रमाणिक और स्पष्ट रूप से बताना चाहते हैं कि गुरूजी की कृपा से ''पूर्णता'' जो अभी कोसों दूर है, उसे पा सकूं और यह आध्यात्मिक, दिव्य अनुभूतियां, सहज एवं सतत बनी रहें। उसके लिये प्रयत्नशील हूं। पूज्य गुरूजी ने बताया कि पूर्णता पाने के लिये चरित्र और बुद्धि से भय, लोभ, मोह, हर्ष तथा संशय निर्मूल होना जरूरी है और निराश हुए बिना यत्नपूर्वक अभ्यास/साधना करना चाहिये।

धन्य हैं हमारे दयावान सदगुरू जिन्होंने हमें सशरीर रहते हुए न केवल मार्ग दिखाया अपितु उस मार्ग पर चलाते हुए दिव्य ज्योति के रूप में आज भी हम सभी को पथ प्रदर्शन करने में संलग्न हैं। उनकी दिव्य उपस्थिति का आभास हम सभी कर रहे हैं। उनके श्री चरणों में सदा बना रहूं और उनकी अनन्त कृपा हम सभी पर बनी रहे यही विनम्र प्रार्थना है। मैं उनका चरण सेवक अगाध श्रद्धापूर्वक उनके बताये मार्ग का अनुपालन कर सकूं, यही मेरा अंतिम लक्ष्य है।

श्री संजीव भटजीवाले (इन्दौर)– गागर में सागर भरते हुए अनंत गुरू कृपा के विषय में उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि **''गुरूजी के बारे में कुछ भी कहना, कुछ भी लिखना बेमानी है, क्योंकि हम इसे पूरी तरह कह नहीं सकते और न ही पूरी तरह लिख सकते हैं''।**

पूज्य गुरूजी मेरे पिताजी को भाऊ, मां को ताई तथा मेरी पत्नी नीना को नानी कहते हुए बड़े स्नेह से कहा करते थे कि तुम सचमुच मेरी नानी हो। मार्च 1985 में जब वे गर्भवती थीं तो **पुत्रवती होने का आशीर्वाद दिया था।** जुलाई 1985 के अंतिम सप्ताह गुरूजी पिताजी के साथ बड़ौदा जहां मेरी पत्नी प्रथम प्रसव के लिये गई थी वहां पहुंचकर कहा था कि **''मैं किसी खास उद्देश्य से आया हूं।''** अगस्त 1985 के प्रथम सप्ताह में पिताजी के साथ गुरूजी ग्वालियर जाने लगे और मुझे इन्दौर में रोककर कहा कि तुम्हें बड़ौदा जाना है।

गर्भावस्था में तथा आगे भी नियमित जांचों में सब कुछ नार्मल है ऐसे संकेत मिलते रहे और हम सभी निश्चिंत थे। जैसा कि गुरूजी ने संकेत दिया था मुझे बड़ौदा जाना पड़ा, क्योंकि डिलेवरी होने के समाचार मिल रहे थे और 11 अगस्त को रात्रि में ऑपरेशन के जरिये लगभग 9 बजे पुत्र जन्म हुआ जिसका नाम आगे चलकर पूज्य गुरूजी ने प्रभव दिया था। पुत्र जन्म के समाचार पाते ही ग्वालियर पिताजी और गुरूजी को समाचार देने पर पूज्य गुरूजी बोले **''सब ठीक हो जायेगा, चिन्ता की कोई बात नहीं है''** पिताजी यह सुनकर सोचने में विवश थे कि **सब कुछ नार्मल के समाचार के बाद भी गुरूजी ऐसा क्यों बोले।**

अस्पताल जाने पर पता चला कि बच्चे के फेफड़ों में पानी भर गया है जिससे उसे आईसीयू में रखा गया हे तथा ऑक्सीजन और आवश्यक दवायें दी जा रही हैं और शीघ्र स्वस्थ हो जायेगा। यही समाचार जब ग्वालियर पिताजी को दिये तो उन्होंने कहा अब समझा कि पुत्र जन्म के समाचार देने पर गुरूजी ने कहा था कि सब ठीक हो जायेगा साथ ही गुरूजी की आज्ञा लेकर बड़ौदा जाने की बात भी की।

बच्चे की स्थिति लगातार बिगड़ रही थी और उसे हिचकी आने लगीं तथा सांस लेते समय छाती और गला अन्दर की तरफ जा रहा था जबकि उसका इलाज बड़ौदा के शिशु रोग विशेषज्ञ द्वारा चल रहा था। 12 एवं 13 अगस्त को यथावत स्थिति बनी रही और निरंतर बच्चे की हालत बिगड़ती जा रही थी और डॉक्टरों के अनुसार इंतजार के अलावा कोई रास्ता नहीं बचा था। जिसकी सूचना ग्वालियर गुरूजी एवं पिताजी को लगातार दे रहा था। पिताजी के आग्रह के बाद भी गुरूजी ने उन्हें बड़ौदा नहीं आने दिया।

14 अगस्त को रात्रि में डॉक्टर निराश होकर कहने लगे कि हमने अपने सभी इलाज कर लिये और बच्चे की अब बचने की उम्मीद नहीं है। उसकी हिचकियां बढ़ती जा रही हें छाती और गला अन्दर बाहर हो रहा है तथा ऑक्सीजन निकालते ही पूरा शरीर बच्चे का नीला हो जाता है।

बड़े भी वह कष्ट नहीं सह सकते जो बच्चा सह रहा है। अतः उसे ऑक्सीजन निकालकर इन कष्टों से निजात दिलाना उचित होगा। हमने डॉक्टर से बच्चे को ऑक्सीजन पर ही रहने की बात कहकर तुरंत पूज्य गुरूजी को सारी स्थिति बतला दी।

पूज्य गुरूजी ने तुरंत कहा कि **''डॉक्टर क्या समझता है। अगर वह इलाज नहीं कर सकता तो क्या बच्चा ठीक नहीं होगा। डॉक्टर से कहना आप अपना सारा इलाज बन्द कर दें, सब ठीक हो जायेगा''।**

फोन पर ग्वालियर यह वार्तालाप गुरूजी से करके हमने अस्पताल आकर डॉक्टर साहब से कह दिया कि आप ऑक्सीजन निकाल सकते हैं और सारे इलाज भी बन्द कर दें।

डॉक्टर ने सभी इलाज बन्द कर दिये और हम सारी रात खिड़की के कांच से आईसीयू में रखे अपने बच्चे को देखते रहे। सुबह डॉक्टर अपने दैनिक राउंड पर आया पर बच्चे को देखने भी नहीं गया।

रात से लेकर सुबह तक बच्चे का शरीर नीलेपन से नार्मल होता गया और शाम 5 बजे के करीब उसकी हिचकियां भी बन्द हो गईं और छाती तथा गला अन्दर आना जाना बन्द होकर बच्चा हाथ पैर हिलाने लगा। शाम को राउण्ड पर आये हुए डॉक्टर ने बच्चे को हाथ पैर हिलाते पाया तो सीधे हमारे कमरे में आकर कहा कि **यह तो असाधारण चमत्कार है जिसे हमने अपनी 30 वर्षों की डॉक्टरी में पहली बार देखा है। क्या आपने किसी और से इलाज कराया है?**

हम डॉक्टर साहब को क्या बताते कि इसको बचाने वाले स्वयं वह देवदूत है जो परमसत्ता से जुड़े हुए हैं। हमने जैसे ही पूज्य गुरूजी को ग्वालियर यह सुसमाचार देने को फोन किया तो हमारे कुछ कहने के पहले ही **गुरूजी बोले हमें सब पता है–सब ठीक है और भरपूर आशीषों से हमारी झोली भर दी।**

मार्च में पुत्रवती होने का आशीष, जुलाई में बड़ौदा जाकर किसी खास काम से आया हूं, और अगस्त में नार्मल डिलेवरी होने पर भी सब ठीक हो जायेगा भाऊ चिन्ता की कोई बात नहीं है, एवं डॉक्टरों द्वारा सारा इलाज बन्द करने के बाद जीवन दान देना पूज्य गुरूजी जैसी महान और परमसत्ता से जुड़ी दिव्य विभूति से हमारा जुड़ाव निश्चित ही हमें गौरवान्वित करता है जिसे न शब्दों में बांधा जा सकता है न कहा जा सकता है।

श्री अशोक (दादा) धर्माधिकारी (अमरावती) :– परम पूज्य सद्‌गुरू के सान्निध्य में हमने बचपन से ही अपने आपको कृपान्वित पाया है। उनके हमारे आसपास होने से जो हर्ष की और सुरक्षा की अनुभूति होती थी वह समय के साथ और मजबूत होती गयी। आज उम्र के इस पड़ाव पर आने पर जब पीछे मुड़कर देखता हूं तो केवल परम पूज्य सद्‌गुरू को सदैव हमारे साथ पाया है। बचपन से अब तक परम पूज्य सद्‌गुरू के सान्निध्य में बिताए हुए अनेक प्रसंग हैं और प्रत्येक प्रसंग अपने आपमें हमारे लिये एक नयी अनुभूति, आशीर्वचन है। सभी प्रसंगों का उल्लेख यहां करना संभव नहीं है। अतः कुछ महत्वपूर्ण प्रसंगों का विवरण यहां दे रहा हूंः–

हमारी बड़ी पुत्री सौ. सीमा देशमुख की शादी तय हुई थी। उसी समय 19 अप्रैल 1994 को परम पूज्य सद्‌गुरू का आगमन हमारे घर अमरावती में होने वाला था और संयोग से उस दिन श्री रामनवमी थी। रामनवमी के पावन अवसर पर परम पूज्य सद्‌गुरू का हमारे घर आगमन होने से हमारी खुशियों का तो कोई ठिकाना ही नहीं था। उस दिन भगवान श्रीराम के जन्म के समय दोपहर 12.00 बजे मैंने और मेरी पत्नी सौ. रजनी ने परम पूज्य सद्‌गुरू को ''आप ही हमारे लिये भगवान श्रीराम हो'' ऐसा कहते हुए स्नान करवाया। पश्चात परम पूज्य सद्‌गुरू को ही श्रीराम जानकर यथाविधि उनकी पूजा की।

दो वर्ष पश्चात 1996 में हमारी सबसे छोटी पुत्री सौ. विद्या (माधुरी) तामस्कर, जो बिलासपुर में रहती थी, को कन्या रत्न की प्राप्ति हुई। हम अपनी नातिन के नामकरण हेतु बिलासपुर पहुंचने के पश्चात हम मुंगेली परम पूज्य सद्‌गुरू के पास पहुंचे। जिस दिन हम मुंगेली पहुंचे संयोग से

वह रामनवमी का दिन था। हमने जैसे ही परम पूज्य सद्गुरू को प्रणाम किया। उन्होंने कहा ''उस रामनवमी को राम आपके घर में थे और आज आप राम के घर में हो।'' परम पूज्य सद्गुरू के इस प्रकार कहने पर हमने अपने आपको परम भाग्यशाली जाना। हम केवल अपने आपको ही नहीं अपितु अपने संपूर्ण गुरू परिवार को परम भाग्यशाली मानते हैं जो हमें परम पूज्य सद्गुरू के आशीर्वचन प्राप्त हुए हैं।

ऐसे ही एक और प्रसंग में मैं और मेरी पत्नी सौ. रजनी परम पूज्य सद्गुरू को नहला रहे थे, जैसे ही हमने जल डालना आरंभ किया, उन्होंने अपने श्रीमुख से पुरूष सूक्त के मंत्र का उच्चारण किया। वह था–

हरी ओम् सहस्त्रशीर्षापुरूषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।

स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांड्गुलम्।।

मंत्रोच्चारण के पश्चात ''यही अभिषेक है, हो गया अभिषेक'' कहकर आशीर्वाद दिया। यह भी बताया कि मैंने सौ. रजनी को इसलिये स्नान कराने दिया, क्योंकि किसी जन्म में ये मेरी माँ थी।

श्री गजानन बडयालकर (दुर्ग) :– तेल्हारा के बाद जब गुरूजी दुर्ग आये तभी से आपको गुरूजी का सान्निध्य प्राप्त हो गया था। आपने अपने संस्मरणों को याद करते हुए बताया कि वे स्वयं और श्री चित्रनाथ मिश्रा गुरूजी के बॉडीगार्ड की तरह सदैव साथ रहते थे। तरूण टॉकीज के पास के मद्रासी होटल की चाय गुरूजी को अच्छी लगती थी, जहां उनके साथ श्री गजानन जी और मिश्रा जी अक्सर जाते थे। भोजन के रूप में पूज्य गुरूजी चाय, डबल रोटी पर निर्भर थे। श्री गजानन जी ने बड़ी सरलता से बताया कि वे स्वयं अपने बड़े भाई के ऊपर आश्रित थे।

अतः गुरूजी की भोजन व्यवस्था सही ढंग से नहीं कर पाते थे। **पैसों की जब कभी व्यवस्था हुई** श्री गजानन जी के साथ रहने वाला लड़का देवराज आकोटकर होटल से **खाने का डिब्बा लाकर गुरूजी को देता था। अन्यथा यह महान व्यक्तित्व डबल रोटी और चाय में जीवन यापन करते हुए साधना की चर्मोत्कर्ष स्थिति में जी रहा था।**

श्री कृष्णा गुप्ता के घर में जब गुरूजी रहते थे तब उनके पास एक पीतल का स्टोव था, जिस पर गुरूजी काली चाय स्वयं बनाकर पीते थे तथा हमें एवं मिश्राजी को भी पिलाते थे। आध्यात्म की गहराईयों में ले जाकर अपने अनुभवों से हमें कृतार्थ करते थे तथा कभी कभी यह सिलसिला सुबह 4 बजे तक चलता था। मेरे बड़े भैया की दुकान जिसमें सोना–चांदी की गलाई होती थी, उसमें गुरूजी आते जाते रहते थे। बड़े भैया ने एक दिन गुरूजी को बताया कि गजानन रात भर सोता नहीं है और बैठा रहता है। गुरूजी ने बोला कि ''आपका कोई नुकसान तो नहीं करता, दुकानदारी पूरी करता है और रात उसकी है''।

बसंत टॉकीज दुर्ग में टेन कमांडर फिल्म लगी थी, जिसे हम एवं मिश्राजी पूज्य गुरूजी के साथ देखने गये। यह फिल्म ईसा मसीह के जीवन से संबंधित थी, जिसके बारे में गुरूजी ने हमें बड़ी बारीकियों के साथ ईसा मसीह के जीवन चरित्र के बारे में बताया था।

हम लोग रात दस बजे रिटायर्ड जज श्री विजय शंकर दुबे की मनिहारी की दुकान जो प्रभात टॉकीज के पास थी, वहां जाकर बैठते थे। अनेकों विषयों पर चर्चा होती थी और आध्यात्म की गहराईयों का सूक्ष्म विश्लेषण पूज्य गुरूजी द्वारा सुनकर हम लोग कृतार्थ होते थे।

उनकी महान कृपा से अभी अप्रेल 2013 में सिर के ऊपर से प्रकाश वाला चक्र निकला एवं दस मिनिट बाद पुनः वहीं से वापिस अंदर आ गया। पूज्य गुरूजी की कृपा से आज मैं अपने आप में डूबा रहता हूं। पूज्यवर के दर्शन भी मिलते रहते हैं और सदैव गुरूजी साथ बने रहते हैं। कोई इच्छा शेष नहीं रह गई है—लिखाई—पढ़ाई सब बंद होकर अपने में डूबे रहने की क्रिया मात्र रह गई है।

श्री नीलेश दुबे (भोपाल) :— सद्गुरू कौन हैं? कुछ पुस्तकों में पढ़ने को मिला कि सद्गुरू वो हैं जो आपको किसी भी सीमा में नहीं बांधते बल्कि निर्बन्ध करते हैं। हमारे गुरूजी ने हमें किसी प्रकार की सीमाओं में नहीं बांधा न ही कोई विधि विधान के बन्धनों से आबद्ध किया है। पूज्य गुरूजी ने हमारा दायित्व ग्रहण कर विमुक्ति की दिशा में हमेशा अग्रसर किया है। गुरूजी सदैव कहते हैं—''मैं शिष्य नहीं बनाता परन्तु समय काल परिस्थिति के अनुरूप कालान्तर में आप मेरे जैसे हो जायें— यह राह दिखाता हूं''। हमारे सद्गुरूजी ने हमें निर्बन्ध करने की दिशा में अगसर किया है।

परम पूज्य गुरूजी आध्यात्मिक रूप से उच्चतम अवस्था में हमेशा रहे, परन्तु सांसारिक आचार व्यवहार का भी सदैव पूरा पालन करते थे। मुंगेली आश्रम पहुंचने वाले प्रत्येक व्यक्ति का यथोचित सत्कार करने हेतु सदैव सजग रहते थे। अतिथि के नाश्ता, भोजन एवं आवास का वे स्वयं पूरा ख्याल रखते थे। उन्होंने कहा है—''हमें सिक्के के दोनों पहलू चाहिये (आध्यात्मिक एवं भौतिक) और वह भी पूरा चाहिये। ये वस्त्र जो हमने पहने हैं, जो हमने भोजन किया है, वह हमें इस समाज से ही प्राप्त हुआ

है, हमें उनका भी ऋण चुकाना चाहिये।'' शिष्यों एवं गुरू परिवार द्वारा प्रेषित किये गये आमंत्रण एवं पत्रों के संबंध में प्रत्येक पत्र को सुनकर उसका अनिवार्यतः प्रति उत्तर भेजा करते थे। उन्होंने इसे व्यवहार कहा है।

आध्यात्म एवं संसार का इतना सुन्दर संयोजन आज तक देखने में नहीं मिला। हमारा मानना है कि परम पूज्य गुरूजी के प्रत्येक वाक्य सभी के लिये प्रेरणादायी एवं अनुकरणीय हैं, उन्होंने एक बार कहा है—''हमेशा सोच समझकर बोलना चाहिये शब्द ब्रह्म होते हैं। मैं अनावश्यक कुछ नहीं बोलता।''

अतः आज जब गुरूजी हमारे बीच शरीर रूप में नहीं हैं। उनके द्वारा बोले गये वाक्य ही हमारे मार्गदर्शक हैं। उनका प्रत्येक शब्द हमारे लिये आदेश है। उनके द्वारा निर्धारित पथ पर चलते हुए हम भी उनके जैसे हो सकेंगे, ऐसा दृढ़ विश्वास मन में होना चाहिये। गुरूजी ही प्रथम हैं और वे ही अंतिम हैं। ऐसी धारणा से हमारी उन्नति अवश्य होगी।

श्रीमती शकुन्तला शुक्ला (शहडोल) :— परम पूज्य गुरूजी के महाप्रयाण के समाचार सुनने के कारण महान दुख और संताप व असीम वेदना से घिर गईं थीं और साथ में गर्भवती होने के कारण अंतिम दर्शन के लिये मुंगेली जाने में असमर्थ थीं। श्रीमती शुक्ला दो दिन तक निराहार रहीं। उन्हें नींद भी नहीं आ रही थी। दूसरे दिन रात 12 बजे अश्रुधारा के बीच कमरे में प्रकाश हुआ और पूज्य गुरूजी पलंग के पास खड़े दिखे।

पूज्य गुरूजी ने डांटते हुए श्रीमती शुक्ला को कहा कि सद्‌गुरू कभी मरा नहीं करते। उठो, भोजन करो और आराम करो। जो बच्चा जन्म लेने वाला है, उसे कष्ट न दो। विश्वास रखो, सद्‌गुरू सदैव तुम्हारे पास हैं।

दो कन्याओं की माता श्रीमती शुक्ला को इसके बाद पुत्र रत्न की भी प्राप्ति हुई। हमारे पास जो जानकारी है उसके अनुसार पूज्य गुरूजी द्वारा महासमाधि के बाद भी 500 वर्ष तक मागदर्शन का जो आश्वासन गुरू परिवार को मिला है, सम्भवतः श्रीमती शुक्ला जी प्रथम भाग्यशाली शिष्या हैं जिन्हें गुरूजी का दर्शन लाभ मिला एवं इस आश्वासन की सत्यता प्रमाणित हुई है।

हमारे गुरूजी अनेक जन्मों की साधना और आध्यात्म के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचकर परमसत्ता से जुड़े एक ऐसे सद्‌गुरू के रूप में हमें मिले जिनके जीवनकाल को यदि ध्यानपूर्वक देखा जाये तो समझ में आता है कि श्री गुरूजी ने वेदांत और व्यवहार, दोनों पहलुओं को पूर्णरूपेण प्रामाणिकता के साथ जिया है। श्री गुरूजी के सान्निध्य में आने वाले आध्यात्मिक पिपासुओं की आध्यात्मिक उन्नति अत्यंत तीव्र गति से हुई है। ऐसे कितने ही साधक थे, जिन्होंने विभिन्न मार्गों, साधना–पद्धतियों से कई वर्षों तक साधना की लेकिन किसी एक स्थिति के बाद उनकी प्रगति किसी विशेष कारण से नहीं हो पा रही थी, ऐसे साधकगण जब श्री गुरूजी की शरण में आये तो तत्क्षण उन्होंने उस स्थिति को पार कर गहन–दुर्लभ आध्यात्मिक स्थिति और अनुभूतियों का बोध किया। श्री गुरूजी के निकट आनेवाले सभी साधकों का यह अनुभव रहा है कि विभिन्न संप्रदायों, पंथों आदि की पुस्तकों में जो आध्यात्मिक अनुभूतियां लिपिबद्ध हैं, वे श्री गुरूजी की शरण में आने वाले साधकगणों को सहज ही उपलब्ध हुईं हैं।

ऐसे बहुत से प्रसंग श्री गुरूजी की जीवनी ''दिव्याम्बु निमज्जन'' में वर्णित हैं। संक्षेप में इन अविस्मरणीय वेदांत और व्यवहार की गुरू कृपा के अंजन की महत्ता का यहां स्मरण करना प्रासंगिक होगा।

1. जब हमारे गुरूजी **जार्जटाऊन (दक्षिण अमेरिका) प्लेनटेन वॉक प्लाट नम्बर–4** स्थित घर में रह रहे थे और उनकी आयु नौ वर्ष की

थी, तभी उनके घर के समीप स्थित गंदे तालाब की सफाई हेतु एक मुस्लिम ईमानदार नामक व्यक्ति तैयार हुआ। वह व्यक्ति भोजन, आवास एवं एक जोड़ी वस्त्र मात्र की अपेक्षा रखते हुए इस तालाब की सफाई करने जैसा निकृष्ट कार्य करने के लिये आया। यह व्यक्ति प्रत्येक दिन कार्योपरांत खुशी–खुशी केवल हमारे गुरूजी (बालक वासुदेव) के साथ खेलता और उन्हें खुश रखने का प्रयास करता रहता। ईमानदार ने यह तालाब लगभग चार माह में साफ किया और कार्य के अंत में जब उससे पूछा गया कि उसने यह गंदा कार्य करना क्यों स्वीकार किया तो उसने हमारे गुरूजी (बालक वासुदेव) की ओर इंगित करके कहा–**मैं केवल इस बालक के लिए आया था''** और वह वहां से चल दिया। लगभग दो सौ गज सीधे मार्ग में जाने के पश्चात वह अदृश्य हो गया।

यह अद्‌भुत घटना प्रमाणित करती है कि हमारे श्री गुरूजी का सानिध्य एवं मार्ग दर्शन प्राप्त करने हेतु न केवल लौकिक व्यक्ति वरन पारलौकिक हस्तियां भी लालायित रहती थीं।

2. जब हमारे गुरूजी ईश्वर खोज में रामलीला मण्डली के साथ **हुमनाबाद (महाराष्ट्र)** पहुंचे थे तो वहां श्री गुरूजी को **ख्वाजा मोइनुद्‌दीन चिश्ती** का दर्शन हुआ। इसी दर्शन के समानान्तर हुमनाबाद में निवास कर रहे एक मुस्लिम धर्मनिष्ठ व्यक्ति जो कि ख्वाजा साहेब के दर्शन हेतु एकांतवास कर तपस्यारत् रहे, उन्हें ख्वाजा साहेब के साक्षात् दर्शन हुए। उस वृद्ध व्यक्ति ने श्री गुरूजी को अपने नाती शेरखान के माध्यम से घर बुलाया और श्री गुरूजी

को देवदूत की संज्ञा देकर रूंधे कंठ से भावावेश में बोला ''आपके कारण ही मुझे ख्वाजा साहेब के साक्षात् दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ।''

यह प्रमाणित करता है कि हमारे पूज्य गुरूजी का आध्यात्मिक आभामण्डल इतना प्रखर था कि उनके आसपास साधनारत् आध्यात्मिक जिज्ञासुओं, साधकों आदि का स्वयंमेव मार्ग प्रशस्त होकर उन्हें उनके अभीष्ट की प्राप्ति हो जाया करती थी।

3. सन् 1935 के आरंभ में जब श्री गुरूजी ने अकोला, भुसावल (महाराष्ट्र) से इलाहाबाद जाने के लिए ट्रेन यात्रा की तभी यात्रा के दौरान श्री गुरूजी की भेंट एक **अघोरी बाबा** से हुई। यह अघोरी बाबा श्री गुरूजी पर **त्राटक** के माध्यम से अपनी गुप्त मानसिक शक्ति का प्रयोग कर अपने चहेतों, शिष्यों आदि के समक्ष अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना चाहता था किन्तु कुछ घंटों बाद ही जबलपुर स्टेशन पर यह नतमस्तस्क हुआ और गुरूजी से प्रेम–व्यवहार करने लगा। तभी श्री गुरूजी ने उससे अनुमति लेकर उसके बारे में बताया– ''आपके गुरूजी अब जीवित नहीं हैं। आपकी एक पत्नी और तीन बच्चे गांव में हैं, जिनका परित्याग आपने असहाय स्थिति में कर दिया है, अतः अगर आप मेरी सलाह मानें तो पुनः उनके पास जायें तथा एक सामान्य गृहस्थ का जीवन प्रारंभ करें।''

इस घटना से अघोरी बाबा को वास्तविक आध्यात्मिक जीवन का बोध हुआ और बाबा जी घर लौटने को तैयार हुए। इस प्रकार अघोरी बाबा को उचित आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्रदान

करते हुए हमारे गुरूजी ने बाबा जी का हृदय परिवर्तन कर उन्हें सही दिशा दी।

4. हमारे गुरूजी **पैठण (महाराष्ट्र)** में संत एकनाथ के साक्षात् दर्शन प्राप्त करने एवं उनके निर्देशानुसार जब अयोध्या पहुंचे तो वहां श्री गुरूजी ने **वेंकटेश मंदिर** में आश्रय लेकर अपनी साधना आरंभ की। चूंकि श्री गुरूजी बिना कुछ खाये–पिये अपने कमरे में लगातार 6–8 घंटे काष्ठवत साधनारत् रहते थे। अतः ऐसे अद्‌भुत एवं सच्चे ईश्वर खोजी से भेंट करने की इच्छा वेंकटेश मंदिर के मठाधीश **स्वामी राम प्रपन्नाचार्य जी** ने व्यक्त की। एक रात्रि स्वामी जी ने श्री गुरूजी को अपने कक्ष में बुलवाया तथा दोनों के मध्य लंबे समय तक साधना संबंधी विचार विमर्श हुआ। स्वामी जी यह जानना चाहते थे कि किस प्रकार की साधना श्री गुरूजी करते हैं और उनके अनुभव क्या हैं? श्री गुरूजी ने विस्तारपूर्वक उन्हें अपनी साधना तथा अनुभवों के विषय में बताया, साथ ही संत एकनाथ के प्रत्यक्ष दर्शन–लाभ एवं उनके द्वारा दिये गये दिशा निर्देशों से स्वामी जी को अवगत कराया।

स्वामी जी श्री गुरूजी के अनुभवों एवं आध्यात्मिक दर्शनों से अत्यंत प्रभावित हुए। स्वामी जी ने तब श्री गुरूजी को आगे अभ्यास हेतु **रामानुज पंथ** के साधना संबंधी कुछ सुरक्षित रहस्य बताये। स्वामी जी द्वारा दी गई गोपनीय पद्धति से कुछ दिनों के अभ्यास उपरांत ही इसके परिणाम मिलने लगे। श्री गुरूजी परमानंद में डूब गये। उन्हें रहस्यमय शब्द सुनाई देने लगे। पवित्र ग्रंथों के मंत्र तथा

उद्धरण उनके मानस पटल में उभरने लगे। श्री गुरूजी ने इन अनुभवों से स्वामी जी को परिचित कराया।

स्वामी जी इन अनुभवों को सुनकर अत्यंत आश्चर्यचकित एवं प्रसन्न हुए क्योंकि हमारे गुरूजी ने इस गोपनीय साधना की सत्यता एवं वैधता को कुछ दिनों में ही प्रमाणित कर दिया, जो कि वर्षों से स्वामी जी का कोई भी शिष्य न कर सका था।

इस घटना से यह प्रमाणित होता है कि हमारे श्री गुरूजी सच्चे ईश्वर खोजी एवं योग–प्रतिष्ठित सिद्ध पुरूष थे जो आध्यात्म की किसी गोपनीय साधना की प्रमाणिकता एवं वैधता को सिद्ध करने में सक्षम थे।

5. सन् 1939 के बाद जब श्री गुरूजी तेल्हारा में औषधालय खोलकर एक चिकित्सक के रूप में जब लोगों की निःशुल्क सेवा कर रहे थे तभी उनकी भेंट डॉ. बाबू भिड़े (एलोपैथिक चिकित्सक) से हुयी। इसी बीच डॉ. भिड़े तथा उनका एक दल **अंगुल बाबा** जो कि भगवान एवं अवतार के रूप में प्रसिद्ध हो रहे थे, उनके दर्शन हेतु वे काफी उत्सुक थे।

डॉ. भिड़े ने अंगुल बाबा के दर्शनार्थ जाने की योजना जब श्री गुरूजी को बतायी तो श्री गुरूजी ने उनसे इतना पूछा कि यदि आपका उद्‌देश्य केवल अंगुल बाबा को देखना ही है, तो इतना कष्ट उठाने एवं धन अपव्यय करने की क्या आवश्यकता है? श्री गुरूजी ने कहा–''आप उसे अपने घर में ही बैठकर देख सकते हैं।''

डॉ. भिड़े इस प्रस्ताव से सहमत हो गये तब श्री गुरूजी ने योग विद्या की एक विशेष विधि उन्हें नियमित अभ्यास हेतु दी। इस अभ्यास से उन्हें तीसरी रात्रि में ही ध्यान की अवस्था में एक बालक की श्यामवर्णी, कुरूप, उदास एवं घृणास्पद आकृति दिखी जो कि उड़ीसा का चमत्कारिक बालक **अंगुल बाबा** ही था।

डॉ. भिड़े ने श्री गुरूजी के समक्ष इस अनुभव का वर्णन किया। इस संबंध में श्री गुरूजी ने सत्य स्पष्ट करते हुए बताया कि–दिव्य पुरूषों की आकृति से सदैव प्रकाश प्रस्फुटित होता है तथा वे सुनहरे प्रकाश के चक्र से घिरे रहते हैं। श्री गुरूजी ने कहा–''इस बालक के संबंध में आप स्वयं निष्कर्ष निकालने के लिए स्वतंत्र हैं और एक सप्ताह में ही इस बालक की चमक लुप्त हो जायेगी।'' और एक सप्ताह बाद ही अंगुल बाबा को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया।

इस घटना से स्पष्ट होता है कि श्री गुरूजी, अपने शिष्यों या उनके आसपास के लोगों को झूठे आध्यात्मिक चमत्कारों, ठग, वेषधारी, साधु–संतों से सुरक्षित कर वास्तविक आध्यात्मिक मार्ग एवं उपलब्धियों का बोध कराने में सक्षम थे।

6. तेल्हारा में उर्दू शाला के प्रधानाध्यापक श्री मज़हर खान को श्री गुरूजी ने आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्रदान किया। श्री गुरूजी ने उन्हें **कुरान एवं सूफी संतों की जीवनी के गूढ़ार्थ एवं रहस्यों** का अनुभव कराया। परिणाम स्वरूप वे श्री गुरूजी के प्रथम मुस्लिम शिष्य बने और उन्होंने श्री गुरूजी से कुरान शरीफ का किसी सरल

भाषा में अनुवाद करने का आग्रह किया, ताकि जन साधारण उसमें निहित परमसत्य को समझ सके। मज़हर खान को यह पूर्ण विश्वास हो गया था कि श्री गुरूजी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन से ही विभिन्न धर्मावलम्बियों में आपसी सद्भाव और आदर का विकास संभव है और आज धर्म के नाम पर समाज में जो द्वेष एवं अत्याचार पनप रहे हैं, इसका सम्यक् समाधान श्री गुरूजी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन में ही निहित है।

7. श्री गुरूजी सेठ हनुमानदास के साथ जब तेल्हारा से वृन्दावन की यात्रा पर गये तो हनुमानदास ने श्री गुरूजी की भेंट अपने गुरू, **टोपीकुंज के महंत** से करवायी। साथ ही श्री गुरूजी की भेंट टोपीकुंज महंत के एक परम शिष्य **प्रताप चन्द्र चाण्डक** से भी हुयी। प्रताप चन्द्र चाण्डक, श्री गुरूजी से मिलकर इतने प्रभावित एवं भावविभोर हुए कि उन्होंने श्री गुरूजी के सम्मुख यह स्वीकार किया कि यद्यपि पिछले 12 वर्ष उसने टोपीकुंज के महंत के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं सानिध्य में एक शिष्य के रूप में व्यतीत किए हैं, किन्तु उन्हें कभी किसी आत्मिक उन्नति का अनुभव नहीं हुआ और न ही किसी प्रकार की दिव्य अनुभूति हुयी।

वे श्री गुरूजी के समक्ष विलाप करने लगे एवं श्री गुरूजी से सहायता और मार्गदर्शन हेतु अनुरोध करने लगे। श्री गुरूजी ने उनकी सच्ची भावना का ध्यान रखते हुए उनकी आध्यात्मिक सहायता करना स्वीकार किया किन्तु श्री गुरूजी ने कहा कि आपके संबंध आपके गुरू टोपीकुंज महंत से यथावत ही रहना चाहिए।

श्री गुरूजी ने उन्हें ध्यान की एक विशेष विधि सिखायी जो कुछ ही दिनों में फलदायी होने लगी। चौथे दिन ही **राधा जी के दर्शन** की उनकी इच्छा पूर्ण हो गई।

इसी प्रकार वृंदावन स्थित संस्कृत महाविद्यालय के छात्र भी श्री गुरूजी से आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु किसी भी सीमा तक त्याग करने के इच्छुक थे। छात्रों ने श्री गुरूजी से कहा कि जहां आप रहेंगे, वहीं हम भी रहेंगे, चाहे हमें वृक्ष के नीचे ही क्यों न रहना पड़े।

इस प्रकार श्री गुरूजी के सानिध्य का फल इतना तीव्र एवं प्रभावी था जो कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी भी आध्यात्मिक आकांक्षी को उन्नत करने में या उसकी बाधाओं को दूर कर आध्यात्मिक पथ में अग्रसर करने में सक्षम था।

8. हमारे श्री गुरूजी सन् 1960 के बाद तेल्हारा से दुर्ग आये जहाँ उन्होंने संगीत महाविद्यालय की स्थापना की। जहां संगीत के विद्यार्थियों को श्री गुरूजी द्वारा आध्यात्मिक मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ। हमारे गुरूजी को उन लोगों के विषय में पूर्व ज्ञान हो गया था जो कि भविष्य में उनके शिष्य बनकर आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्राप्त करने वाले थे। इनमें से एक शिक्षिका कुमारी कृष्णा गुप्ता हैं। जो कि श्री गुरूजी से मिलने के पूर्व ही कई वर्षों से अभ्यास कर रहीं थीं। कृष्णा गुप्ता के उपास्य स्वामी विवेकानंद जी थे।

कृष्णा गुप्ता ने जब अपने उपर्युक्त आध्यात्मिक गुरू के चयन हेतु कुछ दिनों तक उपवास कर प्रार्थना की, तो उन्हें स्वामी

विवेकानंद जी का स्वर सुनाई दिया। वह स्वर था—**मैं ही वह हूँ, उसका आशीर्वाद प्राप्त करो।" शीघ्र ही वे श्री गुरूजी से दीक्षित होकर उच्च आध्यात्मिक स्थिति को प्राप्त हुईं।**

9. इसी प्रकार **हरीशचन्द्र त्रिपाठी (वन विभाग अधीक्षक)** जो कि वर्षों से ध्यान—पूजा कर रहे थे, लेकिन हर संभव प्रयत्न के बावजूद भी उन्हें किसी प्रकार का आध्यात्मिक अनुभव नहीं हुआ था। वे श्री गुरूजी से आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करने के लिए बार—बार आग्रह करने लगे। उन्होंने यहां तक कहा कि जब तक श्री गुरूजी उन्हें आध्यात्म ज्ञान कराकर कृतार्थ नहीं करेंगे, वे श्री गुरूजी का घर नहीं छोड़ेंगे। श्री गुरूजी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। श्री गुरूजी ने उन्हें एक विशिष्ट आसन के विषय में समझाया। त्रिपाठी ने तत्परता से आसन ग्रहण कर लिया। श्री गुरूजी ने उनकी पीठ थपथपाते हुए कहा—**आगे बढ़ो।**

कुछ क्षणों में त्रिपाठी जी को अपने शरीर एवं आसपास का जरा भी बोध नहीं रहा। वे अंतर्जगत में सचेतन अवस्था में प्रविष्ट हो गये, जिसके लिये वे वर्षों से ध्यान कर रहे थे। इतने लम्बे समय तक किया हुआ आध्यात्मिक अभ्यास उन्हें नीरस और अर्थहीन प्रतीत हुआ। शीघ्र ही उन्होंने श्री गुरूजी से दीक्षा ग्रहण की। श्री गुरूजी के रूप में एक सशक्त एवं दिव्य मार्गदर्शक प्राप्त कर लिया।

पूज्य गुरूजी ने हर शिष्य को हर समय आशीष देते हुए कहा है कि कभी भी, कहीं भी, किसी भी आपत्ति—विपत्ति में पड़ने पर गुरूजी को

मात्र याद करने से वहीं आपकी सहायता के लिये कोई आ जायेगा। ऐसा अनुभव हर शिष्य को है जिसका उल्लेख करना कठिन है। साथ ही शिष्यों द्वारा बताने पर भी गुरूजी को पूर्वाभास शिष्यों पर आने वाली विपत्तियों का होता था और शिष्यों को सहायता भी समय पर मिली है। इसी संदर्भ में गुरूजी की बेमिसाल व्यवहारिक क्षमताओं और कुछ चमत्कारिक उदाहरण यहां पर देना उचित होगा।

1. **डॉ. पंधेर, डॉ. व्ही.ए. शिन्दे** के हार्ट ऑपरेशन के समय सूक्ष्म रूप से पहुंचकर अपना आशीष और जीवनदान देकर कृतार्थ किया।

2. **श्री मुद्रिका प्रसाद मिश्र रीवा** के बालक का 1983–84 में भागकर बम्बई जाना और वहां उसको गुरूजी की डांट फटकार और अंत में डंडे की मार द्वारा घर वापिस भिजवाना और पीठ पर डंडे के निशान बालक द्वारा बताये जाना।

3. भोपाल गैस त्रासदी 1984 में गुरू प्रसाद पाण्डेय के पुत्र **रवि शंकर पाण्डेय** को बार बार गुरूजी की आवाज सुनाई देना कि घर वापिस चले जाओ। अनसुनी करने पर गुरूजी स्वयं दिखाई दिये और जोर से उसकी पीठ पर डंडा मारा तथा घर वापिस किया और उसको लौटाकर संकट में पड़ने से बचाना।

4. सन् 1985–86 में **रामरहीस मिश्र** को बिना बताये ही गुरूजी द्वारा आश्वस्त करना कि तुम्हें झूठे मुकदमे में फंसाया गया है। उन्हें बचने की उम्मीद नहीं थी पर गुरूजी ने कहा कि तुम चिन्ता न करना और निर्दोष साबित हो जाओगे।

5. **सुषमा शुक्ला शहडोल** को बार बार किसी आवाज द्वारा सोते से जगा देना और नाग के डंसने से बचाकर रक्षा करना।

6. **हरिलाल पंचगांव (शहडोल)** की बहू ने कीटनाशक दवाई पी ली थी और कोमा में चली गईं तथा डॉक्टरों ने जवाब दे दिया। गुरूजी से प्रार्थना करने पर दिव्य प्रकाश में ॐ का सिर से पैर तक बहू के शरीर पर घूमता दिखना और श्वेत वस्त्रों में गुरूजी बहू के सिरहाने आशीर्वाद मुद्रा में खड़े दिखाई दिये। उनके आशीष से बहू आधे घंटे में बात करने लगी जिसे देखकर डॉक्टर भी चकित थे।

7. **श्री संतोष कुमार पाण्डेय (शहडोल)** कूलर, जो स्टैण्ड पर रखा था, उसके अंदर फंसे हुए कबूतर को निकालने के लिये स्टैण्ड के अंदर जाते ही, बिजली का करंट लगने से विपत्ति में फंस गये। उन्होंने जोर से ''गुरूजी बचाईये'' चिल्लाया तथा मूर्छित हो गये। घर में कोई नहीं था। उन्हें जब होश आया तो पता चला किसी ने कूलर के स्टेण्ड से उन्हें बाहर खींचा था और उनके पैर में इतना बड़ा घाव था जैसे कुल्हाड़ी का प्रहार किया गया हो। ठीक होने में 4–5 माह लग गये थे। पूज्य गुरूजी की अद्‌भुत कृपा ने प्राण रक्षा की थी।

8. **सुधीर देशमुख (वर्धा)** से 1995 में स्कूटर से मुंगेली जा रहे थे। रास्ते में पेट्रोल समाप्त हो गया। बेबस होकर गुरूजी को याद किया तो कोई आकर पेट्रोल पम्प तक पहुंचने लायक पेट्रोल दे गया और अदृश्य हो गया।

9. **श्रीमती नावलेकर** ग्वालियर के ससुर के निधन के बाद उनकी आत्मा अतृप्त प्रेतात्मा के रूप में विचरण कर रहीं थी। वे काफी परेशानी में थी। पूज्य गुरूजी उनके कमरे में खिड़की के रास्ते सही समय पर पहुंचकर सिरहाने खड़े हो गये और उनके प्राणों की रक्षा करते हुए बताया कि यह अतृप्त प्रेतात्मा तुम्हें लेने आई थी। अब चिन्ता न करें, आपको कुछ नहीं होगा।

10. श्री भास्कर देशपांडे के चाचा **स्वर्गीय नीलकंठ देशपांडे** जी की पत्नी को लीवर की गंभीर बीमारी थी और डॉक्टरों के अनुसार स्थिति गंभीर थी। अतः उन्होंने अपने भतीजे भास्कर से मिलकर गुरूजी से प्रार्थना करने का आग्रह किया था। जब भास्कर देशपांडे जी गुरूजी के पास गये तो गुरूजी ने बताया कि बाला साहब (नीलकंठ देशपांडे) के घर (सूक्ष्म रूप से) रात में गये थे। उधर देशपांडे जी के घर पर आभास हुआ कि उनकी पत्नी के पेट पर हाथ फेरकर कोई चला गया था। उन्हें बीमारी से मुक्ति मिलने पर डॉक्टर उनके स्वास्थ्य लाभ से आश्चर्य चकित हुए।

11. पूज्य गुरूजी ने डॉ. भानु गुप्ता से एकाएक उन्हें रीवा ले चलने का आग्रह किया क्योंकि उन्हें पूर्वाभास हुआ कि **डॉ. सईदा शिन्दे** किसी विपत्ति में पड़ने वाली हैं। डॉ. सईदा शिन्दे सीढ़ियों से गिर गईं और डॉक्टर कान्हरे विभागाध्यक्ष सर्जरी, ने उन्हें एक माह तक आराम करने की सलाह दी क्योंकि सर पर एवं रीढ़ की हड्डी पर चोट के लक्षण थे जिससे मष्तिष्क पर भारीपन और मांसपेशियों में खिंचाव, चक्कर वगैरह आ रहे थे।

डॉक्टर सईदा शिन्दे आंखें बंद किये लेटी थीं तभी उन्हें लगा कि गुरूजी का हाथ उनके सिर पर रखा है। गुरूजी ने सिर पर हाथ फेरकर रीढ़ की हड्डी पर हाथ फेरा। तभी उन्हें लगा कि कोई द्रव मस्तिष्क में बांई ओर से दाहिनी ओर गिरा और फिर रीढ़ की हड्डी के अंदर नीचे की ओर जा रहा है। इसके बाद उन्हें हल्कापन महसूस हुआ। दूसरे दिन बिना किसी दवा के पूर्णतः आराम उन्हें मिल गया।

12. **श्री शांतिलाल जी लूनिया** की टायरों की दुकान बिलासपुर में बचाने के लिये पूज्य गुरूजी ने पश्चिम से पूर्व की ओर बहने वाली हवा का रूख पूर्व से पश्चिम की ओर कर दिया और सैकड़ों टायर जलने से बचा लिये गए।

13. **डॉ. पंधेर** मोटर साईकिल से जा रहे थे और दो ट्रकों की चपेट में आने वाले थे कि उन्होंने चिल्लाया गुरूजी बचाईये और तभी भारी भरकम डॉ. पंधेर तथा मोटर साईकिल को किसी अज्ञात शक्ति ने उठाकर रोड के किनारे कर दिया।

14. **डॉ. शिन्दे की छोटी बेटी** के हाथ में सूजन थी और बहुत दर्द था। उसने गुरूजी से कहा आज बहुत दर्द है, मैं परीक्षा में नहीं बैठ सकती एवं मेरा साल बर्बाद हो जायेगा। गुरूजी ने उसके हाथ को छुआ और कुछ ही देर में गुरूजी के हाथों में सूजन आ गई और डॉ. साहब की बेटी का हाथ ठीक हो गया था।

15. **डॉ. भानु गुप्ता** ने मुंगेली में सूखा पड़ने पर फसल को बचाने के लिये गुरूजी से प्रार्थना की। दूसरे दिन पता नहीं कहां से बादल आये ओर फसल सूखने से बचा लिया।

16. पूज्य गुरूजी 1982–87 के बीच अनेकों बार वर्धा गये हैं और श्री तकवाले जी के यहां विराजमान होते थे। गुरूजी के शिष्य कृष्णा उंवरकर रोजाना सुबह गुरूजी के दर्शनार्थ आते थे। एक दिन सुबह की बजाये 11.30 बजे आये तब गुरूजी ने देरी से आने का कारण पूछा और स्वयं ही बताते चले गये कि सुबह 7 बजे निकलकर कहां कहां होकर इतनी देरी से पहुंचे, जिसे सुनकर सभी अवाक् थे। गुरूदेव ने अपनी सर्वज्ञता का भान करा दिया तथा सतपुरूष के दर्शन समय पर करने की सीख भी दी थी।

17. इन्हीं उंबरकर के पिताजी गुरूजी से दीक्षा लेना चाहते थे और जब दीक्षा के लिये सामने बैठे तो गुरूजी ने दीक्षित करने से मना कर दिया और जानकारी चाही कि ये पहले से ही दीक्षित है तथा जानने पर पता चला कि माधवनाथ महाराज से बहुत पहले दीक्षा प्राप्त की थी। गुरूजी ने समझाईश दी कि यह संस्कार बार बार नहीं होता। आप मेरा स्मरण करें उसी से आपका काम बन जायेगा।

18. श्री तकवाले जी के साथ गारपीठ जंगल में जाते समय 10–12 वर्ष की एक बालिका का कार के सामने आकर बोनट से टकराना और तकवालेजी का ब्रेक लगाते–लगाते जोर से ''गुरूजी'' चिल्लाना हुआ। तभी गुरूजी बोले बाबा उसका समय आया था और वह बच गई। इसी तरह लौटते समय गुरूजी ने तकवाले जी को कार रोकने का कहा परन्तु श्री तकवाले जी पता नहीं कहां खोये हुए थे। तभी पूज्य गुरूजी ने जोर से आदेश दिया कि कार को रोक दें और तुरंत उन्हें कार का परीक्षण करने को कहा। श्री तकवाले जी अवाक्

रह गये जब उन्होंने देखा कि कार के दाहिने पहिये का नट लगभग खुल कर गिरने वाला था। इस प्रकार एक बड़ा हादसा टल गया था। ऐसे अनेकानेक प्रसंग प्रायः गुरूजी के हर शिष्य ने अनुभव किये हैं।

19. गुरूजी का नाम स्मरण जो कि रामबाण दवा के रूप में अनेकों शिष्यों ने अनुभव की है, यहां पर रीवा जिले की एक घटना इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। गुरू परिवार के किसी सदस्य को जहरीले सर्प ने डस लिया था। गांव से चिकित्सालय दूर होने व औषध ोपचार के अभाव में उस परिवार के वरिष्ठ सदस्य ने विवेकपूर्ण निर्णय लेते हुए परमपूज्य गुरूजी के चित्र के सामने एक कटोरी में जल लेकर श्रद्धा के साथ रखते हुए इस गंभीर संकट से उबारने हेतु प्रार्थना की और वह जल पीड़ित व्यक्ति को पिला दिया। पूर्ण श्रद्धा के साथ गुरूजी का नाम–स्मरण व्यर्थ नहीं गया। कुछ ही देर में चिकित्सा सुविधा मिलने के पूर्व ही सर्प का जहर पूरा उतर गया और पीड़ित व्यक्ति पूर्ण स्वस्थ हो गया।

20. त्रिकालदर्शी पूज्य गुरूजी ने राजू काण्णव के दादाजी श्री केशव काण्णव को अपने हाथ से प्रसाद दिया था तथा उनके घर जाकर परिवार को यह भी बता दिया था कि 7वें दिन शरीर छोड़ देंगे तथा सद्गति को प्राप्त होंगे, जो सत्य साबित हुआ। श्री कण्णव की आयु उस समय 89 वर्ष थी और उनकी उत्कट इच्छा गुरूजी के दर्शनों की थी। अतः दयालु और कृपालु सत्गुरू स्वयं उनके पास गये थे और जो उनके शरीर छोड़ने की भविष्यवाणी की थी, वह कोई सिद्ध पुरूष ही कर सकता है।

21. **जब गिट्टी का ढेर रक्षा कवच बन गया** और श्री राजेन्द्र जैन उनकी पत्नी श्रीमती सरोज एवं श्री जे. के. जैन एवं उनकी पत्नी श्रीमती मणी जैन की 1988–89 में हजार फुट गहरी खाई में कार गिरने से बच गई थी। बड़वानी की 5 किलोमीटर की घाटी की चढ़ाई पर जिस पर मात्र यह एक गिट्टी का ढेर गुरूजी ने रक्षा कवच के रूप में रख दिया था। इन्दौर में गुरूजी के पास पहुंचने पर उन्होंने जोर से भाऊ को पुकार कर कहा था कि तीर्थ यात्री आ गये हैं, **'जो कारक को छोड़कर स्मारक पूजने गये थे।'**

22. श्री संजीव भटजीवाले मई 1988 के अन्तिम सप्ताह में बड़ौदा अपनी पत्नी को लेने गये थे जहां 4–3–1988 को उनके छोटे पुत्र का जन्म हुआ था जिसका नाम पूज्य गुरूजी ने ही चित्भव रखा था। लौटते समय उनके मित्र डॉ. मुकुट शर्मा जो अमेरिका से आये थे वह भी साथ में इन्दौर कार द्वारा संजीव जी के आग्रह पर आ रहे थे। बड़ौदा से झाबुआ पहुंचने पर माचलिया घाट प्रारंभ होने पर संजीव ने अपनी कार की गति बहुत कम कर दी, पर घाट पर चढ़ते–चढ़ते कार का अपने आप संतुलन बिगड़ गया और कभी बायीं ओर, कभी दायीं ओर, लहराने लगी। आगे डॉ. मुकुट और पीछे की सीट पर उनकी पत्नी नीना एवं पुत्र चित्भव बैठे थे।

घाट के दाईं ओर गहरी खाई थी और अचानक गाड़ी पर नियंत्रण न रहना, गाड़ी का लहराना और अपने आप चढ़ाई होते हुए भी स्पीड बढ़ जाना, सभी को विस्मित और घबराहट होने के लिये पर्याप्त था। कुछ दूरी के बाद, मेरे जब सभी प्रयास कार को

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2

नियंत्रित करने में विफल हो गये तो कार के स्टेयरिंग, ब्रेक आदि से अपने हाथ पैर हटा लिये और कार जब खाई में गिरने वाली थी तो जोर से संजय जी ने ''गुरूजी'' पुकारा और कार अचानक खड़ी हो गई। जो खाई से 6 इंच दूर थी।

सभी जन विस्मित थे और नीचे उतरकर देखने पर पता चला कि कार के नीचे न कोई पत्थर था, न पड़ी हुई रेत पर कार के घिसटकर रूकने के चिन्ह थे जिसे देख कर डॉ. मुकुट ने कहा आपके जोर से गुरूजी को पुकारने पर गाड़ी को गुरूजी ने रोक कर हम सभी को जीवनदान दिया है, अन्यथा इस विषम परिस्थिति में अनहोनी हो जाती।

23. सुरेश फड़तरे गुरूजी के शिष्य वर्धा निवासी हैं। इनके खेत पर काम करनेवाले एक मजदूर को सर्प ने काटा। तुरंत उसे उपचार हेतु अस्पताल ले जाने की व्यवस्था की गई। सर्प बड़ा जहरीला था और मजदूर के पैर से लिपटा हुआ था। मोटर साईकिल पर ले जाते समय सर्प कुछ दूर घिसटता गया फिर नीचे गिर गया।

तमाम उपचारों के बाद योग्य डॉक्टरों की पूरी कोशिशों के बावजूद भी जब उसे बचाने की असमर्थता व्यक्त की गई, तभी सुरेश जी को यह दुखद समाचार दिया गया। श्री सुरेश जी तुरंत अस्पताल पहुंचे और डॉक्टरों से सलाह मशविरा किया। उस मजदूर के बच पाने की तमाम उम्मीदें जब नहीं रहीं तब श्री सुरेश जी अपने घर वापिस आकर पूज्य गुरूजी की तस्वीर के आगे एक कटोरी में पानी रखकर प्रार्थना करने लगे और अंत में वह पानी जो

गुरू प्रसाद बन चुका था, को ले जाकर अस्पताल में निःसहाय पड़े मजदूर को पिलाया। यह जीवनदान गुरूजी ने अपने शिष्य की अनुनय–विनय के बाद उस मजदूर को दिया था। उस चमत्कार को देखकर सेवाग्राम अस्पताल के डॉक्टर ठगे से खड़े रह गये।

ऐसे ही अनेक प्रसंग हैं जबकि पूज्य गुरूजी को अपने शिष्यों की आपत्ति–विपत्ति का पूर्वाभास सहज रूप से हो जाता था और श्री गुरूजी उसके निराकरण हेतु प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहायता, संरक्षण प्रदान करते थे, जो हर शिष्य के साथ घटित हुए हैं। ऐसे बहुत प्रसंग पूज्य गुरूजी की जीवनी ''दिव्याम्बु निमज्जन'' अथवा उद्‌बोधनों एवं अन्य साहित्य में विस्तार से मिल जायेंगे।

इस महान योगी और उनके द्वारा अपने ''गुरू परिवार'' के शिष्यों का उद्धार और मार्गदर्शन को सीमाओं में तो नहीं समेटा जा सकता क्योंकि जो असीम है, उसे हम सीमा देने के काबिल नहीं है। अतः पूज्य गुरूजी के ही शब्दों में ''प्रत्येक व्यक्ति जीवन में कुछ न कुछ पाना चाहता है, परन्तु पाता कौन है? वही जो खोजते–खोजते खो जाता है, उसी में जिसे खोजने निकलता है। उसके सिवाय सब कुछ भूल जाता है। बस फिर क्या? जैसे ही खोता है, उसे पा लेता है क्योंकि खोना ही तो पाना है। तो बस ''खो'' जा–

खुदी को ऐसा मिटा कि तू न रहे
तेरी हस्ती की रंगों बू न रहे
क्योंकि
खुदी को ना मिटाओ जब तक, खुदा नहीं मिलता।

हम सभी शिष्यों ने जिन्हें गुरूजी ने शुरू से ही अपनाया, सदैव गुरूजी के दिव्यत्व का अनुभव किया। उनसे औपचारिक या अनौपचारिक रूप से दीक्षित सभी व्यक्ति किसी न किसी रूप में आत्मज्ञान हेतु साधना अपने अपने तरीके से कर रहे हैं। इस संक्षिप्त लेख में गुरूजी का जीवन पूर्णतः सांसारिक दृष्टि से कैसा था, इसका विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे।

1. **श्रमशील एवं अध्ययनशील बालक :–** गुरूजी के बाल्यकाल के विवरण से हमें ज्ञात होता है कि वे पढ़ने में कुशाग्र थे और बचपन से ही सैकड़ों श्लोक, मंत्रादि उन्हें कंठस्थ हो गये थे। वे अपने नानाजी की दुकान पर भी जाते थे और जिम्मेदारी निभाते थे तथा भारत आने पर पशु चराने जैसा कठिन कार्य भी बिना किसी शिकायत के किया था।

2. **संकल्पित पति व पिता :–** विवाह बंधन में बंधने के बाद भी अपनी मान्यता के अनुरूप, गुरूजी ने परिवार की जिम्मेदारी पूर्ण गम्भीरता के साथ निभाई। गुरूजी ने सदैव कहा है कि साधना के लिये परिवार छोड़ना या जंगल में जाना आवश्यक नहीं है। इसलिए उन्होंने अपने परिवार के भरण–पोषण के लिये चिकित्सक का कार्य भी किया। एक सद्‌गृहस्थ की भांति अपने पुत्रों की देखभाल की और 60 वर्ष से अधिक आयु होने के बाद ही आत्म कल्याण का मार्ग समाज को बताने के लिये घर छोड़ा। इस समय पुत्रगण अपने–अपने व्यवसाय और परिवार में संलग्न हो चुके थे।

3. **सच्चे सलाहकार :–** ऐसा कोई विरला ही परिवारजन होगा जिसने किसी न किसी विषय पर पूज्य गुरूजी से सलाह न ली हो। सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, स्वास्थ्य संबंधी या आध्यात्मिक– शिष्यगण निःसंकोच पूज्य गुरूजी से उनकी राय एवं आदेश मांगते थे। पूज्य गुरूजी ने भी हमेशा तुरंत, एक सच्चे मार्गदर्शक की भांति, अपना मत दिया, जिसे गुरूपरिवारजन ने आदेश के रूप में स्वीकार किया।

बहुत से परिवारजन तो अपने नितांत एवं निजी मामले भी पिता या मित्र सदृश गुरूजी को बताते थे और समाधान या सहायता पाते थे। गुरूजी में शिष्यों को पिता, भाई, सखा, मार्गदर्शक के रूप में दर्शन एक साथ होते थे।

4. **दक्ष चिकित्सक :–** लम्बे समय तक पूज्य गुरूजी ने आयुर्वेद और होम्योपैथी चिकित्सा को परिवार पालन के लिये व्यवसाय के रूप में अंगीकार किया। ये सभी जानते हैं कि उनका उद्देश्य पैसा कमाना कभी भी नहीं था बल्कि उतनी ही राशि अर्जित करना था जिससे परिवार का खर्च चल सके।

यद्यपि दुर्ग में आने के बाद चिकित्सा का कार्य उन्होंने नियमित रूप से नहीं किया फिर भी जब कोई परिवारजन शारीरिक शिकायत बताते तो गुरूजी सरलता से आयुर्वेद या होम्योपैथी दवाईयां निर्धारित कर देते थे। इस निर्धारण में दवा के साथ साथ उनका आशीष भी शामिल था इसीलिये सभी व्यक्तियों पर उनकी दवाईयों का चमत्कारिक असर हुआ।

5. **अपरिग्रही गुरूदेव :–** 1980 के बाद से जब परिवारजनों की संख्या तेजी से बढ़ी, परिवारजन जब भी गुरूजी के दर्शनों को आते, अपनी अपनी श्रद्धा एवं क्षमता के अनुसार भेंट लाते यथा धोती कुर्ता, टॉवेल, घड़ी, सोने की अंगूठी, चैन, रेडियो, टेपरिकार्डर, स्वेटर, शाल, स्लीपर, धूप का चश्मा आदि।

शिष्यों का मन रखने के लिये गुरूजी इनका उपयोग कुछ समय के लिये अवश्य करते थे, परन्तु उन वस्तुओं में उनकी जरा भी आसक्ति नहीं थीं क्योंकि फिर वे कभी नहीं पूछते थे कि वह वस्तु कहां है या उसे लायें।

6. **वात्सल्यपूर्ण पितृत्व :–** अपने दर्शन के लिये आने वाले हर परिवारजन से वे यात्रा का विवरण पूछते कि कोई कष्ट तो आने में नहीं हुआ। जहां वे प्रवास में थे, उस गृहस्वामी की स्थिति के अनुरूप आगन्तुक से पानी, चाय, जलपान, भोजन, विश्राम के लिये अवश्य पूछते थे। वापिस जाने का आदेश भी वे आगन्तुक को कोई रास्ते में या अन्यथा असुविधा न हो इस दृष्टि से दिया करते थे।

उन्हें जो राशि शिष्यों द्वारा सम्मानपूर्वक भेंट की जाती थी उसी में से कुछ न कुछ शिष्यों को बरकत के तौर पर दे देते थे। ऐसे सैकड़ों परिवारजन होंगे जो पूज्य गुरूजी द्वारा दिये गये 5, 10, 50, 100 के नोट अभी तक अपनी पूजा में, धन पेटी में, सुरक्षित रखे होंगे। उनका शिष्यों को पैसा देना, उनके पिता तुल्य वात्सल्य को ही दर्शाता है।

7. **मर्यादा के धनी :–** गुरूजी दूसरों से कोई अपेक्षा नहीं रखते थे परन्तु उनका स्वयं व्यवहार मर्यादा पालन का जीवन्त उदाहरण रहा

है, जिससे अनेकों परिवारजनों को जीवन बदलने वाली शिक्षा मिली। गुरूजी सदैव सामने वाले को, आप कहकर सम्बोधित करते थे। उनके मुंह से तुम, तू, तेरा जैसे शब्द कभी किसी ने भी नहीं सुना।

प्रवचन के दौरान यदि किसी निषिद्ध शब्द का उपयोग आवश्यक होगा यथा आहार निद्रा, भय, मैथुन तो वे ऐसे शब्द को छोड़ देते । यह थी शब्दों की मर्यादा। यद्यपि वे धोती के नीचे अंग वस्त्र नहीं पहनते थे पर इस बात के प्रति सदैव, यहां तक कि गम्भीर बीमारी के दौरान सावधान रहते थे कि उनका शरीर उचित ढंग से ढंका रहे। महिलाओं की उपस्थिति में वे इस बात का विशेष ध्यान रखते थे।

अशक्तावस्था में यदि शौच जाना होता तो एक दो सेवक शिष्यों को छोड़कर उस कक्ष से अन्य को बाहर जाने को कहते थे। यह थी व्यवहार की मर्यादा जो अन्तिम क्षण तक कायम रही। प्रणाम करने वाले हर भक्त को कुछ न कुछ आशीर्वाद अवश्य मिला जब तक उनके शरीर और वाणी ने साथ दिया।

8. **विद्वान भाषाविद एवं रचनाकार :–** यह तो सभी जानते हैं कि गुरूजी का अनेक भाषाओं पर पूर्ण अधिकार था यथा संस्कृत, हिन्दी, मराठी, उर्दू, अंग्रेजी आदि, परन्तु उनका आग्रह था कि हर व्यक्ति वही शब्द बोले जिसका वह सही अर्थ समझता हो। बिना सोच विचार के किसी भी शब्द का उपयोग करने पर वे आपत्ति करते थे और उस शब्द के सभी सम्भव अर्थ और महत्व बताकर शिष्यों का मार्गदर्शन करते थे।

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2

शब्दों की उत्पत्ति कैसे होती है, ये गुरूजी भलीभांति जानते थे। संस्कृत व्याकरण पर उनका अद्भुत प्रभुत्व था। औपचारिक रूप से वे ज्यादा नहीं पढ़े थे परन्तु जब कभी वे अंग्रेजी बोलते तो उनका उच्चारण बदलकर विदेशियों जैसा हो जाता था। उनका किसी भी बिन्दु या विषय पर धारा प्रवाह बोलना देवी सरस्वती का जिव्हा में निवास करने जैसा था।

गुरूजी के सशरीर के रहते तक वे उद्‌बोधन पत्रिका की पूरी विषय वस्तु को सुना करते थे और उनके अनुमोदन के बाद ही वह मुद्रित होती थी। वही स्थिति a dip into divine confluence एवं दिव्याम्बु निमज्जन में भी रही है।

9. **सजग–एवं पूर्णतावादी व्यक्तित्व :–** यद्यपि संसार के मापदण्डों से पूज्य गुरूजी सरल, आर्थिक रूप से अति सामान्य तथा औपचारिक रूप से कम पढ़े थे पर हर काम परफेक्ट करना या करवाना उनके व्यक्तित्व का एक मुख्य अंग था। किसी काम को आधे मन से या अधूरा करने पर वे प्रसन्न नहीं होते थे और अवश्य टोकते थे चाहे उनका सूटकेस जमाना हो या कोई व्यंजन बनाना हो, स्वयं कपड़े पहनना हो या गाड़ी चलाना हो।

वे सलीके और नफासत के साथ रहना पसंद करते थे। बड़े से बडा कष्ट होने पर शिकायत नहीं करते थे। यहां तक कि बहुत कम दृष्टि क्षमता होने पर भी बाल कटवाते समय या शेव बनवाते समय नाई को उचित निर्देश अवश्य देते थे जिससे यह कार्य व्यवस्थित रूप से पूर्ण हो।

10. **सकारात्मक सोच का रवैया :–** गुरूजी ने हमें सदैव जीवन के प्रति रचनात्मक सोच रखना और वैसा ही आचरण करना सिखाया है। उन्हीं के शब्दों में मर जाना, मांगने के लिये नहीं जाना। भाग्य भाग्य रोने की जरूरत नहीं है, प्रयत्न करो, आगे बढ़ो, फल नहीं मिलता, तो विधि बदलो। कैसी आपत्ति, विपत्ति और संकट आये, धैर्य नहीं खोना, बल बनाये रखना, घबराना नहीं। अगर आपत्ति–विपत्ति नहीं आयेगी तो सहनशक्ति कैसे बढ़ेगी। बदला नहीं लेना किसी से, हम सबको मनुष्य बनाने के लिये आये हैं, सरल, सहज करने के लिये आये हैं।

पूज्य गुरूजी सर्वोच्च ईश्वरीय सत्ता के अंश थे जिन्होंने साक्षात ब्रह्म से एकात्मकता प्राप्त कर ली थी और उसके बाद का अपना पूरा जीवन अपने शिष्यों, मानवता एवं समाज कल्याण में व्यतीत किया।

जैसा कि पूर्व में बताया गया है डॉ. भानु गुप्ता को मुंगेली में वासूदेव योगाश्रम बना कर पूज्य गुरूजी का मुंगेली धाम बनाने का श्रेय है। पूज्य गुरूजी के शरीर त्यागने के बाद 23 जुलाई 1998 को गुरुपूजा मुंगेली में हुई। साव धर्मशाला में ''ॐ'' श्री वासुदेव आत्मोत्थान न्यास'' की स्थापना हुई तथा इस न्यास की प्रथम बैठक का आयोजन किया गया। श्री डॉ. भानु गुप्ता जी ने शिवपुर स्थित भूमि पूज्य गुरूजी को दान स्वरूप दी थी जिसका नाम गुरूजी ने ज्ञान मन्दिर घोषित किया था। उस शिवपुर स्थित भूमि पर पुराने भवन का निर्माण कार्य गुरूजी ने शिष्यों द्वारा जो भेंट उन्हें मिलती थी एवं डॉ. भानु के सहयोग से किया गया था।

पूज्य गुरूजी ने अपने पुत्र श्री अशोक भैया एवं भाभी जी को जिन्होंने उनकी सेवा और देखभाल की थी, को अपनी पूरी प्रापर्टी का उत्तराधिकारी घोषित किया था। अतः जब इस ट्रस्ट की घोषणा हुई तो श्री अशोक भैया ने यह शिवपुर स्थित भूमि व ज्ञान मन्दिर भवन दान स्वरूप देकर ट्रस्ट की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। इस पहली ट्रस्ट की बैठक में नवगठित ट्रस्ट ने यह दान स्वीकार करते हुए श्री अशोक भैया को धन्यवाद प्रस्ताव पारित किया जो ट्रस्ट के पहले प्रस्ताव के रूप में सदैव स्मरणीय रहेगा।

शिवपुर आश्रम की भूमि के साथ साथ गुरू पूजा 1994 में रायपुर में जो आश्रम निर्माण की राशि श्री जे. के. जैन ने शिष्यों से एकत्र की थी (आश्रम किन्हीं अपरिहार्य कारणों से स्थापित नहीं हो सका था) वह राशि पूज्य गुरूजी को भेंट की जा चुकी थी। उस राशि में से 1,50,000/– रूपये श्री अशोक भैया ने इस ट्रस्ट को दान स्वरूप भेंट कर दी। पूज्य

गुरूजी की सलाह से वर्धा स्थित आश्रम के पास श्री आर.के. शिन्दे (बुआ साहब), श्री बसंत खोत, श्री ओ. पी. शर्मा एवं आर.के. दुबे ने जो भूखण्ड क्रय किये थे उन्हें भी दान स्वरूप इस ट्रस्ट को देने की घोषणा की गई तथा इन भूखण्डों का विक्रय करके राशि ट्रस्ट में जमा करने को श्री अशोक भैया को अधिकृत कर दिया गया।

पूज्य गुरूजी का अंतिम संस्कार इसी शिवपुर आश्रम में उनके शिष्यों द्वारा अत्यंत मार्मिक और हृदय विदारक क्षणों में किया गया था और दाह संस्कार स्थल पर समाधि स्थल निर्माण का भी संकल्प न्यासीगणों द्वारा लिया गया। वर्ष 1999 मन्दिर निर्माण एवं गुरूजी की मूर्ति बनवाकर उसमें प्रतिष्ठित करने की भी योजना बनाई गई।

23 जुलाई 1999 का गुरू पर्व रायपुर में मनाया गया था और न्यास की बैठक में स्वर्गीय श्री जितेन्द्र दीवान से ट्रस्ट का संयोजक पद स्वीकार करने का आग्रह किया गया, जिसे उन्हें स्वीकार कर मुंगेली में शिवपुर आश्रम में रहना स्वीकार किया ताकि भविष्य की निर्माण संबंधी योजनाओं को मूर्त रूप दिया जा सके।

10 अगस्त 1999 को, जैसा कि न्यास की बैठक में प्रस्तावित था, दाह संस्कार के स्थान पर समाधि स्थल का निर्माण शुरू किया गया। न्यास की बैठकों में शिष्यों से कुशल आर्किटेक्ट एवं वास्तु शास्त्रियों के परामर्श एवं सहयोग की अपेक्षा की गई थी और श्री शांतिलाल जी लूनिया को निर्माण का पूरा दायित्व सौंपा गया था। समाधि स्थल के आस पास की भूमि पर श्री लूनिया जी ने वृक्षारोपण का दायित्व पूरी सूझ बूझ से निर्वहन किया और समाधि स्थल को बड़े चाव से सुन्दर और आकर्षित बनाने में पूरी तरह अपना योगदान दिया जिसके लिये वे बधाई के पात्र

हैं। 6–10–1999 को भारत पदार्पण दिवस के समय न्यास की बैठक में निर्माण कार्य की प्रगति पर संतोष व्यक्त किया गया।

23 जुलाई 2000 को गुरू पर्व राजिम में मनाया गया और अगला पर्व मुंगेली में मनाये जाने का निर्णय लिया गया। पूर्व में जैसा तय हो चुका था मन्दिर और मूर्ति निर्माण के लिये आवश्यक धनराशि एकत्र करने एवं शीघ्र निर्माण का लक्ष्य बनाया गया। इस संकल्प की समीक्षा 6–10–2000, 14–03–2001 तथा 23–07–2001 को ट्रस्ट की बैठकों में मुंगेली में की गई। मन्दिर निर्माण और मुंगेली धाम के विकास की योजनाओं और प्रगति पर समीक्षा होती रही। 23 जुलाई 2001 तक की प्रगति गुरूजी की विराटता और विशालता के अनुरूप नहीं हो सकी जिस पर क्षोभ व्यक्त किया गया। विशेषतः **श्री डी.एस. राय** ने सभी शिष्यों को एक सूत्र में बंधकर लक्ष्य प्राप्ति के लिये अपना अपना योगदान देकर अपने कर्तव्य निर्वाहन की बार बार मार्मिक अपील की। समाधि स्थल का सुंदर निर्माण निश्चय ही शिष्यों पर गुरूजी के आशीर्वाद का ही परिणाम है।

इस अवसर पर राय साहब के अलावा अन्य वरिष्ठजनों द्वारा इस बात पर क्षोभ व्यक्त किया था कि पूज्यवर के मन्दिर और मूर्ति स्थापना का कार्य तीन वर्षों में भी सम्भव नहीं हो सका था। इस बीच मतभेद अंततः विचार सामंजस्य स्थापित हुआ और गुरूजी जिसे ''मेरा परिवार'' कह कर सम्बोधन किया करते थे, उस परिवार को बिखरने से बचाने के लिये कर्तव्यबोध भी सभी शिष्यों ने एक दूसरे को कराया, जिसके लिये 23–07–2001 का गुरूपर्व (मुंगेली) हमेशा याद रखा जायेगा। पूज्य गुरूजी के परिवार को गरिमामय बनाये रखने का संकल्प भी इस अवसर पर लिया गया। इसी में गुरूपूजा भविष्य में हर वर्ष मुंगेली शिवपुर आश्रम में मनाने का निर्णय लिया गया।

मन्दिर निर्माण का कार्य पूरी निष्ठा और समर्पण भाव से श्री लूनिया जी करते रहे और जो भी रूप मन्दिर और मूर्ति स्थापना का दिया जा रहा था उसमें श्री अशोक भैया के सुझाव और परामर्श भी प्रेरणा स्रोत के रूप में उन्हें मिलता रहा। पूज्य गुरूजी किस तरह इन निर्माण कार्यों में श्री लूनिया जी को सूझ बूझ दे रहे थे वह जानकारी उन्होंने भोपाल एवं अन्य स्थानों के गुरू परिवारों को समय समय पर उपलब्ध कराई थी।

उदयपुर निवासी पूज्य गुरूजी के शिष्य श्री ललित कुमार पिछोलिया के सहयोग से श्री पदमचन्द जैन जयपुर वालों (राजधानी स्टेच्यू मार्ट) को मूर्ति बनाने का कार्य सौंपा गया था। भोपाल के श्री डी.एस. राय एवं श्री जे.के. जैन समय समय पर मूर्ति की प्रगति देखने जयपुर जाते रहे। यद्यपि मूर्ति का आकार लगभग ठीक बनता जा रहा था परन्तु मुखाकृति से श्री जे.के. जैन संतुष्ट नहीं थे और ऐसी स्थिति में इसमें सुधार कैसे हो यह प्रयास किया गया। श्री राय साहब अपने ग्वालियर के जानकार शिल्पी को लेकर जयपुर पहुंचे और कुछ सुधार भी किया। परन्तु फिर भी मुखाकृति हूबहू गुरूजी से नहीं मिल पाई। इसके लिये श्री जे. के. जैन अपने को सम्पूर्ण रूप से दोषी मानते रहे हैं। चूंकि मूर्ति स्थापना में काफी विलम्ब हो चुका था अतः मूर्ति जयपुर से ले जाकर स्थापित करने का निर्णय लिया गया।

यहां यह उल्लेखनीय होगा कि गुरू परिवार में मंदिर एवं मूर्ति निर्माण प्रारम्भ से ही भ्रम ओर गलतफहमी से घिरा रहा जिसके कारण इस कार्य में आपेक्षित प्रगति समय पर नहीं हुई थी। कुछ परिवारजनों का मत था कि जब हमारे सद्गुरू मूर्ति पूजा में विश्वास नहीं करते थे तो उनकी मूर्ति क्यों बनाई जाये और क्यों न इस परिवार के सदस्य अपनी साधना को सद्गुरू

देव द्वारा दी गई दीक्षा एवं समझाई गई पद्धति के अनुसार ही सम्पन्न करते रहें। परिवार के अधिकांश शिष्यों की राय और संकल्प से मन्दिर और मूर्ति का निर्माण आवश्यक था ताकि भविष्य की पीढ़ियों के लिये पूज्य गुरूजी का भौतिक रूप से कैसे दिखते थे, यह सुरक्षित रह सके।

17—03—2002 को जयपुर में मूर्ति तैयार हो गई थी और वहां से राम नवमी के शुभ दिन प्रस्थान होकर भोपाल होते हुए महावीर जयंती के दिन मुंगेली पहुंच गई थी। मन्दिर निर्माण, गर्भ गृह निर्माण, मूर्ति स्थापित करने के लिये वेदी निर्माण आदि सम्पूर्ण कार्य किसी आर्किटेक्ट का सुझाव ना होकर, पूज्य गुरूवर द्वारा श्री शांतिलाल जी लूनिया को दी गई दृष्टि थी। सफलतापूर्वक व सुंदर ढंग से यह कार्य होना सराहनीय है।

मन्दिर निर्माण के संबंध में अपने भाव व्यक्त करते हुए वरिष्ठ गुरू भाई **श्री आर. के. शिन्दे (ग्वालियर)** ने कहा था कि परमपूज्य के मन्दिर परिसर का सुन्दर सुदृढ़ एवं अलौकिक निर्माण हो और ऐसा होगा मुझे दृढ़ विश्वास है।

श्री वी. एस. भटजीवाले (इन्दौर)—यह मन्दिर तो अमर होगा ही, इसका लाभ केवल दीक्षित गुरू बन्धुओं ही नहीं अपितु आने वाली पीढ़ी को भी इससे प्रेरणा मिलेगी और लाभान्वित होंगे।

श्री जे. के. जैन (भोपाल)—परम पूज्य गुरूजी की स्मृति में मूर्ति एवं मन्दिर का निर्माण गुरू परिवार का दायित्व था जिसे साकार होते देख जो सुखद अनुभूति हो रही है उसे शब्दों में व्यक्त करना असंभव है। यह अद्भुत चैतन्य स्मारक समस्त प्राणी मात्र को लाभान्वित करेगा और एक महानतम उपासना केन्द्र का रूप लेकर भावी पीढ़ी का भी मार्गदर्शन करेगा।

डॉ. चन्द्रा रजक (रीवा)– श्री सद्‌गुरू चरण कमलों की महिमा को शब्दों की सीमा में नहीं बांधा जा सकता–हमारा तीर्थ शिवपुर–परमधाम, क्षीर सागर बने, जहां पर प्रेम एवं श्रद्धा रूपी नाव पर अटूट विश्वास की पतवार लेकर गुरू चरण कमलों की रज का पावन स्पर्श पाया जा सकता है।

श्री शांतिलाल जी लूनिया (मुंगेली)– जिनके माध्यम से पूज्य गुरूजी ने इस शिवपुर धाम को बसाया है, व्यक्त किया कि कितने भी आश्रम विभिन्न स्थानों पर बन जायें पर इस मूर्ति मन्दिर ओर समाधि की ख्याति का अन्दाज आज हम नहीं लगा सकते। आज इस गुरू परिवार के सदगुरू, एक भव सागर पार कराने वाले आलम्बन को निर्माण के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास कर रहे हैं ताकि हमें व आने वाले साधकों के लिये पूज्य गुरूजी के भौतिक शरीर में न रहते हुए भी उनका आलम्बन मिलता रहे।

शिवपुर आश्रम में मन्दिर निर्माण और मूर्ति स्थापना के बाद इसी पुण्य भमि पर भविष्य में 23 जुलाई का पर्व मनाने का निर्णय ट्रस्ट द्वारा लिया गया और तभी से यह क्रम आज भी चल रहा है। मुंगेली में यह पर्व बिना किसी व्यवधान और असुविधा के चिरकाल तक सम्पन्न होता रहे इस पर पूज्य गुरूवर के शिष्यों द्वारा ट्रस्ट के माध्यम से इस धाम को विकसित करने तथा सभी सुविधायुक्त बनाने का संकल्प किया गया। आश्रम से लगी पीछे की जमीन तीन लाख तिहत्तर हजार रूपये में 2005 में क्रय की गई और इसे कृषि के काम की बनाकर आश्रम के खर्चे और साथ ही पर्यावरण की दृष्टि से यह आश्रम के लिये उपयोगी सिद्ध हुई।

शिष्यों की आवश्यकताओं और इस स्मारक को चिरकाल तक पूज्य गुरूजी की स्मृति को सजीव बनाने के लिये सभी तरह की योजनायें ट्रस्ट के माध्यम से मूर्त रूप ले रही है। आवासीय कक्ष, प्रसाद भवन एवं अन्य निर्माण कार्य करते हुए इस चैतन्य स्मारक को पूर्ण सुविधायुक्त बनाने का क्रम निरंतर प्रगति कर रहा है। 6 अक्टूबर को भारत पदार्पण दिवस, 14 मार्च को निर्वाण दिवस और 23 जुलाई को गुरू पर्व का आयोजन प्रति वर्ष यहां किया जाता है और पूज्यवर की स्मृति को सभी शिष्य अक्षुण्य बनाये रखने के लिये सजग और सचेत हैं।

इन अवसरों पर भजन, कीर्तन, आरती, सामूहिक ध्यान शिष्यों के अनुभवों का आदान प्रदान एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम गुरूवर के प्रवचनों के कैसेट उनकी मधुर और अविस्मरणीय आवाज हमें गुरूजी की सजीव उपस्थिति का आभास कराने में सक्षम होती है। पर उनकी शारीरिक रूप से अनुपस्थिति अवश्य खलती है।

इस युग के महान योगी एवं परमसत्ता का ही एक अंश रहे। हम सभी शिष्य परम सौभाग्यशाली हैं जिन्हें साक्षात रूप में उनका सान्निध्य प्राप्त हुआ। ज्योतिर्मय जीवन का लक्ष्य बोध कराकर प्रकाश पुन्ज में लीन कराने वाले करूणासागर पूज्य गुरूवर को हम सभी का वन्दन–नमन और सदैव उनके चरणों का साक्षात्कार होता रहे इसके लिये विनम्र निवेदन।

नवीन मूर्ति स्थापना :–

मूर्ति की साकार कल्पना और भविष्य की धरोहर को सही रूप में सहेजने का दायित्व भी इसी परिवार का था। अतः अधिकांश शिष्यों के मन में विचार आया कि गुरूजी की उनके सम्पूर्ण शरीर से पूर्णतः साम्यता

रखती हुई एक पद्मासन मुद्रा वाली मूर्ति बनाई जावे। प्रथम मूर्ति की मुखाकृति पूर्णतः गुरूजी के अनुरूप नहीं थी। यह अपराध बोध तो था ही। अतः नवीन मूर्ति बनाने का संकल्प लिया गया।

शिष्य परिवार की इस भावना को सफल बनाने में गुरूजी की कृपा और आशीष के बिना यह कार्य संभव नहीं था। जिस सहजता और सरलता से मूर्तिकार का चयन, मूर्तिकार का मन चाहा संगमरमर का ब्लाक मिलना, अल्प समय में मिट्टी की मूर्ति का प्रारूप बनना तथा अंत में गुरूजी की सजीवता से मुखाकृति का निर्माण, अपने आप में एक चमत्कारिक घटना है।

मूर्तिकार के जिस तरह के अनुभव इस अल्प समय में हुए हैं, उससे यह दो बातें प्रमाणित हो चुकी हैं–प्रथम, गुरूजी अपने शिष्य परिवार की अन्तर्मन भावना को साकार रूप देकर सफल बनाना चाहते थे और दूसरे, स्वयं गुरूजी ने उस मूर्तिकार से यह प्रतिमा बनवाई है। इस दौरान गुरूजी तीन बार स्वयं वहां कार्य की प्रगति का निरीक्षण करने अनेकों सूक्ष्म रूपों में पहुंचे हैं।

पूज्य गुरूजी ने मूर्तिकार से बातचीत भी की है। ऐसी चमत्कारिक घटनाओं से प्रेरित होकर ही मूर्तिकार गुरूजी की मूर्ति को सजीव बना सका है। यह स्वयं मूर्तिकार का अनुभव है। पूज्य गुरूजी के प्रति उसकी आस्था और विश्वास से गुरूजी ने साक्षात दर्शन देकर उसे अभिभूत किया। यह एक विरली घटना है।

बिना ट्रस्ट की पूर्व अनुमति के यह कार्य प्रारंभ किया गया था। परंतु यह विश्वास था कि नवीन मूर्ति मंदिर में समारोह पूर्वक स्थापित होकर शिष्यों को आशीष देगी।

जुलाई 2011 में मिट्टी की मूर्ति का प्रारूप जयपुर में तैयार था और उसे देखने की उत्सुकता बढ़ती जाती थी। तभी भोपाल में 15 जुलाई 2011 को गुरू पूर्णिमा मनाने का विचार बना तथा नागपुर से मोहन देशपांडे, शहडोल से संतोष शुक्ला, वर्धा से राजू काण्णव तथा भोपाल से नीलेश दुबे का चयन जयपुर जाकर मिट्टी की बनी मूर्ति का प्रारूप देखने के लिये भी हुआ। इस अवसर पर 1982 में पूज्य गुरूजी द्वारा वर्धा में जो चरण पादुका राजू काण्णव की भक्ति और श्रद्धा सहित समर्पण भाव को देखकर भेंट में दी थी, वह उसके देवधर में विराजमान थी। इस अलौकिक प्रसाद को लेकर राजू भोपाल गुरूपूर्णिमा मनाने आये। जो उत्सव यहां उस दिन हुआ वह अपने आपमें अविस्मरणीय बन गया क्योंकि प्रायः सभी को ऐसा लगा मानो स्वयं गुरूजी इस पूजा में उपस्थित होकर हम सभी को आशीष दे रहे हों।

गुरूपूर्णिमा उत्सव के समापन पर ये चारों शिष्य शाम को जयपुर के लिये रवाना हो गये और 17 जुलाई को इस मूर्ति के प्रारूप को देखकर इन्हें यह लगा कि सही मूर्तिकार का चयन हो चुका है और यह मूर्तिकार निश्चित रूप से सभी शिष्यों की भावनाओं के अनुरूप गुरूजी की मूर्ति को साकार रूप देने में सफल हो जायेगा। अत्यंत कठिनाई भरा सफर इन शिष्यों को करना पड़ा था क्योंकि बारिश का मौसम था और सड़कें काफी खराब थीं और नदी–नालों में पूर आया था। लम्बा रास्ता तय करने के बाद मूर्ति का प्रारूप देखकर जो प्रसन्नता इन लोगों में आई वह अवर्णीय है।

17 जुलाई 2011 के बाद मार्बल की तलाश में मूर्तिकार श्री जितेन्द्र शर्मा जयपुर, किशनगढ़, मकराना और आसपास की जगह तलाशते रहे पर मनचाहा मार्बल का ब्लाक नहीं मिल सका। मूर्तिकार पूज्य गुरूजी की मूर्ति का साकार रूप श्रेष्ठतम मार्बल में देना चाहता था और उसके लिये वियतनाम का सफेद मार्बल जिस आकार का चाहता था, वह उक्त स्थानों पर नहीं मिलने पर, इसकी तलाश गुरूजी के शिष्य श्री ललित पिछोलिया ने उदयपुर में की और अंत में एक ब्लाक मनचाही साईज का मिल गया। नवगृह मूर्ति भंडार के मालिक श्री जितेन्द्र शर्मा को जयपुर से उदयपुर 05.09.2011 को इसे पसंद करने भेजा गया और उनकी पूर्ण संतुष्टि पाकर श्री पिछोलिया जी ने सितम्बर 2011 अंतिम सप्ताह में जयपुर पहुंचा दिया।

मात्र 3 माह में मूर्तिकार ने इस भव्य मूर्ति का निर्माण किया जिसे 1 फरवरी 2012 को श्रीमती एवं श्री नीलेश दुबे भोपाल, श्री संतोष शुक्ला शहडोल, श्री मोहन देशपाण्डे नागपुर और श्री राजू काण्णव वर्धा ने जयपुर पहुंचकर निरीक्षण किया और मूर्ति से पूरी तरह संतुष्ट होकर मूर्तिकार को अंतिम पालिशिंग का आदेश दे दिया।

14 मार्च 2012 को ट्रस्ट की बैठक में इस मूर्ति को मन्दिर में प्रतिष्ठित करने तथा पूर्व की मूर्ति को नया बनने वाले ध्यान कक्ष में प्रतिष्ठित करने का संकल्प पारित किया गया।

दिनांक 19—04—2012 को जयपुर से नवनिर्मित मूर्ति रात्रि 11:30 बजे भोपाल पहुंची और 20 अप्रैल को भोपाल, इन्दौर, बड़ौदा, रीवा, ग्वालियर, शहडोल, सतना आदि स्थानों से आए पूज्य गुरूजी के लगभग

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2

90 शिष्यों द्वारा इस मूर्ति की पूजा, अर्चना और प्रसाद वितरण का कार्यक्रम पूरी गरिमा के साथ किया गया और दोपहर में मुंगेली के लिये व्हाया जबलपुर रवाना किया गया। मूर्तिकार की टीम के साथ गुरूजी के शिष्य श्री विनोद पांडे, डॉ. चन्द्रा रजक, श्री नीलेश दुबे, श्री ऋषि त्रिपाठी एवं नीतेश जी भी साथ में प्रस्थान किये और 21 अप्रैल को मुंगेली में शिवपुर मंदिर में मूर्ति पहुंचा दी गई। जैसा कि ट्रस्ट द्वारा प्रस्तावित था, पूर्व में स्थापित मूर्ति को वेदी से उठाकर नव निर्मित ध्यान कक्ष में स्थापित किया गया और नई मूर्ति को उसके स्थान पर शुभ मुहूर्त में 24 अप्रैल 2012 (अक्षय तृतीया) को स्थापित किया गया।

इस अवसर पर वर्धा, नागपुर, गोंदिया, रायपुर एवं अन्य स्थानों से भी शिष्यगण पधारे थे जिनकी उपस्थिति में यह भव्य आयोजन सम्पन्न किया गया। आगे के घटनाक्रम में यह महसूस किया गया कि पूर्व की वेदी पर नवीन मूर्ति की स्थापना यद्यपि की गई है परन्तु मूर्ति एवं वेदी की ऊंचाई को देखते हुए नई वेदी का निर्माण कराया जाये, जिसकी स्वीकृति ट्रस्ट की एक आपात बैठक 14—06—2012 को मुंगेली में ली गई। यह निर्णय लिया गया कि नवीन मूर्ति को संगमरमर की नई वेदी उचित ऊंचाई की बनाकर उस पर प्रतिष्ठापित की जावे।

ट्रस्ट के उक्त निर्णय के अनुसार पूर्व में निर्मित वेदी को हटाकर नई संगमरमर की वेदी का निर्माण किया गया जिसे जयपुर से मूर्तिकार श्री जितेन्द्र शर्मा जी स्वयं आकर सम्पन्न किये और दिनांक 03—07—2012 को पारंपरिक गुरू पूर्णिमा के दिन शुभ मुहूर्त में प्रतिष्ठित की गई।

23 जुलाई 2012 का गुरू पर्व धूमधाम के साथ सभी गुरू परिवार के सदस्यों ने मनाया जिसमें ध्यान कक्ष में स्थापित पहले वाली मूर्ति और मंदिर में स्थापित नवीन मूर्ति की आरती–पूजा और ध्यान का कार्यक्रम पूरी गरिमा के साथ सम्पन्न किया गया।

जग में आप रहते हैं व्यवहार में न चूकें। सबसे सद्–व्यवहार करें अपने आपको एडजस्ट करें। दोषों से बचते रहें, इन्द्रियों पर काबू रखें और जब तक प्रसंग न आये–मौन रहें। मौन रहने का प्रयत्न करें और अधिक से अधिक काल पर्यन्त डूबे रहें। यही साधना अब आपको करनी है।

''श्री सद्गुरू जी (पं.वा.रा. तिवारी)

मनुष्य को एक वर्ष, छः माह, एक माह पन्द्रह दिन, एक सप्ताह, एक दिन अर्थात् 24 घण्टे के भीतर आसन्न मृत्यु के कुछ रहस्यमय लक्षण अनुभव में आ सकते हैं। ये सामान्य व्यक्ति के लिये कठिन है, परन्तु साधक को सहजता से ज्ञात हो सकते हैं, जबकि सामान्य मनुष्य आसन्न मृत्यु की आहट पाकर ही अत्याधिक चिन्तित व भयभीत हो जाता है। मोहमाया के रिश्तों की डोर टूटने की आशंका से अवसाद में चला जाता है, हतोत्साहित हो उठता है। हल्की सी आहट को मृत्यु की आहट समझकर कांप उठता है। रोने बिलखने लगता है। माया मोह के रिश्तों के बिखराव के डर से असहाय होकर वह घबराता है और उसका मोह सभी से टूट जाता है और वह पश्चाताप करता है कि मानव जीवन प्राप्त कर हमने कुछ भी नहीं किया।

इस संबंध में हमारे पूज्य गुरूजी ने उदधृत किया है कि ''सबके लिये कुछ न कुछ किया, परन्तु अपने लिये कुछ भी नहीं किया। क्यों पश्चाताप करता है? क्योंकि इस शरीर से निकलने पर किस योनि में उसे भेजा जायेगा, ये उसको दिखता है। यानि आगामी दृश्य दर्शन जिस योनि में वह जाएगा पशु, सर्प, श्वान, सूकर, कूकर उसको सब दिखता है। जिस जगह उसको संचार कर दिया जायेगा, वह उसको दिखता है।''

जब मृत्यु का अंतिम क्षण आता है, रिश्ते नातों के छूटने का समय आता है, तब मृत्यु का ग्रास बनने जा रहे मनुष्य को उसका अगला जन्म

प्रत्यक्ष दिखता है। अच्छा जन्म दिखा तो शांति के साथ अंतिम सांस लेता है अन्यथा बुरे जीवन को देखकर रोते बिलखते चिल्लाने का प्रयास करता है। पर मृत्यु के भय से उसकी घिग्घियां बन्ध जाती हैं और अस्पष्ट स्वर निकालते हुए प्राण त्याग कर जाता है।

ठीक इसके विपरीत एक साधक को मृत्यु की आहट पाकर अपने आपको व्यवस्थित करने का सुअवसर मिलता है। यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि मनुष्य की अंतिम समय में जैसी मति होती है वैसी उसकी गति होती है। इसलिए जितना निर्विकार, निर्विचार आपका मन होगा, उतना आपके मृत्यु के बाद का जीवन होगा।

पूज्य गुरूजी ने इसी नर्क में नहीं जाने से अपने को बचाने के लिये ही मार्ग बताया है। वह है, अपने आपको जानने का मार्ग। हमने यदि यह मार्ग पकड़ लिया तो हमें भले ही कुछ जन्म लेना पड़े, पर आगे चलकर हम प्रकाश की राह में चले जायेंगे।

कलियुग में त्रिकालदर्शी भगवान वासुदेव का सामीप्य जिस सौभाग्यशाली गुरू परिवार को मिला, उसे हम इस युग में पूज्यवर की करूणा, दया, कृपा, ममता, वात्सल्य और सरलता को किन शब्दों में निरूपित करें। अतः हमने अंत में इसे शब्दातीत की संज्ञा दी है। रहवर ने हमें राह दिखाने में कोई कमी और कसर नहीं की फिर हमारा कर्तव्य, हमारा उत्तरदायित्व हमें अवश्य समझकर उस पर अमल करना चाहिये। हमारे करूणानिधान हमें विभिन्न तरीकों से समझाईश देते हुए कहते हैं कि–जिस प्रकार से बच्चे अपने माता–पिता से हठ करते हैं कि उसे

अमुक वस्तु चाहिये और अंत में बच्चे की जिद पर अड़ जाने से माता–पिता उसे वही वस्तु लाकर दे ही देते हैं।

उसी प्रकार भगवान के रूप में इस अवतारी सद्गुरू का जो साथ मिला, हठ करके उससे बिना किसी संशय के मांगने पर स्वयं की आस्था और विश्वास का फल आपको सुनिश्चित रूप से वही होगा जो आपके लिये हितकर, लाभदायी एवं जीवन के अंतिम लक्ष्य पर पहुंचने में सहायक होगा। सद्गुरू ने बड़ी दृढ़ता से अनेकों बार कहा है कि उनके बताये मार्ग पर जो भी संशय रहित होकर चला उसने आनन्द की अनुभूति की है।

गुरूजी ने हमें सत्मार्ग बताते हुए ''मैं'' का पलड़ा छूटना ही समर्पण और शरणागत बताया है। ऐसा कर देने से ''मैं'' का भाव समाप्त होकर तमाम लेना–देना उस करूणासागर का हो जाता है और इसके लिये दृढ़ निश्चय की आस्था, विश्वास, भरोसा और श्रद्धा चाहिये, जिसे कुछ पल जीवन की आपाधापी से निकालकर 5–10–15 और अधिक से अधिक 20 मिनिट का समय, किन्तु प्रतिदिन की बाध्यता के साथ बैठना आदेशित किया है। इसे गुरूवर ने ''अभ्यास'' की संज्ञा दी है।

बच्चे को बगैर रोये मां दूध नहीं पिलाती, यह आम बात हम सभी बोलते हैं। पूज्यवर ने हमें सुझाया कि हम अपने आराध्य देव के सामने बैठकर अश्रुपूरित भावों से जो भी प्रार्थना करेंगे वह अवश्य पूरी होगी और इसके लिये चाहिये संशय रहित आस्था, श्रद्धा और विश्वास। पूज्य गुरूदेव की बतायी पद्धति पर अभ्यास में बैठने पर जितने भोगमान हैं सभी

कब आते हैं और कब निकल जाते हैं, पता ही नहीं चलता। आपके अनेक जन्मों का पुण्य उदय हुआ है तभी आप सत्संग की ओर झुके हैं। बाकी पढ़ना लिखना आदि सभी प्रसंग है किन्तु पूजयवर ने अपने अमूल्य अनुभव से सत्संग को सारभूत निरूपित किया है।

गुरूजी ने बताया है कि अगर आपको शांति पाना है तो बाह्य जगत में शांति नहीं है। जब तक आप अपने भीतर प्रवेश नहीं करेंगे, जब तक श्रद्धा विश्वास को अपने आप में जागृत नहीं करेंगे तब तक आपका आंतरिक प्रवेश हो ही नहीं सकता और जब तक आंतरिक प्रवेश नहीं होता तब तक शांति सैकड़ों जन्म दूर है। अगर थोड़ा एक बार भी ज्योति दर्शन, आत्म प्रकाश अपनी बुद्धि में प्रकाशित हुआ तो इस जन्म मरण के भय से आपको छुटकारा मिल जाता है। यही था इस जन्म सिद्ध योगी का संदेश जिसका समाज का ऋण चुकाने और उन्मुक्त साधकों का मार्गदर्शन करने के लिये अवतरण हुआ था।

''श्री सद्गुरवे नमः''

बीता कल तो मर चुका है, आने वाला कल अभी जन्म नहीं लिया है, भविष्य की चिन्ता क्यों? जब आज अपने हाथ में है।

''श्री सद्गुरू जी (पं.वा.रा. तिवारी)

दिव्याम्बु निमज्जन भाग-2